श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी—चतुर्थ पुष्प

भट्टारक रत्नकीर्ति एवं कुमुदचन्द्र

व्यक्तित्व एवं कृतित्व



[सवत १६३१ से १७०० तक होने वाले ६८ कवियो का परिचय,
मूल्याकन तथा उनकी कृतियो का मूल पाठ]



लेखक एव सम्पादक
डॉ० कस्तूरचन्द कासलीवाल

प्रकाशक
श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी, जयपुर

प्रथम संस्करण १९८१ कार्तिक २०३८ प्रतियां — १०००

प्रकाशक— श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी
८६७ अमृत कलश
बरकत कालोनी, किसान मार्ग
टोंक फाटक, जयपुर ३०२०१५

मूल्य — ४० रुपये

मुद्रक— कपूर आर्ट प्रिन्टर्स, जयपुर

श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी—एक परिचय

प्राकृत एवं संस्कृत के पश्चात् राजस्थानी एवं हिन्दी भाषा ही एक ऐसी भाषा है जिसमे जैन आचार्यों, भट्टारको, सन्तो एव विद्वानो ने सबसे अधिक लिखा है। वे गत ८०० वर्षों से उसके भण्डार को समृद्ध बनाने मे लगे हुए है। उन्होने प्रबन्ध काव्य लिखे, खण्ड काव्य लिखे, चरित लिखे, रास, फागु एव वेलिया लिखी। और न जाने कितने नामो से काव्य लिखकर हिन्दी साहित्य के भण्डार को समृद्ध बनाया। राजस्थान, मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश, हरियाणा, एव देहली के सैकडो जैन शास्त्र भण्डारो मे जैन कवियो की रचनाओ का विशाल सग्रह मिलता है। जिसमे से किन्ही का नामोल्लेख राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारो की ग्रन्थ सूचियो के पाँच भागो मे हुआ है। इधर श्री महावीर क्षेत्र से ग्रथ सूचियो के अतिरिक्त, राजस्थान के जैन सन्त व्यक्तित्व एव कृतित्व, महाकवि दौलतराम कासलीवाल तथा टोडरमल स्मारक भवन से महापडित टोडरमल पर गत कुछ वर्षो मे पुस्तके प्रकाशित हुई है लेकिन हिन्दी के विशाल साहित्य को देखते हुए ये प्रकाशन बहुत थोडे लग रहे थे। इसलिये किसी ऐसी सस्था की कमी खटक रही थी जो जैन कवियो द्वारा निबद्ध समस्त हिन्दी कृतियो को उनके मूल्यॉकन के साथ प्रकाशित कर सके। जिससे हिन्दी साहित्य के इतिहास मे जैन कवियो को उचित स्थान प्राप्त हो तथा हाईस्कूल एव कालेज के पाठ्यक्रम मे इन कवियों की रचनाओ को भी कही स्थान प्राप्त हो सके।

स्वतन्त्रता संस्था की योजना—

इसलिये सम्पूर्ण हिन्दी जैन कवियो की कृतियो को 20 भागो मे प्रकाशित करने के उद्देश्य से सन् 1977 मे श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी नाम से एक स्वतन्त्र सस्था की स्थापना की गयी। साथ मे यह भी निश्चय किया गया कि हिन्दी कवियो के 20 भागो की योजना पूर्ण होने पर सस्कृत, प्राकृत एव अपभ्रंश के आचार्यों पर भी इसी प्रकार की सिरीज प्रकाशित की जावे। जिससे समस्त जैनाचार्यों एव कवियो की साहित्यिक सेवाओ से जन सामान्य परिचित हो सके तथा देश के विश्व-विद्यालयो में जैन विद्या पर जो शोध कार्य प्रारम्भ हुआ है उसमे और भी गति आ सके।

श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी की हिन्दी योजना के अन्तर्गत निम्न २० भाग प्रकाशित करने की योजना बनायी गयी।

१ महाकवि ब्रह्म रायमल एवं भट्टारक त्रिभुवनकीर्ति (प्रकाशित)
२ कविवर बूचराज एव उनके समकालीन कवि ,,
३. महाकवि ब्रह्म जिनदास व्यक्तित्व एव कृतित्व ,,
४ भट्टारक रत्नकीर्ति एवं कुमुदचन्द्र ,,
५ आचार्य सोमकीर्ति एव ब्रह्म यशोधर प्रेस मे
६. महाकवि वीरचन्द एव महिचद
७ विद्याभूषण, ज्ञानसागर एव जिनदास पाण्डे
८. कविवर रूपचन्द, जगजीवन एव ब्रह्म कपूरचन्द
९ महाकवि भूधरदास एव बुलाकीदास
१०. जोधराज गोदीका एवं हेमराज
११. महाकवि द्यानतराय
१२ प० भगवतीदास एव भाउ कवि
१३ कविवर खुशालचन्द काला एव अजयराज पाटनी
१४ कविवर किशनसिंह, नथमल बिलाला एव पाण्डे लालचन्द
१५ कविवर बुधजन एव उनके समकालीन कवि
१६. कविवर नेमिचन्द्र एव हर्षकीर्ति
१७ भैय्या भगवतीदास एव उनके समकालीन कवि
१८ कविवर दौलतराम एव छत्तदास
१९ मनराम, मन्नासाह, लोहट कवि
२० २०वी शताब्दि के जैन कवि

योजना तैयार होने के पश्चात् उसके क्रियान्वय का कार्य आरम्भ कर दिया गया। एक ओर प्रथम भाग "महाकवि ब्रह्मरायमल एव भट्टारक त्रिभवनकीर्ति" के लेखन एव सम्पादन का कार्य प्रारम्भ किया गया तो दूसरी ओर अकादमी की योजना एव नियम प्रकाशित करवा कर समाज के साहित्य प्रेमी महानुभावो के पास सस्था सदस्य बनने के लिये भेजे गये। कितने ही महानुभावो से साहित्य प्रकाशन की योजना के सम्बन्ध मे विचार विमर्श किया गया। मुझे यह लिखते हुए प्रसन्नता है कि समाज के सभी महानुभावो ने अकादमी की स्थापना एव उसके माध्यम से साहित्य प्रकाशन योजना का स्वागत किया है और अपना आर्थिक सहयोग देने का आश्वासन दिया। सर्व प्रथम अकादमी की प्रकाशन योजना को जिन महानुभावो का

समर्थन प्राप्त हुआ उनमें सर्व श्री स्व० साहु शान्तिप्रसाद जी जैन, श्री गुलाबचन्द जी गंगवाल रेनवाल, श्री अजितप्रसाद जी जैन ठेकेदार देहली, श्रीमती सुदर्शन देवी जी छाबडा जयपुर, प्रोफेसर अमृतलालजी जैन दर्शनाचार्य एवं डा० दरबारीलाल जी कोठिया वाराणसी, श्रीमती कोकिला सेठी जयपुर, श्रीमान् हनुमान बक्सजी गंगवाल कुली, प० अनूपचन्द जी न्यायतीर्थ जयपुर के नाम उल्लेखनीय है। योजना की क्रियान्विति, प्रथम भाग के लेखन एव प्रकाशन एव अकादमी के प्रारम्भिक सदस्य बनने के अभियान मे कोई १॥ वर्ष निकल गया और हमारा सबसे पहिला भाग जून १९७८ मे ज्येष्ठ शुक्ला पचमी के शुभ दिन प्रकाशित होकर सामने आया। उस समय तक अकादमी के करीब १०० सदस्यो की स्वीकृति प्राप्त हो चुकी थी।

"महाकवि ब्रह्म रायमल्ल एव भट्टारक त्रिभुवनकीर्ति" के प्रकाशित होते ही अकादमी की योजना मे और भी अधिक महानुभावो का सहयोग प्राप्त होने लगा। जुलाई १९७९ मे इसका दूसरा भाग "कविवर बूचराज एव उनके समकालीन कवि" प्रकाशित हुआ जिसका विमोचन एक भव्य समारोह मे हिन्दी के वरिष्ठ विद्वान् डा० सत्येन्द्र जी द्वारा किया गया गया' प्रस्तुत भाग मे ब्रह्म बूचराज, ठक्कुरसी, छीहल, गारवदास एव चतरूमल का जीवन परिचय, मूल्याकन एव उनकी ४४ रचनाओ के पूरे मूल पाठ दिये गये हैं।

अकादमी का तीसरा भाग महाकवि ब्रह्म जिनदास व्यक्तित्व एव कृतित्व का विमोचन मई ८० मे पाचवा (राजस्थान) मे आयोजित पच कल्याण प्रतिष्ठा समारोह मे पूज्य क्षु० सिद्धसागर जी महाराज लाडनू वालो ने किया था। इस भाग के लेखक डा० प्रेमचन्द रावकाँ है जो युवा विद्वान है तथा साहित्य सेवा मे जिनकी विशेष रूचि है। तीसरे भाग का समाज मे जोरदार स्वागत हुआ और सभी विद्वानो ने उसकी एव अकादमी के साहित्य प्रकाशन योजना की सराहना की।

अकादमी का चतुर्थ भाग "भट्टारक रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र" पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। इस भाग मे सवत् १६३१ से १७०० तक होने वाले भट्टारक रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र के अतिरिक्त ६६ अन्य हिन्दी कवियो का भी परिचय एव मूल्याकन प्रस्तुत किया गया है। यह युग हिन्दी का स्वर्णयुग रहा और उसमे कितने ही ख्याति प्राप्त विद्वान हुये। महाकवि बनारसीदास, रूपचन्द, ब्रह्म गुलाल, ब्रह्म रायमल्ल, भट्टारक, अभयचन्द, समयसुन्दर जैसे कवि इसी युग के कवि थे।

पंचम भाग

अकादमी का पचम भाग आचार्य सोमकीर्ति एव ब्रह्म यशोधर "प्रेस में प्रकाशनार्थ दिया जा चुका है। तथा जिसके नवम्बर ८१ तक प्रकाशन की सभावना

है। सोमकीर्ति एव यशोधर दोनो ही १६ वीं शताब्दि के उद्भट् विद्वान तथा रास्थानी के कट्टर समर्थक थे।

सम्पादन में सहयोग

अकादमी के प्रत्येक भाग के सम्पादन मे लेखक एव प्रधान सम्पादक के अतिरिक्त तीन–तीन विद्वानों का सहयोग लिया जाता है। प्रस्तुत भाग के सम्पादक तीर्थंकर के यशस्वी सम्पादक डा० नेमीचन्द जैन इन्दौर, युवा विद्वान डा० भागचन्द भागेन्दु दमोह एव उदीयमान विदुषी श्रीमती सुशीला बाकलीवाल हैं। इस भाग के सम्पादन मे तीनो विद्वानो का जो सहयोग मिला है, उसके लिए हम उनके पूर्ण आभारी है। अब तक अकादमी को जिन विद्वानो का सम्पादन मे सहयोग प्राप्त हो चुका है उनमे डा० सत्येन्द्र जी, डा० दरबारीलालजी कोठिया वाराणसी, प० अनूपचन्द जी न्यायतीर्थ जयपुर, डा० ज्योतिप्रसाद जी लखनऊ, डा० हीरालाल जी महेश्वरी जयपुर, प० मिलापचन्द जी शास्त्री जयपुर, डा० नरेन्द्र भानावत जयपुर, प० भवरलाल जी न्यायतीर्थ जयपुर के नाम उल्लेखनीय हैं।

नवीन सदस्यों का स्वागत

अब तक अकादमी के ३०० सदस्य बन चुके हैं। जिनमें ७० सचालन समिति मे तथा २३० विशिष्ट सदस्य हैं। तीसरे भाग के प्रकाशन के पश्चात् सम्माननीय श्री रमेशचन्द्र जी सा० जैन पी०एस० मोटर कम्पनी देहली एव आदरणीय श्री वीरेन्द्र हेगड़े धर्मस्थल ने अकादमी सरक्षक बनने की कृपा की है। श्री रमेशचन्दजी उदीयमान युवा उद्योगपति हैं। ये उदारमना है तथा समाज सेवा मे खूब मनोयोग से कार्य करते है। समाज को उनसे विशेष आशाए हैं। उन्होने अकादमी का सरक्षक बन प्राचीन साहित्य के प्रकाशन मे जो योग दिया है उसके लिये हम उनके पूर्ण आभारी हैं। अकादमी के चौथे सरक्षक धर्मस्थल के प्रमुख धर्माधिकारी श्री वीरेन्द्र हेगड़े है। जो बीसवी शताब्दि के अभिनव चामुडराय हैं, तथा समाज एव साहित्य की सेवा करने मे जिनकी विशेष रूचि रहती है। जो दक्षिण एवं उत्तर भारत की जैन समाज के लिये सेतु का कार्य करते है। उनके सरक्षक बनने से अकादमी गौरवान्वित हुई है।

इसी तरह गया (बिहार) के प्रमुख समाज सेवी श्री रामचन्द्रजी जैन ने उपाध्यक्ष बन कर साहित्य प्रकाशन मे जो सहयोग दिया है उसके लिये हम उनके विशेष आभारी है। इनके अतिरिक्त सगीतरत्न श्री ताराचन्दजी प्रेमी फिरोजपुर झिरका, श्री हीरालालजी रानीवाले जयपुर, राजस्थानी भाषा समिति के भूतपूर्व अध्यक्ष श्री नाथूलाल जी जैन एडवोकेट श्री नन्दकिशोर जी जैन जयपुर, प० गुलाब

चन्द जी दर्शनाचार्य जबलपुर ने संचालन समिति का सदस्य बन कर अकादमी के के कार्य संचालन मे जो सहयोग दिया है उसके लिये हम इन सभी महानुभावों के आभारी है। इसी तरह करीब ५० से भी अधिक महानुभावो ने अकादमी की विशिष्ट सदस्यता स्वीकार की है। उन सब महानुभावों के भी हम पूर्ण आभारी है। आशा है भविष्य में सदस्य बनाने की दिशा मे और भी तेजी आवेगी जिससे पुस्तक प्रकाशन रहे कार्य में और भी गति अधिक आ सके।

सहयोग

अकादमी के सदस्य बनाने में वैसे तो सभी महानुभावो का सहयोग मिलता रहता है लेकिन यहां हम श्री ताराचन्द जी प्रेमी के विशेष रूप से आभारी है जिन्होने अकादमी के साहित्यिक गतिविधियो मे रूचि लेते हुए नवीन सदस्य बनाने के अभियान मे पूरा सहयोग दिया है। इनके अतिरिक्त प० मिलापचन्द जी शास्त्री जयपुर, डा० दरबारीलाल जी कोठिया वाराणसी, प० सत्यन्धर कुमार जी सेठी उज्जैन, डा० भागचन्द जी भागेन्दु दमोह आदि का विशेष सहयोग प्राप्त होता रहता है जिनके हम विशेष रूप से अभारी है।

सन्तो का शुभाशीर्वाद

अकादमी को सभी जैन सन्तो का शुभाशीर्वाद प्राप्त हैं। परम पूज्य आचार्य विद्यासागर जी महाराज, एलाचार्य श्री विद्यानन्दजी महाराज, आचार्य कल्प श्री श्रुतसागर जी महाराज, १०८ मुनि श्री वर्धमान सागर जी महाराज, पूज्य क्षुल्लक श्री सिद्धसागर जी महाराज लाडनू वाले, भट्टारक जी श्री चारूकीर्ति जी महाराज मूडबिद्री एव श्रवणबेलगोला आदि सभी सन्तो का शुभाशीर्वाद प्राप्त है।

अन्त मे समाज के सभी साहित्य प्रेमियो से अनुरोध है कि वे श्री श्री महावीर ग्रथ अक दमी के स्वय सदस्य बन कर तथा अधिक से अधिक सख्या मे दूसरो को सदस्य बनाकर हिन्दी जैन साहित्य के प्रकाशन मे अपना योगदान देने का कष्ट करें।

डा० कस्तूरचन्द कासलीवाल
निदेशक एवं प्रधान संपादक

कार्याध्यक्ष की कलम से

श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी के चतुर्थ भाग–भट्टारक रत्नकीर्ति एवं कुमुदचन्द्र को माननीय सदस्यो एवं पाठको के हाथो में देते हुए मुझे अतीव प्रसन्नता है। प्रस्तुत भाग मे प्रमुख दो राजस्थानी कवियो का परिचय एव उनकी कृतियों के पाठ दिये गये हैं लेकिन उनके साथ साठ से भी अधिक तत्कालीन कवियो का भी सक्षिप्त परिचय दिया गया है। इससे पता चलता है कि सवत् १६३१ से १७०० तक जैन कवियो ने हिन्दी मे कितने विशाल साहित्य की सर्जना की थी। प्रस्तुत भाग के प्रकाशन से इतने अधिक कवियो का एक साथ परिचय हिन्दी साहित्य के इतिहास के लिये एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि मानी जावेगी। इस प्रकार जिस उद्देश्य को लेकर अकादमी की स्थापना की गई थी उसकी ओर वह आगे बढ रही है। सन् १९८१ के अन्त तक इसके अतिरिक्त दो भाग और प्रकाशित हो जावेगे ऐसा मुझे पूर्ण विश्वास है। २० भाग प्रकाशित होने के पश्चात् सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य के अधिकाश अज्ञात, अल्प ज्ञात एव महत्वपूर्ण जैन कवि प्रकाश मे ही नही आवेंगे किन्तु सम्पूर्ण हिन्दी साहित्य का क्रमबद्ध इतिहास भी तैयार हो सकेगा जो अपने आप मे एक महान् उपलब्धि होगी।

प्रस्तुत भाग के लेखक डा० कस्तूर चन्द कासलीवाल हैं जो अकादमी के निदेशक एव प्रधान सम्पादक भी हैं। डा० कासलीवाल समाज के सम्मानीय विद्वान् है जिनका समस्त जीवन साहित्य सेवा मे समर्पित है। यह उनकी ४१वी कृति है।

अकादमी की सदस्य सख्या मे निरन्तर वृद्धि हो रही है। तीसरे भाग के प्रकाशन पश्चात् श्रीमान् रमेशचन्द जी सा० जैन देहली ने अकादमी के सरक्षक बनने की महती कृपा की है उनका हम हृदय से स्वागत करते है। श्री रमेशचन्द जी समाज एव साहित्य विकास मे जो अभिरुचि ले रहे हैं अकादमी उन जैसा उदार सरक्षक पाकर स्वयं गौरवान्वित है। धर्मस्थल के आदरणीय श्री डी० वीरेन्द्र हेगडे ने भी अकादमी का सरक्षक बन कर हमे जो सहयोग दिया है उसके लिये हम उनका अभिनन्दन करते है। इसी तरह गया निवासी श्री रामचन्द्रजी जैन ने उपाध्यक्ष बन कर अकादमी को जो सहयोग दिया है हम उनका भी हार्दिक स्वागत करते है। सचालन समिति के नये सदस्यो मे सर्वश्री ताराचन्द जी सा० फिरोजपुर झिरका, महेन्द्रकुमार जी पाटनी जयपुर, हीरालाल जी रानीवाला जयपुर, नाथूलाल

जी जैन ऐडवोकेट जयपुर एवं श्री नन्दकिशोर जी सा० जैन जयपुर के नाम उल्लेखनीय है। हम सभी का हार्दिक स्वागत करते है। इसी तरह करीब ४० महानुभाव अकादमी के विशिष्ट सदस्य बने हैं। सभी माननीय सदस्यो का मैं हार्दिक स्वागत करता हू। इस तरह ८०० सदस्य बनाने की हमारी योजना मे हमे ३५ प्रतिशत सफलता मिली है। मैं आशा करता हूँ कि भविष्य में अकादमी को समाज का और भी अधिक सहयोग मिलेगा।

हम चाहते हैं कि अकादमी के करीब १०० सेट देश-विदेश के विभिन्न विश्वविद्यालयो के हिन्दी विभागाध्यक्षो को निःशुल्क भेट किये जावें जिससे उन्हे जैन कवियो द्वारा निबद्ध साहित्य पर शोध कार्य कराने के लिये सामग्री मिल सके। इसलिये मै समाज के उदार एवं साहित्यप्रेमी महानुभावो से प्रार्थना करूगा कि वे अपनी ओर से पाँच-पाँच सेट भिजवाने की स्वीकृति भिजवाने का कष्ट करे।

प्रस्तुत भाग के माननीय सम्पादको—डा० नेमीचन्द जी जैन इन्दौर, डा० भागचन्द जी भागेन्दु दमोह एव श्रीमती सुशीला जी बाकलीवाल जयपुर का भी आभारी हूँ जिन्होने प्रस्तुत भाग का सम्पादन करके उसके प्रकाशन मे अपना अमूल्य सहयोग दिया है। अन्त मे मैं अकादमी के सरक्षको श्री अशोककुमार जी जैन देहली, पूनमचन्द जी सा० जैन भरिया एव रमेशचन्द जी सा० जैन देहली, अध्यक्ष माननीय सेठ कन्हैयलाल जी सा० जैन मद्रास, सभी उपाध्यक्षो, सचालन समिति के सदस्यो एव विशिष्ट सदस्यो का आभारी हूँ जिनके सहयोग से अकादमी द्वारा साहित्यिक कार्य सम्भव हो रहा है। डा० कासलीवाल सा० को मे किन शब्दो मे धन्यवाद दूँ, वे तो इसके प्राण है और जिनकी सतत साधना से यह कष्ट साध्य कार्य सरल हो सका हैं।

८ लोवर राउडन स्ट्रीट
कलकत्ता २०

रतनलाल गंगवाल

संपादकीय

अब यह लगभग निर्विवाद हो गया है कि हिन्दी-साहित्य के विकास का अध्ययन/अनुसंधान जैन साहित्य के अध्ययन के बिना सभव नहीं है। इस शताब्दी के तीसरे दशक मे जब आचार्य रामचन्द्र शुक्ल हिन्दी साहित्य का इतिहास लिख रहे थे तब, और आज जब भी कोई साहित्येतिहास के लेखन का प्रयत्न करता है तब उसके लिये यह असंभव ही होता है कि वह जैन साहित्य की अनदेखी करे और इस क्षेत्र में अपने कदम आगे रखे। राजस्थान कहने को मरुभूमि है; किन्तु यहाँ रस की जो अजस्र/मधुर धारा प्रवाहित हुई है, वह अन्यत्र देखने को नही मिलती। जैन साहित्य की दृष्टि से राजस्थान के शास्त्र-भण्डार बहुत समृद्ध माने जाते हैं। इन भण्डारो मे से बहुत सारे ग्रन्थो को तो सामने लाया जा सका है, किन्तु बहुत सारे हमारी असावधानी/प्रमाद के कारण नष्ट हो गये हैं। यह नष्ट हुआ या विलुप्त साहित्य हमारे सास्कृतिक और आँचलिक रिक्त की दृष्टि से कितना महत्त्वपूर्ण था, यह कह पाना तो सभव नहीं है, किन्तु जो भी पर्त-दर-पर्त उघडता गया है, उससे ऐसा लगता है कि उसके बने रहने से हमे हिन्दी साहित्य के विकास की कई महत्त्व की कड़ियाँ मिल सकती थी। इस दृष्टि से डॉ० कस्तूरचन्द कासलीवाल का प्रदेय उल्लेखनीय और अविस्मरणीय है। जैसे कोई नये टापू या द्वीप की खोज करता है और वहाँ के क्वारे खनिज-धन की जानकारी देता है ठीक वैसे ही डॉ० कासलीवाल जैसे मनीषी ने जैन शास्त्रागारो मे जा-जा कर वहाँ की दुर्लभ/अस्तव्यस्त/बहुमूल्य पाण्डुलिपियो को सूचीबद्ध किया है और दिगम्बर जैन अतिशय क्षेत्र श्रीमहावीरजी से प्रकाशित कराया है। ये सूचिया न केवल जैन साहित्य के लिए अपितु सपूर्ण भारतीय वाङ्मय के लिए बहुमूल्य धरोहर है। पूरा काम इतनी भारी-भरकम है कि इसे किसी एक या दो आदमियो ने सपन्न किया है इस पर एकाएक भरोसा करना सभव नही होता तथापि यह हुआ है और बडी सफलता के साथ हुआ है। अत. हम सहज ही कह सकते हैं कि डा० कासलीवाल की भूमिका जैन साहित्य और हिन्दी साहित्य के मध्य सीधे सबन्ध बनाने की ठीक वैसी ही है जैसी कभी वास्कोडिगामा की रही थी, जिसने 15 वी सदी के अन्त में भारत और यूरोप को समुद्री मार्ग से जोड़ा था।

हिन्दी साहित्य की भाँति ही हिन्दी भाषा की सरचना तथा उसके विकास का अध्ययन भी प्राकृत/अपभ्रश की अनुपस्थिति में करना संभव नही है। ये दोनो भाषा-

इतर जैन साहित्य से संबंधित हैं। इसके अध्ययन का मतलब होता है हिन्दी की भाषिक पृष्ठभूमि को समझने का वस्तुनिष्ठ प्रयास। अभी इस दृष्टि से हिन्दी भाषा का व्युत्पत्तिक अध्ययन शेष है, जिसके अभाव में उसके बहुत सारे शब्दों को देशज आदि कह कर अव्याख्यायित छोड़ दिया जाता है *, किन्तु जब प्राकृत/अपभ्रंश/राजस्थानी के विविध व्यावर्तनों का, उनमे उपलब्ध जैन साहित्य का, शैली/भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन किया जायेगा और कुछ प्रशिक्षित व्यक्ति इस दायित्व को सपन्न करेंगे तब हम यह जान पायेंगे कि एक निवृत्तमूलक चिन्तन-परम्परा ने प्रवृत्तिपरक इलाके को क्या कितना योग दिया है ? किस तरह हिन्दी-साहित्य के विधा-वैविध्य का विकास हुआ और किस तरह हिन्दी-भाषा अभिवृद्ध हुई। इतना ही नही बल्कि मानना पड़ेगा कि द्राविड भाषाओं के विकास में भी जैन रचनाकारो ने-विशेषतः साधुओं और भट्टारको ने-विस्मयजनक योगदान किया था। एक तो हम इन सारे तथ्यो की सूक्ष्म छानबीन कर नही पाये, हैं, दूसरे कई बार हम अनुसंधान के क्षेत्र मे भरपूर वस्तुनिष्ठा से काम करने/निष्कर्ष लेने मे चूक जाते हैं। हमारे इस सलूक से साहित्य के विकास को भलिभांति समझने मे कठिनाई होती है।

जहाँ तक इतिहास का सबध है उसके सामने कोई घटना इस या उस जाति अथवा इस या उस सप्रदाय की नही होती। उसका सीधा सरोकार घटना के व्यत्तित्व और उसके प्रभाव से होता है, इसलिए जो लोग साहित्य के वस्तुन्मुख समीक्षक होते हैं वे किसी एक कालखण्ड को सिर्फ एक अकेला अलहदा कालखण्ड मान कर नही चल पाते वरन् तथ्यो का 'इन डेप्थ' विश्लेषण करते है और उनके सापेक्ष संबधो/अन्तः सबधो को खोजने का अनवरत यत्न करते हैं। कोई बीता 'कल' किसी उपस्थित 'आज' की ही परिणति होता है, और कोई प्रतीक्षित 'आज' किसी आगामी 'कल' मे से ही जनमता है। आनेवाले कल की खोज-प्रक्रिया बडी कठिन होती है। एक तो जब तक हम वर्तमान को सापेक्ष नही देखते तब तक आगामी कल की सही अगवानी नही कर पाते, दूसरे हम अपने अतीत यानी विगत कल की ठीक से व्याख्या भी नही कर पाते। प्राय हमने माना है कि ये तीनो परस्पर विच्छिन्न चलते हैं, किन्तु दिखाई देते है कि ये वैसा कर रहे है, कर वैसा सकते नहीं हैं। कल/आज/कल एक तिकोन है बल्कि कहें, समत्रिभुज है जिसकी आधार-भुजा आज है। जो कौम अपने 'आज' को नही समझ पाती, वह न तो अपने विगत 'कल' में से कुछ ले पाती है और न ही प्रतीक्षित 'कल' को कोई स्पष्ट आकार दे पाती है।

धर्म/दर्शन/सस्कृति ही ऐसे आधार हैं, जो आगामी कल को एक सश्लिष्ट आकृति प्रदान करने में समर्थ होते हैं। साहित्य अक्षर के माध्यम से आगामी कल

* राजस्थान के शास्त्र-भण्डारों की ग्रन्थ-सूची, चतुर्थ भाग, डा० वासुदेव शरण अग्रवाल, पृष्ठ 4.

को आज में रूपान्तरित करता है। मान कर चलें कि जो कृति आज आपको एक वेष्टन में ग्रस्त–व्यस्त मिल रही है, उसका भी कभी कोई आज था और वह भी कभी किसी शिल्पी के भावना–गर्भ मे कोई प्रतीक्षित कल रही थी। कितना रोमांचक है यह सब! ! ऐसी हजारों हजार कृतियो को छुआ है डा० कासलीवाल ने और जाना है उनके "आज" को अपनी सवेदनशील अंगुलियो के जरिये ' फिर भी कहना होगा कि अभी काम अधूरा है और उसकी परिपूर्णता के लिए किसी ऐसे समीक्षक/पाठालोचक की आवश्यकता है, जो सवेदनशील होने के साथ ही एक निर्मम भाषाविज्ञानी भी हो - ऐसा, जो तथ्य को तथ्य मानने के अलावा और कुछ मानने को ही सहज तैयार न हो। सापेक्ष दृष्टि से अभी साहित्य/भाषा के विविध स्तरीन ग्रन्त सबवो के विश्लेषण/समीक्षण की जरूरत से भी हम मुंह नही मोड सकते।

श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी, जयपुर ने इस दिशा मे मात्र रचनात्मक कदम ही नही उठाये हैं अपितु 3 बहुमूल्य ग्रन्थो के प्रकाशन द्वारा कुछ ऐसे ठोस आधार प्रस्तुत कर दिये है, जो भारतीय वाङ्मय को अधिक गहराई मे/से समझने की दिशा मे बहुत उपयोगी भूमिका निभायेंगे। जब तक चारो ओर से हमारे पास इस तरह की सामग्री एकत्र/आकलित नही हो जानी तब तक कोई निश्चित शक्ल हम इतिहास को नही दे सकते। इतिहास भी एक जेनरेटिव्ह' अस्तित्व है। इस सदर्भ मे डा० कासलीवाल/महावीर ग्रन्थ अकादमी की भूमिका ऐतिहासिक है, और इसलिए अविस्मरणीय है।

हिन्दी/साहित्य का दुर्भाग्य रहा है कि उसका कोई एकीकृत/सश्लिष्ट अध्ययन अभी तक नहीं हो पाया है। उसके इस अध्ययन को-यदि कही शुरू हुआ भी है तो अंग्रेजी या राजनीति ने छिन्नभिन्न/बाधित किया है और उसे एक धारावाहिक प्रक्रिया नही बनने दिया है हिन्दी- कोश- -रचना का इतिहास इसका एक जीवन्त उदाहरण है। भारत की लोकभाषाओ का, वस्तुतः, अध्ययन/ अनुसधान जैसा होना चाहिए था' वैसा हो नही पाया है और कई दुर्लभ स्रोत अब नष्ट हो गए हैं। आचलिक बोलियो के सुर (टोनेशन) का अध्ययन तो अब इसलिए असभव हो गया है कि इनमे से बहुतो के प्रयोक्ता ही अब नही रहे है। लगता है यही हस्र अब हमारी पाण्डुलिपियो का होने वाला है।

हमारे शास्त्र– भण्डारो मे सदियो से सुरक्षित साहित्य भी अब जीर्णोद्धार के लिए उद्ग्रीव/उत्कण्ठित है। डा० कासलीवाल ने तो अभी लिफाफे पर लिखे जाने वाले पतों की सूचियाँ दी है, असली पत्र लिखाने का काम तो उनके अकादमी ने शुरु किया है। सूचियाँ मात्र इन्फर्मेशन' हैं, ग्रन्थ–सपादन उनके बाद का सोपान है। अकादमी की मुश्किले बहुत स्पष्ट है। एक तो लोगो की मनोवृत्ति ग्रन्थों

पर से अपना कब्जा छोड़ने की नहीं है, दूसरे उनके साथ अब एक खतरनाक व्यावसायिकता भी जुड़ गयी हैं। इन/ऐसी कठिनाइयों से जूझते हुए अकादमी ने जो कुछ किया है और जो कुछ वह अपने सीमित साधनों मे करने के लिए सकल्पित है, उससे भारतीय संस्कृति और साहित्य का मस्तक गौरव से ऊँचा उठेगा इतना ही नहीं बल्कि राजस्थानी/हिन्दी साहित्य समृद्ध भी होगा।

विज्ञान की कृपा से आज ऐसे साधन उपलब्ध हैं कि हम दुष्प्राप्य पाण्डुलिपियो को अध्ययन के लिए सुरक्षित/ व्यवस्थित प्राप्त कर सकते हैं, किन्तु मेरी समझ में अभी ऐसा कोई सुसमृद्ध अनुसधान–केन्द्र जैनो का नही है जहाँ सारे ग्रन्थ एक साथ उपलब्ध हो या उनके उपलब्ध कर दिये जाने की कोई कारगर व्यवस्था हो ताकि कोई शोधार्थी बिना किसी बाधा/असुविधा के कोई तुलनात्मक अध्ययन कर सके। श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, हमे विश्वास है, जल्दी ही उस अभाव को पूरा करेगी और हमारे इस स्वप्न को यथार्थ मे बदल सकेगी।

प्रस्तुत ग्रन्थ अकादमी का चतुर्थ प्रकाशन है। प्रथम मे महाकवि ब्रह्म रायमल्ल एव भट्टारक त्रिभुवनकीर्ति, द्वितीय मे कविवर बूचराज एव उनके समकालीन कवि और तृतीय मे महाकवि ब्रह्म जिनदास, के व्यक्तित्व एव कृतित्व पर विचार किया गया है। ये तीनो ग्रन्थ क्रमश: 1978, 79, और 1980 मेप्रकाशित हुए हैं। इन ग्रन्थो में जो बहुमूल्य सामग्री सकलित/सपादित है, उससे साहित्य का भावी अध्येता/अनुसधित्सु अनुगृहीत हुआ है। प्रस्तुत ग्रन्थ में भट्टारक रत्नकीर्ति एव भट्टारक कुमुदचन्द्र के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर व्यापक/गहन अभिमन्थन हुआ है। कहा गया है कि 1574–1643 ई० का समय भारतीय इतिहास मे शान्ति समृद्धि का था। इस समय भट्टारको ने साहित्य/समाज-रचना के क्षेत्र मे एक विशिष्ट भूमिका का निर्वाह किया। भ. रत्नकीर्ति गुजरात के थे, किन्तु उन्होने हिन्दी की उल्लेखनीय सेवा की। उनके प्रमुख शिष्य कुमुदचन्द्र हुए जिन्होने जैन साहित्य/धर्म को तो समृद्ध किया ही, किन्तु हिन्दी साहित्य को भी विभूषित किया। ग्रन्थान्त मे उनकी कृतियाँ सकलित है, जिनसे उन दिनो के हिन्दी–रूप पर तो प्रकाश पडता ही है दोनो गुरु-शिष्य की साहित्य सेवाओ का भी भलीभाति द्योतन हो जाता है। कुल मिलाकर महावीर ग्रन्थ अकादमी जो ऐतिहासिक कार्य कर रही है नागरी प्रचारिणी सभा' वाराणसी, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग; और हिन्दुस्तानी अकादमी, इलाहाबाद जैसी साधन–संपन्न संस्थाओ के समान, उससे उसकी सुगंध दिगदिगन्त तक फैलेगी और उसे समाज का/सरकार का/जन–जन का सहयोग सहज ही मिलेगा।

–डा० नेमीचन्द्र जैन

सपादक "तीर्थंकर"

कृते सम्पादक मडल

इन्दौर,
21 सितम्बर 1981

लेखक की ओर से

राजस्थानी एवं हिन्दी साहित्य इतना विशाल है कि सैंकडो वर्षों की साधना के पश्चात् भी उसके पूरे भण्डार का पता लगाना कठिन है। उसकी जितनी अधिक खोज की जाती है, साहित्य सागर में से उतने ही नये नये रत्नों की प्राप्ति होती रहती है। जैन कवियो की कृतियो के सम्बन्ध मे मेरी यह धारणा और भी सही निकलती है। राजस्थान, मध्यप्रदेश, देहली, एव गुजरात के शास्त्र भण्डारो मे अब भी ऐसी सैंकड़ो रचनाओ की उपलब्धि होने की सम्भावना है जिनके सम्बन्ध मे हमे नाम मात्र का भी ज्ञान नही है। पता नही वह दिन कब आवेगा जब हम पूरी तरह से ऐसी कृतियो की खोज कर चुके होगे।

चतुर्थ भाग मे सवत् १६३१ से १७०० तक की अवधि मे होने वाले जैन कवियो की राजस्थानी कृतियो को लिया गया है। ये ७० वर्ष हिन्दी जगत के लिये स्वर्ण युग के समान थे जब उसे महाकवि सूरदास, तुलसीदास, बनारसीदास, रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र, ब्रह्म रायमल्ल जैसे कवि मिले। जिनका समस्त जीवन हिन्दी विकास के लिये समर्पित रहा। उन्होने जीवन पर्यन्त लिखने लिखाने एव उसका प्रचार करने को सबसे अधिक महत्त्व दिया तथा नवीन काव्यो के सृजन के युग का निर्माण किया।

रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र इसी युग के कवि थे। वे दोनो ही भट्टारक पद पर सुशोभित थे। समाज के आध्यात्मिक उपदेष्टा थे। स्थान स्थान पर विहार करके जन जन को सुपथ पर लगाना ही उनके जीवन का ध्येय था। स्वय का एक बड़ा सघ था जो शिष्य प्रशिष्यो से युक्त था। लेकिन इतना सब होते हुये भी उनके हृदय मे साहित्य सेवा की प्यास थी और उसी प्यास को बुझाने मे वे लगे रहते थे। जब देश मे भक्ति रस की धारा बह रही हो। देश की जनता उसमे झूम रही हो तो वे कैसे अपने आपको अछूता रख सकते थे इसलिये उन्होने भी समाज मे एक नये युग का सूत्रपात किया। राधा कृष्ण की भक्ति गीतो के समान नेमि राजुल के गीतो का निर्माण किया और उनमे इतनी अधिक सरलता, विरह प्रवणता एव करुण भावना भर दी कि समाज उन गीतो को गाकर एक नयी शक्ति का अनुभव करने लगा। जैन सन्त होते हुए भी उन्होंने अपने गीतो मे जो दर्द भरा है, राजुल की विरह वेदना एव मनोदशा का वर्णन किया है। वह सब उनकी काव्य प्रतिभा का परिचायक है। जब राजुल मन ही मन नेमि से प्रार्थना करती है तथा एक घड़ी के

लिये ही सही, माने की कामना करती है तो उस समय उसकी तड़फन सहज ही में समझ में आ सकती हैं। रत्नकीर्ति एवं कुमुदचन्द्र ने नेमि राजुल से सम्बन्धित कृतियां लिख कर उस युग मे एक नयी परम्परा को जन्म दिया। उन्होने नेमिनाथ का बारहमासा लिखा, नेमिनाथ फाग लिखा, नेमीश्वर हमची लिखी और राजुल की विरह वेदना को व्यक्त करने वाले पद लिखे।

लेकिन भट्टारक कुमुदचन्द्र ने नेमि राजुल के अतिरिक्त और भी रचनायें निबद्ध कर हिन्दी साहित्य के भण्डार को समृद्ध बनाया। उन्होंने 'भरत बाहुबली छन्द' लिख कर पाठको के लिये एक नये युग का सूत्रपात किया। भरत-बाहुबलि छन्द वीर रस प्रधान काव्य है और उसमें भरत एवं बाहुबली दोनो की वीरता का सजीव वर्णन हुआ है। इसी तरह कुमुदचन्द्र का ऋषभ विवाहलो है। जिसमें आदिनाथ के विवाह का बहुत सुन्दर वर्णन दिया गया है। उस युग मे ऐसी कृतियो की महती आवश्यकता थी। वास्तव मे इन दोनो कवियो की साहित्य सेवा के प्रति समस्त हिन्दी जगत सदा आभारी रहेगा।

इन दोनो सन्त कवियो के समान ही उनके शिष्य प्रशिष्य थे। जैसे गुरु वैसे ही शिष्य। इन्होने भी अपने गुरु की साहित्य रुचि को देखा, जाना और उसे अपने जीवन मे उतारा। ऐसे शिष्य कवियों मे भट्टारक अभयचन्द्र, शुभचन्द्र, गणेश, ब्रह्म जयसागर, श्रीपाल, सुमतिसागर एव संयमसागर के नाम विशेषत उल्लेखनीय है। इन कवियो ने अपने गुरु के समान अन्य विषयक पद एवं लघु काव्यो के निर्माण में गहरी रुची ली। साथ में अपने गुरु के सम्बन्ध मे जो गीत लिखे वे भी सब हिन्दी साहित्य के इतिहास मे निराले है। वे ऐसे गीत है जिनमे इतिहास एव साहित्य दोनो का पुट है। इन गीतो मे रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र, अभयचन्द्र, एव शुभचन्द के बारे मे महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक सामग्री मिलती है। ये शिष्य प्रशिष्य भट्टारको के साथ रहते थे और जैसा देखते वैसा अपने गीतो में निबद्ध करके जनता को सुनाया करते थे। प्रस्तुत भाग मे ऐसे कुछ गीतो को दिया गया है।

भट्टारक रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र, अभयचन्द्र एव शुभचन्द के सम्बन्ध में लिखे गये गीतो से पता चलता है कि उस समय इन भट्टारकों का समाज पर कितना व्यापक प्रभाव था। साथ ही समाज रचना मे उनका कितना योग रहता था। वे आध्यात्मिक गुरु थे। धार्मिक क्रियाओ के जनक थे। वे जहा भी जाते धार्मिक उत्सव आयोजित होने लगते और एक नये जीवन की धारा बहने लगती। मगलगीत गाये जाते, तोरण और वन्दनवार लगाये जाते। उनके प्रवेश पर भव्य स्वागत किया जाता। और ये जैन सन्त अपनी अमृत वाणी से सभी श्रोताओं को सरोबार कर देते। सच ऐसे सन्तों पर किस समाज को गर्व नही होगा

हिन्दी जैन कवियों की साहित्यिक सेवा का हिन्दी जगत के सामने प्रस्तुत करने के लिये जितना अधिक व्यापक अभियान छेड़ा जावेगा हिन्दी के विद्वानों, शोधार्थियों एव विश्व विद्यालयो में उतना ही अधिक उनका अध्ययन हो सकेगा। इन कवियो की साहित्यिक सेवाओ के व्यापक प्रचार की दृष्टि से साहित्यिक गोष्ठिया होना आवश्यक है जिसमे उनके कृतित्व पर खुल कर चर्चा हो सके साथ ही मे विभिन्न कवियो से उनका तुलनात्मक अध्ययन किया जा सके।

भट्टारक रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र आदि कवियो की रचनायें राजस्थान के विभिन्न भण्डारो मे सग्रहीत हैं। जिनमे ऋषभदेव, डूगरपुर, उदयपुर, जयपुर, अजमेर, आदि के शास्त्र भण्डार उल्लेखनीय है। छोटी रचनाये होने से उन्हे गुटकों अधिक स्थान मिला है। जो उनकी लोकप्रियता का द्योतक है। तत्कालीन समाज मे इनका व्यापक प्रचार था, ऐसा लगता है। इसलिये अभी बागड एव गुजरात के शास्त्र भण्डारो मे सग्रहीत गुटको की विशेष खोज की आवश्यकता है जिससे उनकी और भी कृतियो की उपलब्धि हो सके।

आभार

पुस्तक के सम्पादन मे डॉ० नेमीचन्द जैन इन्दौर, डॉ० भागचन्द भागेन्दु दमोह एव श्रीमती सुशीला बाकलीवाल जयपुर ने जो सहयोग दिया है उसके लिये मै उनका पूर्ण आभारी हूँ। इसी तरह मै प० अनूपचन्द जो न्यायतीर्थ का भी आभारी हूँ जिनके सहयोग के अभाव मे पुस्तक का लेखन नही हो सकता था।

पुस्तक के कुछ पृष्ठो को जब मैंने परम पूज्य आचार्य विद्यासागर जी महाराजा को जबलपुर मे दिखलाया तो उन्होने अपनी हार्दिक प्रसन्नता प्रकट करते हुए भविष्य मे इस ओर बढने का आशिर्वाद दिया। इसलिये मै उनका पूर्ण आभारी हूँ। मै परम पूज्य एलाचार्य विद्यानन्द जी महाराज का भी आभारी हूँ जिन्होने अपना शुभाशीर्वाद देने की महती कृपा की है। अन्त मे मै श्री महावीर ग्रन्थ अकादमी के सभी माननीय सदस्यो एवं पदाधिकारियो का आभारी हूँ जिन्होने अकादमी की स्थापना मे अपना आर्थिक सहयोग देकर समस्त हिन्दी जैन साहित्य को प्रकाशित करने मे अपना महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया है।

जयपुर ८-६-८१ डा० कस्तूरचन्द कासलीवाल

विषयानुक्रमणिका

क्र० सं० पृष्ठ सख्या

———

पूर्व पीठिका

स० १६२१ से १७०० तक का काल देश के इतिहास मे शाति एव समृद्धि का काल माना जाता है । इन वर्षों मे तीन मुगल सम्राटो का शासन रहा । स० १६३१ से १६६२ तक अकबर बादशाह ने, स० १६६२ से १६८५ तक जहागीर ने, तथा शेष स० १६८५ से १७०० तक शाहजहा ने देश पर शासन किया । राजनीतिक सगठन, शान्ति तथा सुव्यवस्था की दृष्टि से अकबर का शासन देश के इतिहास में सर्वथा प्रशसनीय माना जाता है । इसी तरह जहागीर एव शाहजहा के शासन काल में भी देश मे शान्ति एव पारस्परिक सद्‌भाव का वातावरण बना रहा । अकबर का राज-दरबार कवियो, विद्वानो, सगीतज्ञो एव कला प्रेमियो से अलकृत था । उस युग मे कला की सर्वांगीण उन्नति होने के साथ साथ हिन्दी कविता भी अपने उत्कृष्ट विकास को प्राप्त हुई । महाकवि सूरदास एव तुलसीदास दोनो ही अकबर के शासन काल मे हुए । इनके अतिरिक्त स्वय अकबर के दरबार मे भी कितने ही हिन्दी के प्रसिद्ध कवि थे जिनमे नरहरी, तानसेन एव रहीम के नाम उल्लेखनीय है । हिन्दी के प्रसिद्ध जैन कवि बनारसीदास अकबर एव जहागीर के शासन काल में हुए । जिन्होने अपनी अर्धकथानक नामक जीवन कथा मे दोनो ही बादशाहो के शासन की प्रशसा की है । वे अकबर के शासन से इतने प्रभावित थे कि जब उन्हे बादशाह की मृत्यु के समाचार मिले तो वे स्वय मूर्छित हो गये और सम्राट के प्रति अपनी गहरी सवेदना प्रकट की ।

इन ७० वर्षों मे देश में भट्टारक युग भी अपने चरमोत्कर्ष पर था । राजस्थान में एक ओर भट्टारक चन्द्रकीर्ति तथा भट्टारक देवेन्द्रकीर्ति के आमेर, अजमेर, नागौर, आदि नगरो मे केन्द्र थे तो बागड प्रदेश भट्टारक सकलकीर्ति की परम्परा मे होने वाले भट्टारक सुमतिकीर्ति, गुणकीर्ति तथा भट्टारक लक्ष्मीचन्द की परम्परा मे होने वाले भट्टारक रत्नकीर्ति, कुमुदचन्द्र अपने समय के प्रमुख जैन सन्त माने जाते थे । इन भट्टारको के कारण सारे देश मे एव विशेषतः उत्तर भारत में जैनधर्म की प्रभावना एव उसके सरक्षण को विशेष बल मिला । उस समय के वे सबसे बड़े सन्त थे जिनका समाज पर तो पूर्ण प्रभाव था ही किन्तु तत्कालीन शासन पर भी उनका अच्छा प्रभाव था । शासन की ओर से उनके विहार के अवसर पर उचित प्रबन्ध ही नही किया जाता था किन्तु उनका सम्मान भी किया जाता था । शासन

मे उनके इस प्रभाव ने भट्टारक सस्था के प्रति जन साधारण मे श्रद्धा एव आदर के भाव जागृत करने मे गहरा योग दिया। इन भट्टारको के प्रत्येक नगर या गाव मे केन्द्र होते थे जिनमे या तो उनके प्रतिनिधि रहते थे या जब कभी वे विहार करते तो वहा कुछ दिन ठहर कर समाज को धार्मिक एव सामाजिक क्षेत्र मे दिशा निर्देशन देते थे। वे धार्मिक विधि विधान कराते एव पच कल्याणक प्रतिष्ठा के प्रतिष्ठाचार्य बन कर उसकी पूरी विधि सम्पन्न कराते। धार्मिक क्षेत्र मे उनका अखण्ड प्रभाव था। समाज के सभी वर्गों मे उनके प्रति सहज भक्ति थी। राजस्थान, गुजरात, दिल्ली, हरियाणा, मध्यप्रदेश के अधिकाश क्षेत्र मे भट्टारक सस्था का पूर्ण प्रभाव था। वास्तव मे समाज पर उनका पूर्ण वर्चस्व था। जब वे किसी ग्राम या नगर मे प्रवेश करते तो सारा समाज उनके स्वागत मे पलक पाऱडे बिछा देता था और गद्गद् होकर उनकी भक्ति एव अर्चना मे लग जाता था।

१७वी शताब्दी अर्थात् स० १६३१ से १७०० तक का ७० वर्षों का काल हमारे देश मे भक्ति काल के रूप मे माना जाता है। उस समय देश के सभी भागो मे भक्ति रस की धारा बहने लगी थी। इस काल मे होने वाले महाकवि सूरदास एव तुलसीदास ने भी सारे देश को भक्ति रूपी गगा मे डुबोया रखा और अपना सारा साहित्य भक्ति साहित्य के रूप मे प्रसारित किया। एक ओर सूरदास ने अपनी कृतियो मे भगवान कृष्ण के गुणो का व्याख्यान किया तो दूसरी ओर तुलसीदास ने राम काव्य लिखकर देश मे भगवान राम के प्रति भक्ति भावना को उभारने मे योग दिया। ये दोनो ही महाकवि समन्वयवादी कवि थे। इसलिये तत्कालीन समाज ने इनको खूब प्रश्रय दिया और राम एवं कृष्ण की भक्ति मे अपने आपको डुबोया रखा।

जैनधर्म निवृत्ति प्रधान धर्म है। उसे त्याग धर्म माना जाता है। इसलिये जैनधर्म मे जितनी त्याग की प्रधानता है उतनी ग्रहण की नही है। उसमे आत्मा को परमात्मा बनाने का लक्ष्य ही प्रत्येक मानव का प्रमुख कर्त्तव्य माना जाता है। तीर्थंकर मानव रूप मे जन्म लेकर परम पद प्राप्त करते है उनके साथ हजारो लाखो सन्त उन्ही के मार्ग का अनुसरण कर निर्वाण प्राप्त करके जीवन के अन्तिम लक्ष्य को प्राप्त करते हैं। इसलिये जैनधर्म मे भक्ति को उतना अधिक उच्च स्थान प्राप्त नही हो सका। यद्यपि अर्हद् भक्ति से अपार पुण्य की प्राप्ति होती है और फिर स्वर्ग की उत्तम गति मिलती है। ससारिक वैभव प्राप्त होता है लेकिन निर्वाण प्राप्ति के लिये तो भक्ति के स्थान निवृति मार्ग को ही अपनाना पडेगा और तभी जाकर ससारिक बन्धनो से मुक्ति मिलेगी।

17वी शताब्दि मे जब सारा उत्तर भारत राम व कृष्ण की भक्ति मे समर्पित

था, तब ऐसे समय मे जैन समाज भी कैसे अछूता रहता। उस समय समाज मे दो धारायें बहने लगी। एक अध्यात्म की ओर दूसरी भक्ति की। एक धारा के अगुआ थे महाकवि बनारसीदास जिन्होने समयसार नाटक के माध्यम से अध्यात्म की लहर को जीवन दान दिया। स्थान-स्थान पर अध्यात्म सैलिया स्थापित होने लगी जिनमें बैठ कर आत्म-चर्चा करने में समाज का युवा वर्ग अत्यधिक रस लेने लगा। सांगानेर, आगरा, मुलतान जैसे नगर इन अध्यात्म सैलियों के प्रमुख केन्द्र थे। इन शैलियों मे भेद-विज्ञान, आत्म रहस्य, निमित्त उपादान आदि विषयो पर चर्चायें होती थी। वास्तव मे ये सैलिया सामाजिक सगठन की भी एक प्रकार से केन्द्र बिन्दु बन गई थी। दूसरी ओर मेवाड, बागड़ एव राजस्थान के अन्य नगरों मे अर्हद् भक्ति की गगा भी बहने लगी। तत्कालीन जैन कवि नेमिनाथ को लेकर उसी तरह के भक्ति एव शृगार परक पदो की रचना करने लगे जिस तरह सूरदास एव मीरा के पद रचे गये। इस तरह के साहित्य के निर्माण करने मे भट्टारक रत्नकीर्ति एव भट्टारक कुमुदचन्द्र का विशेष योगदान रहा। इन्होने अर्हद् भक्ति की गगा बहायी तथा आगे होने वाले कवियो के लिये दिशा निर्देश का कार्य किया।

हिन्दी जैन साहित्य के लिये सवत् १६३१ से १७०० तक का समय अत्यधिक प्रगतिशील रहा। इस ७० वर्षों मे राजस्थानी एव हिन्दी भाषा के जितने जैन कवि हुए है उतने इसके पहिले कभी नही हुए। ढूढाहड, बागड, आगरा, आदि क्षेत्र उनके प्रमुख केन्द्र थे। ऐसे राजस्थानी एव हिन्दी जैन कवियो की सख्या साठ से भी अधिक है जिनके नाम निम्न प्रकार है—

१. महाकवि बनारसीदास	२ ब्रह्म गुलाल
३. मनराम	४. पाण्डे रूपचन्द
५ हर्षकीर्ति	६ कल्याणकीर्ति
७ ठाकुर कवि	८. देवेन्द्र
९. जैनन्द	१० वर्धमान कवि
११ आचार्य जयकीर्ति	१२ प० भगवतीदास
१३. ब्र० कपूरचन्द	१४. मुनि राजचन्द
१५ पाण्डे जिनदास	१६. पाण्डे राजमल्ल
१७. छीतर ठोलिया	१८. भट्टारक वीरचन्द्र
१९. खेतसी	२०. ब्रह्म अजित
२१ आ० नरेन्द्र कीर्ति	२२. ब्र० रायमल्ल
२३ जगजीवन	२४. कु अरपाल
२५. सालिवाहन	२६. सुन्दरदास
२७. परिहानन्द	२८. परिमल्ल

२९ वादिचन्द्र	३० कनककीर्ति
३१ विष्णुकवि	३२. हीरकलश
३३. समयसुन्दर	३४ जिनराज सूरी
३५ दामो	३६. कुशललाभ
३७. मानसिंह मान	३८ उदयराज
३९ श्रीसार	४०. गणि महानन्द
४१ सहजकीर्ति	४२. हीरानन्द मुनीम
४३ हेमविजय	४४. पदमराज
४५ जयराज	४६. भट्टारक रत्नकीर्ति
४७ भट्टारक कुमुदचन्द्र	४८. शांतिदास
४९ भ० अभयचन्द	५०. भ० शुभचन्द
५१. भ० रत्नचन्द	५२ श्रीपाल
५३. ब्र० जय सागर	५४. गणेश
५५ सुमतिसागर	५६ दामोदर
५७ कल्याण सागर	५८. आगाद सागर
५९ विद्यासागर	६०. ब्रह्म धर्मरुचि
६१. आचार्य चन्द्रकीर्ति	६२ संयमसागर
६३ धर्मचन्द्र	६४ राघव
६५. मेघसागर	६६. धर्मसागर
६७ गोपालदास	६८ पाण्डे हेमराज

इस प्रकार ७० वर्ष मे ६८ हिन्दी जैन कवियो का होना किसी भी जाति समाज एव देश के लिये गौरव की वस्तु है। वास्तव मे जैन कवियो ने देश मे हिन्दी कृतियो का धुआधार प्रचार किया और हिन्दी भाषा मे अधिक से अधिक लिखने का प्रयास किया। इन कवियो मे महाकवि बनारसीदास, रूपचन्द, पाण्डे जिनदास, पाण्डे राजमल्ल, भट्टारक रत्नकीर्ति, एव कुमुदचन्द्र तथा श्वेताम्बर कवि समयसुन्दर एव हीरकलश तथा कुशललाभ के अतिरिक्त शेष कवि समाज के लिये एव हिन्दी जगत के लिये अज्ञात से है। एक बात और महत्वपूर्ण है कि भट्टारक रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र जैसे सन्त गुजरात वासी होने पर भी उन्होने हिन्दी को अपनी रचनाओ माध्यम बनाया। यही नही इस भट्टारक परम्परा के अधिकाश विद्वान् शिष्य प्रशिष्यो ने भी इसी भाषा को अपनाया और उसमे पद, गीत जैसे सरल एव लघु रचनाओ को प्राथमिकता दी। भट्टारक रत्नकीर्ति एव कुमुदचन्द्र की परम्परा मे होने वाले कवियो के अतिरिक्त शेष कवियो का सक्षिप्त परिचय निम्न प्रकार है :—

१—महाकवि बनारसीदास

बनारसीदास का जन्म सवत् १६४३ माघ शुक्ला ग्यारस रविवार को हुआ था। इनके पिता का नाम खरगसेन था। प्रारम्भिक शिक्षा प्राप्त करने के पश्चात वे कभी कपडे का, कभी जवाहरात का और कभी दूसरी चीजो का व्यापार करने लगे। लेकिन व्यापार मे इन्हे कभी सफलता नही मिली। इसीलिये डा० मोतीचन्द ने इन्हे असफल व्यापारी के नाम से सम्बोधित किया है। दरिद्रता ने इनका कभी पीछा नही छोडा और अन्त तक वे उससे जूझते रहे।

साहित्य की ओर इनका प्रारम्भ से ही झुकाव था। सर्व प्रथम वे शृगार रस की कविता करने लगे और इसी चक्कर मे वे इश्कबाजी मे भी फस गये। अचानक ही इनके जीवन मे मोड आया और उन्होने शृगार रस पर लिखी हुई "नवरस पद्यावली" की पूरी पाण्डुलिपि गोमती मे बहा दी। इसके पश्चात् वे अध्यात्मी बन गये और जीवन भर अध्यात्मी ही बने रहे। ये अपने समय में ही प्रसिद्ध कवि हो गये थे और समाज मे इनकी रचनाओ की माग बढने लगी थी।

रचनाए

बनारसीदास की निम्न रचनाए मानी जाती हैं —

१—नाममाला	२—नाटक समयसार
३—बनारसी विलास	४—अर्द्धकथानक
५—माझा	६—मोह विवेक युद्ध
७—नवरस पद्यावली	

इनमे नवरस पद्यावली के अतिरिक्त सभी रचनाये प्राप्त होती हैं।

१. नाममाला

बनारसीदास ने धनजय कवि की संस्कृत नाममाला और अनेकार्थकोश के आधार पर इस ग्रथ की रचना की थी। यह पद्य बद्ध शब्द कोश १७५ दोहो में लिखा गया है। इसका रचनाकाल सवत् १६७० आश्विन शुक्ला दशमी है। नाम माला कवि की मौलिक रचना मानी जाती है।

२ नाटक समयसार

कवि की समस्त कृतियो मे नाटक समयसार अत्यधिक महत्वपूर्ण रचना मानी जाती है। पाण्डे राजमल्ल ने समयसार कलशो पर बालाबोधिनी नामक हिन्दी टीका

लिखी थी। उसी टीका ग्रंथ के आधार पर बनारसीदास ने नाटक समयसार की रचना की थी जिसका रचनाकाल सवत् १६९३ आश्विन शुक्ला त्रयोदशी है। इस ग्रथ में ३१० दोहा सोरठा, २४५ इकतीसाकवित्त ८६ चौपाई ३७ तईसा सवैया २० छप्पय १८ घनाक्षरी ७ अडिल और ४ कुडलिया इस प्रकार सब मिलाकर ७२७ पद्य हैं। नाटक समयसार मे अज्ञानी की विभिन्न अवस्थाए, ज्ञानी की अवस्थाए, ज्ञानी का हृदय, ससार और शरीर का स्वप्न दर्शन, आत्म जागृति, आत्मा की अनेकता मनकी विभिन्न दौड एव सप्त व्यसनो का सच्चा स्वरूप प्रतिपादित करने के साथ जीव, अजीव, आस्रव, बध, सवर, निर्जरा और मोक्ष इन सात तत्वो का काव्य रूप मे चित्रण किया गया है।

३ बनारसी विलास

इस ग्रथ मे महाकवि बनारसीदास की विभिन्न रचनाओ का सग्रह हैं। यह सग्रह आगरा निवासी जगजीवन द्वारा बनारसीदास के कुछ समय पश्चात् विक्रम सवत १७०१ चैत्र शुक्ला द्वितीया को किया गया था। बनारसीदास की अन्तिम कृति "कर्म प्रकृति विधान" र का स १७०० चैत्र शुक्ला द्वितीया भी इस विलास मे मिलती है। विलास मे सग्रहीत रचनाओ के नाम निम्न प्रकार है —

१. जिनसहस्रनाम, २ सूक्ति मुक्तावलि, ३ ज्ञान बावनी, ४ वेद निर्णय पचासिका, ५ शलाका पुरुषो की नामावली, ६ मार्गणा विचार, ७. कर्म प्रकृति विधान, ८ कल्याण मन्दिर स्तोत्र, ९ साधु वन्दना, १० मोक्ष पैडी, ११ करम छत्तीसी, १२ ध्यान बत्तीसी, १३ अध्यात्म बत्तीसी, १४ ज्ञान पच्चीसी, १५. शिव पच्चीसी, १६ भवसिन्धु चतुर्दशी, १७ अध्यात्म फाग, १८ सोलह तिथि, १९ तेरह काठिया, २० अध्यात्म गीत, २१ पचपद विधान, २२ सुमति देवी का अष्टोत्तर शत नाम, २३ शारदाष्टक, २४ नवदुर्गा विधान, २५ नाम निर्णय विधान, २६. नवरत्न कवित्त, २७. अष्ट प्रकारी जिनपूजा, २८ दश दान विधान, २९ दश बोल ३० पहेली, ३१ प्रश्नोत्तर दोहा, ३२ प्रश्नोत्तर माला, ३३ अवस्थाष्टक, ३४ षटदर्शनाष्टक, ३५ चातुर्वर्ण, ३६ अजितनाथ के छद, ३७ शातिनाथ जिनस्तुति, ३८ नवसेना विधान, ३९ नाटक समयसार के कवित्त, ४०. फटकर कवित्त, ४१ गोरखनाथ के वचन, ४२ वैद्य आदि के भेद, ४३ परमार्थ वचनिका, ४४ उपादान निमित्त की चिट्ठी, ४५ निमित्त उपादान के दोहे, ४६ अध्यात्म पद, ४७. परमार्थ हिंडोलना, ४८ अष्टपदी मल्हार, ४९ चार नवीन पद।

उक्त समस्त रचनाओ मे हमे महाकवि बनारसीदास की बहुमुखी प्रतिभा काव्य कुशलता एव अगाध विद्वता के दर्शन होते है। विलास की अधिकाश रचनाए

किसी न किसी रूप मे अध्यात्म विषय से श्रोत प्रोत हैं। कवि आत्मा और परमात्मा के गुणगान मे इतने विभोर हो गये थे कि उनका प्रत्येक शब्द अध्यात्म की छाया लेकर निकलता था।

४. अर्द्ध कथानक

यह कवि द्वारा लिखा हुआ स्वय का जीवन चरित्र है। कवि ने इसमे अपने ५५ वर्ष की जीवन घटनाओ को सही रूप में उपस्थित किया है। इसमे सवत् १६९८ तक की सभी घटनाये आ गई हैं। अर्द्ध कथानक मे तत्कालीन शासन व्यवस्था एव सामाजिक स्थिति का भी अच्छा परिचय मिलता है। इसमे सब मिला कर ६७३ चौपई तथा दोहे है।

५ मोहविवेक युद्ध

यह एक रूपक काव्य है जिसका नायक विवेक एव प्रति नायक मोह है। दोनो मे विवाद होता है और दोनो ओर की सेवाये सजकर युद्ध करती हैं। अन्त मे विवेक की जीत होती हे। वर्णन करने की शैली एव नायक प्रतिनायक का सवाद सरल किन्तु गम्भीर अर्थ लिये हुए है।

६. मांझा

माझा कवि की ऐसी कृति है जिसका सग्रह बनारसी विलास मे नही मिलता है। यह उपदेशात्मक कृति है जिसमे केवल १३ पद्य हैं। कवि ने अपने नाम का प्रथम, चतुर्थ एव तेरहवे पद्य मे उल्लेख किया हे। रचना नवीन है इस लिये पाठको के रसास्वादन के लिये पूरी रचना ही दी जा रही है।

माया मोह के तु मतवाला तू विषया विषहारी
राग दोष पयो बान ठगो चार कषायन मारी
कुरम कुटुम्ब दीफा ही फायो मात तात सुत नारी
कहत दास बनारसी, अलप सुख कारने तो नर भव बाजी हारी ॥१॥
तू नर भो हार अकारज कीतो समझन रहील्यो पासा।
मानस जनम अमोलिक हीरा, हार गवायो खासा।
दसं दृष्टा ते मिलन दहेला, नर भव गत विचवासा ॥२॥

वासा मिलें न नरभव गति विच, अण र गत विच जासी।
बाजीगर दे बाँदरवा गए, मे मैं कर विलवासी।

नही सुजोनि जनम कुल कोइ, जित वल झाती पासी,
जो जग लेष सोइ घर नचसी, नाव अनेक धरासी ।।३।।

झूठी माया क्या लपटाया ना कर झूठा माणा ।
कूचा कोटि मवासा कब लग, इक दिन परभव जाना ।
जो जम असे प.र ले जावे, चलै न जोर धिगाणा ।
दास बनारसी दुवे भारवे, जम वस अमर रग न राणा ।।४।।

राणा रक अमर चिर नाही, मब कोई चलन हारा ।
भरी साह परभोले खाली जो जग चलसी सारा ।
जो घरि आसो इक दिन भजसो, आयो अपनी वारा ।
तेनु सोच नही पर भवरा, पाय बैठो पसारा ।।५।।

पाय पसारी बैठ न जूठी, तू भी चलण भाइ ।
मात पिता सुत बन्धु तेरी अन्त न कोई सहाइ ।
सुख विच खावण देस बसेगी, दुख विच कोन धुराइ ।
भली बुरी सगति के लकती, जीतो झोती पाइ ।।६।।

झोली पाय चर्यौ कछु करनी, छिनह तूफा जेहा ।
कचन छॉड के कचविडाजो, तू वियारी केहा ।
खोटा खरा परख न जानो लखे न लाहा देता ।
अगे खाली चलीयो ईंवे, पिछे आहो जेहा ।।७।।

सुनहो बानी सुतगुरुबानी, तै बसत अमोलह पाइ ।
बीरज 'फोर' भयो वडभागी, कर परमाद न राइ ।
जव लग पथ न साधे, सिबदा, तेडी पुरी पर न काइ ।
चेतन चेत समाचेतन का, सद्गुरु यौ ममुझाइ ।।८।।

सद्गुरु समुझावे तरे हित कारन, मूरख समझ कि माही ।
जिन राहे लोक लुटीदा, पवे तिना ही राही ।
राग दोष पयो बान ठगी, रा सीधा उघाही ।।
बहु चिरकाल लुटायो खेया, कुण मूरख समझ कि माही ।।६।।

कदी न समझो सो कित कारन, मोह चमारा लाया
झूठी झूठी मे मे करदा, अन्ध ले जनम गवायो ।
कामिन कनक दुहु सिर तेरे कोई मन्त्र भलेरा पाया ।
चुण चुण कनक ते गलीया विच, कमला नाव धराया ।।१०।।

कमला होय केहा सान होया, सुरति नरहा काइ।
चोदह लाख चुरासी जोन बिच, दर दर करे सगाइ।
हिक जोके हिक नवे सहेरे, मूरख दी मुरखाइ।
पाप पुण्य कर पोष कबीला, अन्त न कोई सहाइ ॥११॥

अन्त न कोई सहाइ तेरे, तू क्या पच पच मरवा।
नरक निगोद दुख सिर पर, अहमक मूल न मरवा।
जनम जनम विचहोय बिकाना, हथ विषया देवरदा।
कोई अमर मरवेसी भोदू मेरी मेरी करदा ॥१२॥

गज सुकुमाल सुणी जिणवाणी, सकल विषय तिन त्यागी।
नमसकार कर नेमिनाथ को, भए मसान विरागी।
तन बुसरा आमन बच कामा, सिधा पर तब कागी।
कहत दास बनारसी अन्त गढ, केवली सुनत बुध के रागी ॥१३॥

२. ब्रह्म गुलाल

ब्रह्म गुलाल १७वी शताब्दि के हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान थे। उनके गुरु का नाम भट्टारक जगभूषण था जो उस समय के विद्वान एव लोकप्रियता प्राप्त भट्टारक थे। ब्रह्म गुलाल को उन्ही की प्रेरणा से काव्य निर्माण मे रुचि जाग्रत हुई और उन्होंने "कृपण जगावनहार" जैसी रचना लिखी।[1]

ब्रह्म गुलाल का जन्म रपरी और चन्दवार गाव के समीप टापू नामक गाव मे हुआ था। डा. प्रेमसागर जैन ने इस गाव को वर्तमान मे आगरा जिले मे होना लिखा है।[2] इस गाव क तीन ओर नदी बहती है। उस समय वहा का राजा कीरतसिह था। उसी के राज्य मे ब्रह्म गुलाल के घनिष्ट मित्र मथुरामल रहते थे जो अपने कुल के सिरमौर एव दान देने मे सुदर्शन के समान थे।

ब्रह्म गुलाल भेष बदल कर लोगो को प्रसन्न किया करते थे। एक बार जब उन्होने सिंह का भेष धारण किया तो वे शेर की क्रिया करने लगे और एक राजकुमार को मार दिया। लेकिन जब राजकुमार के पिता को मुनि बन कर सम्बोधने

१ जगभूषण भट्टारक पाइ, करौ ध्यान-अन्तरगति आइ।
ताको सेवगु ब्रह्म गुलाल, कीजौ कथा कृपन उर साल

२ हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि

गये तो फिर सदा के लिये ही मुनि बन गये। इनकी अब तक निम्न रचनाये उपलब्ध हो चुकी है।

१ त्रेपन क्रिया[1] (स १६६५) २ कृपण जगावन हार
३ धर्म स्वरूप ४. समवसरण स्तोत्र[2]
५. जलगालन क्रिया ६ विवेक चौपई
७ कक्का बत्तीसी (१६९५) ८ गुलाल पच्चीसी
९ चौरासी जाति की जयमाल १०. वर्धमान समोसरन वर्णन
११ फुटकर कवित्त

उक्त सभी रचनाये राजस्थान के विभिन्न शास्त्र भण्डारो मे उपलब्ध होती है। डा प्रमसागर जैन ने इनकी केवल ६ रचनाओ के ही नाम गिनाये हैं।

१ वर्धमान समोसरण वर्णन[3]–यह इनकी प्रथम रचना मालूम देती है जिसको उन्होंने सवत् १६२८ मे हस्तिनापुर मे समाप्त की थी जैसा कि निम्न पाठ मे उल्लेख मिलता है—

सोलहसै अठवीस म माघ दसै सुदी पेख।
गुलाल ब्रह्म भनि गीत इती जयौ नद को सीख।
कुस देश हथनापुरी राजा विक्रम साह
गुलाल ब्रह्म जिनधर्म जय उपमा दीजे काह

2 **त्रेपन क्रिया**—इसका दूसरा नाम त्रेपन क्रिया कोश भी मिलता है। इस काव्य मे जैनो की त्रेपन क्रियाओ का वर्णन मिलता है। इसकी रचना स्थान ग्वालियर एवं रचना सवत् १६६५ कार्तिक बुदी ३ है। रचना सामान्यत अच्छी है। इसमें कवि ने अपने गुरु भट्टारक जगभूषण का भी उल्लेख किया है।[4]

---

१. ग्रन्थ सूची भाग २ पृष्ठ सख्या ७
२. वही पृष्ठ संख्या ९८
३ शास्त्र भण्डार दिगम्बर जैन मन्दिर वैर (राजस्थान)
४ ए त्रेपन विधि करहु क्रिया भवि पाप समूह चूरे हो
सोरहसै पैसठि संवच्छर कातिग तीज अंधियारो हो।
भट्टारक जग भूषण चेला ब्रह्म गुलाल विचारी हो
ब्रह्म गुलाल विचारि बनाई गढ गोपाचल थानै
छत्रपती चहु चक्र विराजै साहि स्लेम मुगलानै ॥
प्रशस्ति संग्रह पृष्ठ २२०

३. **कृपरण जगावन हार**—इस लघु काव्य मे क्षयकरी एवं लोभदत्त दो कृपणों की कथा है जिन्हे जिनेन्द्र भक्ति के कारण अपने पूर्व भव मे किये हुए दुष्कर्मों से छुटकारा प्राप्त हो गया था । इसकी एक प्रति अलीगज के शातिनाथ दिगम्बर जैन मन्दिर के शास्त्र भण्डार मे सग्रहीत है । कवि ने कहा है कि प्रतिमा पूजन पुण्य का निमित्त कारण बनता है उससे आत्मा ज्ञानरूप मे परिणमित होती है यही नही उसके दर्शनमात्र से ही क्रोध मान माया लोभ कषाय नष्ट हो जाती हैं ।[1]

४. **चौरासी जाति जयमाला**—इसमे चौरासी जातियों का वर्णन दिया हुआ है । इसकी पाण्डुलिपि भट्टारकीय शास्त्र भण्डार अजमेर के गुटका सख्या १०१ मे सग्रहीत है । जयमाला का प्रारम्भिक भाग निम्न प्रकार है—

जैन धर्म त्रेपन क्रिया दया धर्म सयुक्त
इश्वाक के कुल बस मे तीन ज्ञान उतपन्न ।
भया महोछव नेम को जुनागढ गिरनार
जात चौरासी जैनमत जुरे छोहनी चार ॥

५ **कक्का बत्तीसी**—ककारादि बत्तीस पद्यो मे छन्दोबध्द प्रस्तुत रचना सवत् १६६७ मे समाप्त हुई थी । यह शास्त्र भण्डार दि. जैन मन्दिर पाटोदियान जयपुर के एक गुटके मे ३०-३४ पृष्ठ पर सग्रहीत है ।[2]

इस प्रकार कवि की अधिकाश रचनाये चारित्र धर्म पर जोर देने वाली है । कवि का विस्तृत अध्ययन आगामी किसी भाग मे किया जावेगा ।

३ **मनराम**

मनराम अथवा मन्ना साह १७वी शताब्दी के प्रमुख हिन्दी कवि थे । वे कविवर बनारसीदासजी के समकालीन थे । मनराम विलास के एक पद्य मे उन्होने बनारसीदास का स्मरण भी किया है । उनकी रचनाओ के आधार से यह कहा जा सकता है कि मनराम एक उच्च अध्यात्म-प्रेमी कवि थे । उन्होने या तो अध्यात्म रसकी गगा बहाई या फिर जन साधारण के लिये उपदेशात्मक, अथवा नीति-

---

१ प्रतिमा कारण पुण्य निमित, बिनु कारण कारज नहिं मित ।
प्रतिमा रूप परिणवै आयु, वोवाविक नहीं व्यापै पापु ।
क्रोध लोभ माया बिनु मान, प्रतिमा कारण परिणवै ज्ञान ।
पूजा करत होई यह भाउ, दर्शन पाए गये कषाउ ॥

२ राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्रन्थ सूची भाग–४–पृष्ठ ६७९

वाक्य लिखे हैं। कवि की अब तक अक्षरमाला, बडा कक्का, धर्म-सहेली, बत्तीसी, मनाराम-विलास एव अनेक फुटकर पद आदि रचनाए उपलब्ध हो चुकी है।

कवि हिन्दी के प्रौढ विद्वान थे इसीलिये इन की रचनाए शुद्ध खडी बोली मे मिलती हैं। जान पडता है कि कवि सस्कृत के भी अच्छे विद्वान थे, क्योकि इन रचनाओ में सस्कृत शब्दो का भी प्रयोग मिलता है और वह भी बडे चातुर्य के साथ।

"मनराम विलास" कवि के स्फुट सवैयो एव छन्दो का सग्रहमात्र है जिनकी संख्या ९६ है। इनके सग्रह कर्त्ता विहारीदास थे। वे लिखते है कि विलास के छन्दो को उन्होने छाट करके तथा शुद्ध करके सग्रह किये है। जैसा कि विलास के निम्न छन्द से जाना जा सकता है—

यह मनराम किये अपनी मति अनुसारि।
बुधजन सुनि कीज्यौ छिमा लीज्यो अबै सुधारि ॥९३॥

जुगति पुराणी ढू ढ कर, किये कवित्त बनाय।
कछु न मेली गाठिकी, जानहु मन वच काय ॥९४॥

जो इक चित्त पढै परुष, सभा मध्य परवीन।
बुद्धि बढै सशय मिटै, सत्रै होवे आधीन ॥९५॥

मेरे चित्त मे ऊपजी, गुन मनराम प्रकास।
सोधि वीनए एकठे, किये विहारीदास ॥९६॥

अक्षरमाला

इसमे ४० पद्य है जो सभी उपदेशात्मक है। भाव, भाषा एव शैली की दृष्टि से रचना उत्तम कोटि की है। इसकी एक प्रति जयपुर मे ठोलियो के मन्दिर के शास्त्र भण्डार के गुटका सख्या १३१ मे सग्रहीत है। स्वय कवि ने प्रारम्भ मे अपनी लघुता प्रकट करते हुए अक्षरमाला प्रारम्भ की है—

मन बच कर या जोडिकैरे वदो सारद माय रे।
गुण अछिर माला कहु सुणौ चतुर सुख पाइ रे ॥
भाई नर भव पायौ मिनखकौ रे

अन्त मे कवि बिना भगवद् भक्ति के हीरा के समान मनुष्य जन्म को यो ही गवा देने पर दुःख प्रकट करता है तथा यह भी कहता है कि इस कृति मे उसने जो

कुछ लिखा है वह स्वय के लिये हैं किन्तु दूसरे भी चाहे तो उससे कुछ शिक्षा ले सकते हैं—

हा हा हासी जिन करै रे, करि करि हासी भ्रानौ रे।
हीरौ जनम निवारियो, बिना भजन भगवानौ रे ॥३७॥

पढ़ै गुणै भ्रर सरदहै रे, मन वच काय जो पी हारे।
नीति गहै भ्रति सुख लहै दुःख न व्यापे ताही रे ॥३८॥
भाई नर भव पायो मिनख को ॥

निज कारण उपदेश मेरे, कीयौ बुधि भ्रनुसार रे
कवियण कारण जिनघरो लीज्यौ मब सुधारी रे।

कवि का विस्तृत परिचय अकादमी के आगामी किसी भाग मे दिया जावेगा।

४ पाण्डे रूपचन्द

पाण्डे रूपचन्द १७वी शताब्दि के प्रसिद्ध आध्याध्मिक विद्वान थे। कविवर बनारसीदास ने अर्द्धकथानक मे रूपचन्द नाम के चार व्यक्तियो का उल्लेख किया है। एक रूपचन्द के साथ वे अध्यात्म विषय पर चर्चा किया करते थे। दूसरे रूपचन्द से इन्होने गोम्मटसार जीवकाड पढा था। तीसरे रूपचन्द ने सस्कृत मे समवसरण पाठ की रचना की थी तथा चौथे रूपचन्द ने नाटक समयसार की भाषा टीका लिखी थी। इन चारो मे से दूसरे रूपचन्द ही पाण्डे रूपचन्द है। कविवर बनारसीदास ने उन्हे अपना गुरु स्वीकार किया है तथा पाण्डे शब्द से अभिहित किया है। पाडे एक उपाधि है जो पडित शब्द का ही बिगडा हुआ शब्द है। भट्टारको के शिष्य प्रशिष्य पाडे उपाधि से समाप्त होते थे।

रूपचन्द की अधिकाश रचनाए अध्यात्मपरक है। उनकी कृतियो मे परमार्थी दोहा शतक, गीत परमार्थी, मगलगीत, नेमिनाथरास, खटोलना गीत के नाम उल्लेखनीय है। कवि का विस्तृत परिचय अकादमी के अगले किसी भाग मे दिया जावेगा।

हर्षकीर्ति

हर्षकीर्ति १७वी शताब्दि के चतुर्थ पाद के कवि थे। ये राजस्थानी संत थे तथा भट्टारको से प्रभावित थे। इन्होने अपनी अधिकाश रचनायें राजस्थानी भाषा

मे निबद्ध की है। चतुर्गतिवेलि इनकी अत्यधिक लोकप्रिय रचना है। इस कृति का दूसरा नाम पचमगीत वेलि भी मिलता है एक अन्य गुटके मे इसका नाम छहलेस्या वेलि भी दिया हुआ है। इसकी रचना सवत् १६८३ की है। नेमिराजुलगीत, नेमीश्वर गीत, मोरडा, कर्म हिन्डोलना, बीस तीर्थंकर जखडी, नेमिनाथ का बारहमासा, पार्श्वनाथ छन्द आदि के नाम उल्लेखनीय है। कवि के शास्त्र भडारो मे सग्रहीत गुटको मे कितने ही पद भी मिलते हैं जिनका सग्रह कर प्रकाशन होना आवश्यक है। कवि की एक और रचना त्रेपनक्रिया रास मिली है जो इन्दरगढ (कोटा) के शास्त्र भडार मे सग्रहीत है। रास का रचना काल सवत् १६८४ दिया हुआ है।

हर्षकीर्ति का विशेष परिचय कही नही मिलता। लेकिन इनका चादनपुर महावीर जी के सबध मे एक पद मिलता है इसलिये सम्भावना है कि इनका सम्बन्ध आमेर गादी के भट्टारको से था। "चहु गति वेलि" म इन्होने अपने आपको मुनि लिखा है। इनकी रचनाये भक्ति परक एव आध्यात्मिक दोनो ही तरह की है।

६ कल्याणकीर्ति

कल्याणकीर्ति १७वी शताब्दी के प्रमुख जैन सत देवकीर्ति मुनि के शिष्य थे। कल्याणकीर्ति भीलोडा ग्राम के निवासी थे। वहा एक विशाल जैन मन्दिर था। जिसके बावन शिखर थे और इन पर स्वर्ण कलश सुशोभित थे। मन्दिर के प्रागण मे एक विशाल मानस्तम्भ था। इसी मन्दिर मे बैठकर कवि ने "चारुदत्त प्रबन्ध" की रचना की थी जो संवत् १६९२ आसोज शुक्ला पचमी को समाप्त हुई थी। कवि ने रचना का नाम "चारुदत्तरास" भी दिया है। इसकी एक प्रति जयपुर के दि० जैन मन्दिर पाटौदी के शास्त्र भडार मे सग्रहीत है। प्रति सवत् १७३३ की लिखी हुई है।

चारुदत्त राजानि पुन्यि भट्टारक सुखकर सुखकर सोभागि अति विचक्षण
वादिवारण केशरी भट्टारक श्री पद्मनदि चरण रज सेवि हारि ॥१०॥

ए सहु रे गछनायक प्रणमि करि, देवकीरति मुनि निज गुरु मन्य धरी।
धरि चित चरणे नमि "कल्याण कीरति" इमि भणि।
चारुदत कुमर प्रबन्ध रचना रचिमि आदर घणि ॥११॥

राय देश मध्यि रे भिलोडउ वसि, निज रचनासि रे हरिपुरिन हसी।

---

१ म्हारो रे मन मोरडा तू तो गिरनारया उठि आय रे।
नेमिजी रस्यो युं कहिज्यो राजमती दुक्ख ये सोसे॥ म्हारो

हंस भ्रमर कुभारनि, तिहा धनपति विलिसए ।
प्रासाद प्रतिमा जिन नुति करि सुकृत सचए ।।१२।।

सुकृति सचिरे व्रत बहु प्राचरि, दान महोछव रे जिन पूजा करि ।
करि उछव गान गध्रव चंद्र जिन प्रसादए ।
बावन सिखर सोहामणा ध्वज कनक कलश विसालए ।।१३।।

मडप मध्यि रे समवसरण सोहि, श्री जिनबिंब रे मनोहर मन मोहि ।
मोहि जन मन प्रति उन्नत मानस्थम्भ विसालए ।
तिहा विजयभद्र विख्यात सुन्दर जिन सासन रक्ष पालए ।।१४।।

तिहा चोमासि के रचना करि सोलवाणुगिरे ;१६६२. प्रासो प्रनुसरि ।
प्रनुसरि प्रासो शुक्ल पचमी श्री गुरुचरण हृदयधरि ।
कल्याणकीरति कहि सज्जन भणो सुणो प्रादर करि ।।१५।।

दूहा

प्रादर ब्रह्म सघजीतणि विनयसहित सुखकार ।
ते देखि चारुदत्तनो प्रबध रच्यो मनोहर ।।१।।

कवि की एक और रचना "लघु बाहुबलि बेलि" तथा कुछ स्फुट पद भी मिले हैं। इसमे कवि ने अपने गुरु के रूप मे शान्तिदास के नाम का उल्लेख किया है। यह रचना भी अच्छी है तथा इसमे त्रोटक छन्द का उपयोग हुआ है। रचना का अन्तिम छन्द निम्न प्रकार है—

भरतेश्वर आवीया नाम्यु निज वर शशि जी ।
स्तवन करी इम जपए, हू किंकर तु ईस जी ।
ईश तुमनि छोडी राज मझनि आपीउ ।
इम कहीइ मदिर, गया सुन्दर ज्ञान भुवने व्यापीउ ।
श्री कल्याणकीरति सोममूरति चरण सेवक इम भणि ।
शांतिदास स्वामी बाहुबलि सरण राखु मझ तह्म तणि ।।१।।

कवि की दूसरी बडी रचना श्रेणिक प्रबन्ध है जिसका रचना काल संवत १७०५ है। जैसा कि रचना का नाम दिया हुआ है यह एक प्रबन्ध काव्य है जिसमें महाराजा श्रेणिक का जीवन चरित्र निबद्ध है। इसकी पाण्डुलिपि शास्त्र भडार दि० जैन मन्दिर फतेहपुर (शेखावटी) मे संग्रहीत है। इसका रचना स्थान बागड देश का

कोट नगर था जहा भगवान आदिनाथ का दि० जैन मन्दिर था जिसमें बैठकर ही कवि ने इसका निर्माण किया था। प्रबन्ध का प्रारम्भिक अश निम्न प्रकार है ।

श्री मूल संघ उदयाचलि, प्रभाचद्र रविराय ।
श्री सकलकीरति गुरू अनुक्रमि, नमश्री रामकीरति शुभकाय ।।४।।

तस पद कमल दीवाकर नमू , श्री पदमनदी सुखकार ।
वादि वारण केशरि अकलक एह अवतार ।।५।।

नीज गुरू देवकीरति मुनि प्रणमू चित धर नेह ।
मडलीक महा श्रेणीकनो प्रबन्ध रचु गुण गेह ।।६।।

\+ \+ \+ \+ \+

नमी देवकीर्ति गुरु पाय ।।
जिन देव रे भावि जिन पद्नाभ जाणज्यो ।
कल्याण कीरति सूरीवर रच्यो रे ।।
ए श्रेणिक गुण मणिहार ।।
बागड विमल देश शोभतो रे । तिहा कोट नयर सुखकार ।।६।।
धनपति विमल बसे घणा रे । धनवत चतुर दयाल ।।
तिहो आदि जिन भवन सोहामणू रे तशिका तोरण विशाल ।।
उत्सव होयि गावि माननी रे वाजे ढोल मृदग कशाल ।। जिन. भावि ।।
आदर ब्रहमसिंध जी तणोरे । तहा प्रबध रच्यो गुणमाल
सबत सतर पत्रोतरि रे । आसा सुदि त्रीज रवि ।।
ए सांभलि गायि लिखि भावसु रे । ते तहि मगलाचार ।।
जिन देवेरे भावि जिन पद्मनाभ जाणज्यो ।।१३।।

इनके अतिरिक्त बाहुबलिगीत, नेमिराजुलसवाद, आदीश्वर बधावा तीर्थंकर विनती एव पार्श्वनाथ रासो है। पार्श्वनाथ रास का रचनाकाल सवत १६१७ है तथा इसकी पाण्डुलिपि जयपुर के पाण्डे लूणकरण जी के शास्त्र भण्डार मे सग्रहीत हैं ।[1]

कवि का विस्तृत मूल्याकन किसी दूसरे भाग मे किया जावेगा ।

---

१. राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्रन्थ सूची भाग–२–पृष्ठ–७४

७ ठाकुर कवि

साहू ठाकुर राजस्थानी कवि थे। अब तक इनकी तीन रचनाएं उपलब्ध हुई है जिनके नाम हैं "शातिनाथ चरित, महापुराण कलिका, सज्जन प्रकाश दोहा। इनमे शातिनाथ चरित अपभ्र श काव्य है जो पाच सधियो मे पूर्ण होता है। प्रस्तुत काव्य मे सोलहवें तीर्थ कर शातिनाथ का जीवन चरित वर्णित है। इसका रचना काल सवत् १६५२ भाद्रपद शुक्ला पचमी है। आमेर इसका रचना स्थान है। उस समय आमेर पर राजा मानसिंह एव देहली पर बादशाह अकबर का शासन था।

कवि के पितामह साहु सील्हा और पिता का नाम खेता था। जाति खण्डेलवाल एवं गोत्र लुहाडिया था। वे "लुवाउणिपुर" लवाण के निवासी थे। वह नगर जन धन से सम्पन्न था। वहा चन्द्रप्रभस्वामी का मन्दिर था। कवि की धर्मपत्नी गुरुभक्त और गुणग्राहिणी थी। इनके धर्मदास एव गोविन्ददास दो पुत्र थे इनमे धर्मदास विद्याविनोदी एव सब विद्याओ का ज्ञाता था।

ग्रथकर्ता ने प्रशस्ति मे अपनी जो गुरु परम्परा दी है उसके अनुसार वे भट्टारक पद्मनन्दि की आम्नाय मे होने वाले भट्टारक विशालकीर्ति के शिष्य थे।

कवि की दूसरी रचना महापुराण कलिका है जिसमे २७ सधिया है तथा जिसमे ६३ शलाका पुरुष चरित्र वर्णित है। इसका रचना काल सवत् १६५० दिया हुआ है। "सज्जन प्रकाश दोहा" सुभाषित रचना है।

८ देवेन्द्र

यशोधर के जीवन पर सभी भाषाओ मे कितने ही काव्य लिखे गये है। राजस्थानी एव हिन्दी मे भी विभिन्न कवियो ने इस कथा को अपने काव्यो का आधार बनाया है। इन्ही काव्यो मे देवेन्द्र कृत यशोधर चरित भी है जिसकी पाण्डुलिपि डू गरपुर के शास्त्र भण्डार मे उपलब्ध हैं। काव्य वृहद् है। इसका रचना काल स १६८३ है। देवेन्द्र विक्रम के पुत्र थे जो स्वय भी सस्कृत एव हिन्दी के अच्छे कवि थे। कवि ने महुआ नगर मे यशोधर की रचना समाप्त की थी।

सवत् १६ आठ त्रीसि आसो सुदी बीज शुक्रवार तो।
रास रच्यो नवरस भर्यो महुआ नगर मझार ता ॥

९ जैनन्द

सुदर्शन के जीवन पर महाकवि नयनन्दि ने अपभ्र श मे सवत् ११०० मे

महाकाव्य लिया था। उसी को देख कर जैनन्द ने सवत् १६६३ मे आगरा नगर मे प्रस्तुत काव्य को पूर्ण किया था। जैनन्द ने भट्टारक यशकीर्ति क्षेमकीर्ति तथा त्रिभुवनकीर्ति का उल्लेख किया है। इसी तरह बादशाह अकबर एवं जहांगीर के शासन का भी वर्णन किया है काव्य यद्यपि अधिक बडा नही है किन्तु भाषा एव वर्णन की दृष्टि से काव्य अच्छा हैं।

काव्य की छन्द संख्या २०६ है। काव्य के प्रमुख छन्द दोहा, चौपई एव सोरठा है। कवि ने निम्न छन्द लिखकर अपनी लघुता प्रकट की है।

छद भेद पद हो, तो कछु जाने नांहि।
ताकौ कियो न खेद, कथा भई निज भक्ति बस ॥

१०. वर्धमान कवि

कवि की रचना वर्धमान रास है जो भगवान महावीर पर प्राचीनतम रास कृति है जिसका रचना काल सवत् १६६५ है। काव्य की दृष्टि से यह अच्छी रचना है। वर्धमान कवि ब्रह्मचारी थे और भट्टारक वादिभूषण के शिष्य थे। रास की एक-मात्र पाण्डुलिपि उदयपुर के अग्रवाल दिगम्बर जैन मन्दिर मे सग्रहीत है।

११. आचार्य जयकीर्ति

आचार्य जयकीर्ति हिन्दी के अच्छे कवि थे। इन्होने भट्टारक सकलकीर्ति की परम्परा मे होने वाले भ. रामकीर्ति के शिष्य ब्रह्म हरखा के आग्रह से "सीता शील पताका गुण बेलि" की रचना सवत् १६७४ ज्येष्ठ सुदी १३ बुधवार के दिन समाप्त की थी। स्वय कवि द्वारा लिखी हुई मूल पाण्डुलिपि दि० जैन अग्रवाल मन्दिर उदयपुर मे सग्रहीत है।[1] इसका रचना स्थान गुजरात प्रदेश का कोट नगर था। जहा के आदिनाथ चैत्यालय मे इन्होने सीताशील पताका गुण बेलि की रचना समाप्त की थी। कवि की अन्य रचनाओ मे अकलकयति रास, अमरदत्तमिश्रानन्द रासो, रविव्रत कथा, वसुदेव प्रबन्ध, शील सुन्दरी प्रबन्ध, बंकचूलरास के नाम उल्लेखनीय है जयकीर्ति के कुछ पद भी मिलते हैं।

जयकीर्ति पहिले आचार्य थे लेकिन बाद मे काष्ठासघ की सोमकीर्ति की परम्परा में रत्नभूषण के बाद मे भट्टारक बन गये थे। बंकचूलरास की रचना

---

१. **संवत् १६७४ आषाढ सुदी ७ गुरौ श्री कोटनगरे स्वज्ञानावरणी कर्मक्षयाय आ श्री जयकीर्तिना लिखितेयं। ग्रंथ सूची पंचम भाग-पृष्ठ संख्या ६४५**

उन्होने भट्टारक रहते हुए ही की थी। इसका रचनाकाल सवत् १६८५ है। इस सम्बन्ध में ग्रथ की प्रशस्ति पठनीय है—

कथा सुणी बकचूलनी श्रेणिक धरी उल्लास।
वीरनि वादी भावसु पुहुत राजग्रह वास ॥१॥

सवत सोल पच्यासीइ गूर्जर देस मझार।
कल्पवल्लीपुर सोभती इन्द्रपुरी अवतार ॥२॥

नरसिंघपुरा वाणिक वसि दया धर्म सुखकद।
चैत्यालि श्री वृषभवि भावि भवीयण वृन्द ॥३॥

काष्ठासघ विद्यागणे श्री सोमकीर्ति मही सोम।
विजयसेन विजयाकर यशकीर्ति यशस्तोम ॥४॥

उदयसेन महीमोदय त्रिभुवकीर्ति विख्यात।
रत्नभूषण गछपती हवा भुवनरयण जेह जात ॥५॥

तस पट्टि सूरीवर भलु जयकीर्ति जयकार।
जे भवियन भवि साभली ते पामी भवपार ॥६॥

रूपकुमर रलीया मणु बकचूल बीजु नाम।
तेह रास रच्यु रूवडु जयकीर्ति सुखधाम ॥७॥

नीम भाव निर्मल हुई गुरूवचने निवार।
साभलता सपद् मलि ये भणि नरतिनार ॥८॥

यादुसायर नव महीचद सूर जिनभास।
जयकीर्ति कहिता रहु बकचूलनु रास ॥९॥
इति बकचूलरास समाप्त.।

१२. पं० भगवतीदास

प. भगवतीदास १७वी शताब्दी के हिन्दी के कवि थे। उनका जन्म अम्बाला जिले के बुढिया नामक ग्राम मे हुआ था लेकिन बाद मे आगरा एव देहली इनकी साहित्यिक गतिविधियो का प्रमुख केन्द्र बन गये थे। देहली मे मोती बाजार के पार्श्वनाथ मन्दिर के पास ही इनका निवास था। आगरा मे रहते हुए इन्होने "अर्गल-

पुर जिन वदना" निबद्ध की थी । इसमें आगरा के सभी जैन मन्दिरो का परिचय दिया हुआ है । रचना इतिहास की दृष्टि से भी उल्लेखनीय है ।

भगवतीदास अग्रवाल जाति के बसल गोत्रीय श्रावक थे । उनके पिता का नाम किशनदास था जिन्होने वृद्धावस्था मे मुनिव्रतधारण कर लिया था । भगवतीदास भट्टारकीय पडित थे तथा भ. महेन्द्रसेन के शिष्य थे । महेन्द्र सेन दिल्ली गादी के काष्ठासघ माथुर गच्छीय भट्टारक गुणचन्द्र के प्रशिष्य एव सकलचन्द्र के शिष्य थे । कवि ने अपनी अधिकाश रचनाओ मे महेन्द्रसेन का स्मरण किया है ।

कवि की अब तक २५ से भी अधिक कृतिया प्राप्त हो चुकी हैं । अजमेर के भट्टारकीय शास्त्र भडार मे एक गुटका है जिसमे कवि की अधिकाश रचनाओ का सग्रह मिलता है । इनमे सीतासतु, अर्गलपुर जिन वन्दना, मुगति रमणी चूनडी, लघुसीतासतु, मनकरहारास, जोगीरास, टडाणारास, मृगाकलेखाचरित, आदित्यव्रतरास, पखवाडारास, दशलक्षणरास, खिचडीरास आदि के नाम उल्लेखनीय है ।

कवि का विस्तृत परिचय एव मूल्याकन अकादमी के किसी अगले भाग में किया जावेगा ।

१३ ब्रह्म कपूरचन्द

ब्रह्म कपूरचन्द मुनि गणचन्द्र के शिष्य थे । ये १७वी शताब्दी के अन्तिम चरण के विद्वान थे । अब तक इनके पार्श्वनाथरास एव कुछ हिन्दी पद उपलब्ध हुये हैं । इन्होने रास के अन्त मे जो परिचय दिया है, उसमे अपनी गुरु-परम्परा के अतिरिक्त आनन्दपुर नगर का उल्लेख किया है, जिसके राजा जसवन्तसिह थे तथा जो राठौड जाति के शिरोमणि थे । नगर मे 36 जातिया सुखपूर्वक निवास करती थी । उसी नगर मे ऊचे ऊचे जैन मन्दिर थे । उनमे एक पार्श्वनाथ का मन्दिर था । सम्भवत उसी मन्दिर मे बैठकर कवि ने अपने इस रास की रचना की थी ।

पार्श्वनाथरास की हस्तलिखित प्रति मालपुरा, जिला टोंक (राजस्थान) के चौधरियो के दि० जैन मन्दिर के शास्त्र भडार मे उपलब्ध हुई है । यह रचना एक गुटके मे लिखी हुई है, जो उसके पत्र १४ से ३२ तक पूर्ण होती है । रचना राजस्थानी-भाषा मे निबद्ध है, जिसमे १६६ पद्य है । "रास" की प्रतिलिपि बाई रत्नाई की शिष्य श्राविका पारवती गगवाल ने सवत् १७२२ मिती जेठ बुदी ५ को समाप्त की थी ।

श्रीमूल जी सघ बहु सरस्वती गछि ।
भयो जी मुनिवर बहु चारित स्वछ ।।

तहा श्री नेमचन्द गछपति भयो ।
तास के पाट जिन सोभे जी भाग ।।
श्री जसकीरति मुनिपति भयो ।
जाणो जी तर्क ग्रति शास्त्र पुराण ।।श्री।।१५९।।

तास को शिष्य मुनि ग्रधिक (प्रवीन) ।
पच महाव्रतस्यो नित लीन ।।
तेरह विधि चारित धरै ।
व्यजन कमल विकासन चन्द ।।
ज्ञान गौ हम जिसौ ग्रवि ... .. ले ।
मुनिवर प्रगट सुमि श्री गुणचन्द ।।श्री।।१६०।।

तासु तणु सिषि पडित कपूर जी चन्द ।
कीयो रास चिति धरिवि ग्रानन्द ।।
जिनगुण कहु मुझ ग्रल्प जी मति ।
जसि विधि देख्या जी शास्त्र-पुराण ।।
बुधजन देखि को मति हमै ।

तैसी जी विधि मे कीयो जी बखाण ।।श्री।।१६१।।
सोलासै सत्तावणवे मासि वैसाखि ।
पचमी तिथि सुभ उजला पाखि ।।
नाम नक्षत्र ग्राद्रा भलो ।
बार बृहस्पति ग्रधिक प्रधान ।।
राम कीयो वामा सुत तणो ।

स्वामीजी पारसनाथ के थान ।।श्री।।१६२।।
ग्रहो देस को राजाजी जाति राठौड ।
सकल जी छत्री याके सिरिमोड ।।
नाम जसवन्तसिघ तसु तणो ।
तास ग्रानन्दपुर नगर प्रधान ।।
पोणि छत्तीस लीला करे ।
सोमै जी तहा जीण उत्त ग ।
मंडप वेदी जी ग्रधिक ग्रमग ।।
जिण तणा विब सोभै भला ।
जो नर वंदे मन वचकाई ।।

दुख कलेस न सचरे ।
तीस धरा नव निधि थिति पाइ ॥श्री॥१६४॥

रास सवत् १६९७, वैशाख सुदी ५ के दिन समाप्त हुआ था ।

रास मे पार्श्वनाथ के जीवन का पद्य-कथा के रूप मे वर्णन है। कमठ ने पार्श्वनाथ पर क्यो उपसर्ग किया था, इसका कारण बताने के लिये कवि ने कमठ के पूर्व-भव का भी वर्णन कर दिया है। कथा मे कोई चमत्कार नही है। कवि को उसे अति सक्षिप्त रूप से प्रस्तुत करना था सम्भवतः, इसीलिए उसने किसी घटना का विशेष वर्णन नही किया ।

१४ मुनि राजचन्द्र

राजचन्द्र मुनि थे लेकिन ये किसी भट्टारक के शिष्य थे अथवा स्वतन्त्र रूप से विहार करते थे इसकी अभी कोई जानकारी प्राप्त नही हो सकी है। ये १७वी शताब्दी के विद्वान थे। इनकी अभी तक एक रचना "चम्पावती सील कल्याणक" ही उपलब्ध हुई है जो सवत् १६८४ मे समाप्त हुई थी। इस कृति की एक प्रति दि. जैन खण्डेलवाल मन्दिर उदयपुर के शास्त्र भण्डार मे सग्रहीत है। रचना मे १३० पद्य है।[1]

१५ पाण्डे जिनदास

पाण्डे जिनदास ब्र शान्तिदास के शिष्य थे। डा प्रेमसागर ने शान्तिदास को जिनदास का पिता भी लिखा है जिसका आधार बडौत के सरस्वती भण्डार की जम्बूस्वामी चरित की पाडुलिपि है जिसमे शिष्य के स्थान पर सुत पाठ मिलता है। जिनदास आगरा के रहने वाले थे। बादशाह अकबर के प्रसिद्ध मन्त्री टोडरशाह इनके आश्रयदाता थे तथा टोडरशाह के पुत्र थे दीपाशाह जिनके पढने के लिये इन्होने प्रस्तुत काव्य का निर्माण किया था। टोडरशाह के परिवार में रिखबदास, मोहनदास, रूपचन्द, लक्ष्मणदास, आदि और भी व्यक्ति थे जो सभी धार्मिक प्रवृत्ति वाले थे तथा कवि पर उनकी विशेष कृपा थी ।

---

१ सुविचार धरी तप करि, ते ससार समुद्र उत्तरि ।
नरनारी सांभलि जे रास, ते सुख पांमि स्वर्ग निवास ॥ १२९ ॥
संवत सोल चुरासीयि एह, करो प्रबन्ध श्रावण वदि तेह ।
तेरस दिन आदित्य सुद्ध वेलावही, मुनि राजचन्द्रकहि हरखज लहि ॥ १३० ॥
इति चपावती सील कल्याणक समाप्त ॥

पाँडे जिनदास के जम्बू स्वामी चरित काव्य के अतिरिक्त और भी कृतियाँ उपलब्ध होती है जिनमे नाम हैं चेतनगीत, जखडी, मालीरास, जोगीरास मुनीश्वरों की जयमाल, धर्मरासगीत, राजुलसज्झाय, सरस्वती जयमाल, आदित्यवार कथा, दोहा बावनी, प्रबोध बावनी, बारह भावना आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

कवि का विस्तृत परिचय अकादमी के किसी अगले भाग में दिया जावेगा।

१६. पाण्डे राजमल्ल

पाडे राजमल्ल उपलब्ध राजस्थानी गद्य के सबसे प्राचीन दिगम्बर जैन लेखक हैं ये विराट नगर (बैराठ) के रहने वाले थे। इनकी शिक्षा दीक्षा कहा हुई इसकी तो अभी खोज होना शेष है लेकिन ये प्राकृत एवं संस्कृत के अच्छे विद्वान थे। इन्होंने आचार्य कुन्दकुन्द के समयसार की बालावबोध टीका लिखी थी। इसी टीका के आधार पर महाकवि बनारसीदास ने समयसार नाटक की रचना की थी।[1] इसी बालावबोध टीका का उल्लेख महाकवि बनारसीदास ने अपने अर्धकथानक मे किया है।[2]

श्री नाथूराम प्रेमी ने इनकी जम्बूस्वामी चरित, लाटी सहिता, अध्यात्म-कमलमार्तन्ड, छन्दोविधा एवं पचाध्यायी रचनाये होना लिखा है।[3] (अर्धकथानक पृष्ठ संख्या ८५)

१७. छीतर ठोलिया

छीतर ठोलिया मौजमाबाद के निवासी थे। इनकी जाति खडेलवाल एवं गोत्र ठोलिया था। इनकी एकमात्र रचना होली की कथा सवत् १६५० की कृति है जिसको उन्होने अपने ही ग्राम मौजमाबाद मे निबद्ध की थी। उस समय नगर पर आमेर के राजा मानसिह का शासन था।[4] होली की कथा सामान्य रचना है।

---

१ पाण्डे राजमल्ल जिनधरमी, समयसार नाटक के मरमी।
लिन गिरंथ की टीका कीनी बालाबोध सुगम कर दीनी॥

२. वि सं. १६८४ मे अध्यात्म चर्चा के प्रेमी अरथमल ढोर मिले और उन्होने समयसार नाटक की राजमल्ल कृत टीका का और कहा कि तुम इसे पढ़ो इसमें सत्य क्या है सो तुम्हारी समझ में आ जावेगा।

३. अर्ध कथानक—पृष्ठ संख्या ४७

४. शाकम्भरी के विकास में जैन धर्म का योगदान—डा. कासलीवाल, पृष्ठ ४७

१८. भट्टारक वीरचन्द्र

वीरचंद्र १७वी शताब्दी के प्रतिभा सम्पन्न विद्वान थे। व्याकरण एव न्यायशास्त्र के काण्ड वेत्ता थे। संस्कृत प्राकृत, गुजराती एव राजस्थानी पर इनका पूर्ण अधिकार था। ये भ० लक्ष्मीचद्र के शिष्य थे। अब तक इनकी आठ रचनायें उपलब्ध हो चुकी है जिनके नाम निम्न प्रकार हैं—

(१) वीर विलास फाग, (२) सबोध सत्तायु (३) जम्बू स्वामी बेलि, (४) नेमिनाथ रास, (५) जिन आतरा (६) चित्तनिरोध कथा. (७) सीमधर स्वामी गीत एव (८) बाहुबलि बेलि। वीर विलास फाग एक खन्ड काव्य है जिसमे २२वें तीर्थ कर नेमिनाथ की जीवन घटना का वर्णन किया गया है। फाग मे १३३ पद्य हैं। जम्बूस्वामी बेलि एक गुजराती मिश्रित राजस्थानी रचना है। जिन आतरा मे २४ तीर्थ करो के समय आदि वर्णन किया किया हैं। सबोध सत्तारगु एक उपदेशात्मक गीत हैं जिसमे ५३ पद्य है। चित्तनिरोधक कथा १५ पद्यो की एक लघु कृति है इसमे भ० वीरचद्र को "लाड नीति शृ गार" लिखा हैं। नेमिकुमार रास की रचना स० १६३३ मे समाप्त हुई थी यह भी नेमिनाथ की वैवाहिक घटना पर आधारित एक लगु कृति है।

कवि का विस्तृत परिचय अकादमी के किसी अगले भाग मे दिया जावेगा।

१९ खेतसी

खेतसी का दूसरा नाम खेतसिह भी मिलता हैं। अभी तक इनकी तीन कृतिया प्राप्त हो चुकी है जिनके नाम है नेमिजिनद व्याहलो, नेमीश्वर का बारह मासा, एव नेमिश्वर राजुलकी लहुरि। राजस्थान के एव अन्य शास्त्र भडारो मे अभी कवि की ग्रोर रचनाये मिलने की सम्भावना है। नेमिजिनद व्याहलो की एक प्रति दि० जैन मदिर फतेहपुर (शेखावाटी) के तथा दूसरी जयपुर के पाटोदी के मदिर के शास्त्र भडार मे सग्रहीत है। खेतसी की रचनाये भाषा एव शैली की दृष्टि से उल्लेखनीय रचनाये है। ये सत्रहवी शताब्दी के अतिम चरण के कवि थे। नेमिजिनद व्याहलो इनकी सवत् १६९१ की रचना है।

२०. ब्रह्म अजित

ब्रह्म अजित सस्कृत के अच्छे विद्वान थे। ये गोलशृंगार जाति के श्रावक थे। इनके पिता का नाम वीरसिह एवं माता का नाम पीथा था। ब्रह्म अजित

भट्टारक सुरेन्द्रकीर्ति के प्रशिष्य एव भट्टारक विद्यानदि के शिष्य थे। ये ब्रह्मचारी थे और इसी अवस्था मे रहते हुये इन्होंने भृगुकच्छपुर (भड़ोच) के नेमिनाथ चैत्यालय में हनुमच्चरित्र की रचना समाप्ति की थी। इस चरित की प्राचीन प्रति आमेर शास्त्र भंडार जयपुर मे सग्रहीत है। हनुमच्चरित में १२ सर्ग हैं और यह अपने समय का काफी लोकप्रिय काव्य रहा है।

ब्रह्म अजित की एक हिन्दी रचना "हसा गीत" प्राप्त हुई है यह एक उप-देशात्मक एव शिक्षाप्रद कृति है जिसमे "हसा" (आत्मा) को सम्बोधित करते हुये ३७ पद्य है। गीत की समाप्ति निम्न प्रकार की है—

> रास हस तिलक एह, जो भावइ दिढ चित्त रे हसा।
> श्री विद्यानदि उपदेस, बोल्नि ब्रह्म अजित रे हसा ॥३७॥
> हसा तू करि सयम, जम न पडि ससार रे हसा ॥

ब्रह्म अजित १७वी शताब्दी के विद्वान सन्त थे।

२१ आचार्य नरेन्द्रकीर्ति

ये १७वी शताब्दी के सन्त थे। भ०वादिभूषण एव भ० सकलभूषण दोनो ही सन्तो के ये शिष्य थे और दोनो की ही इन पर विशेष कृपा थी। एक बार वादिभूषण" के प्रिय शिष्य ब्रह्म नेमिदास ने जब इनसे "सगरप्रबन्ध लिखने की प्रार्थना की तो इन्होंने उनकी इच्छानुसार "सगर प्रबन्ध" कृति को निबद्ध किया। प्रबन्ध का रचनाकल स० १६४६ असोज सुदी दशमी है। यह कवि की एक अच्छी रचना है। आचार्य नरेन्द्रकीर्ति की ही दूसरी रचना "तीर्थ कर चौबीसना छप्पय" है। इसमे कवि ने अपने नामाल्लेख के अतिरिक्त अन्य कोई परिचय नही दिया है। दोनो ही कृतिया उदयपुर के शास्त्र भडारो मे सग्रहीत है।

२२. ब्रह्म रायमल्ल

१७वी शताब्दी के प्रथम पाद के महाकवि रायमल्ल के सम्बन्ध में अकादमी की ओर से प्रथम भाग— महाकवि ब्रह्मरायमल्ल एव भ० त्रिभुवनकीर्ति प्रकाशित हो चुका है।

२३. जगजीवन

कविवर जगजीवन बनारसीदास के समकालीन ही नही किन्तु उनके कट्टर प्रशसक भी थे। ये आगरा के सम्पन्न घराने के थे लेकिन पूर्णत. निरभिमानी भी थे।

उनके पिता का नाम अभयराज था। उनके कितनी ही स्त्रियां थी जिनमे मोहनदे सबसे अधिक प्रसिद्ध थी[१] और जगजीवन की माता भी वही थी। कवि अग्रवाल गर्ग गोत्रीय श्रावक थे। इनकी अच्छी शिक्षा दीक्षा हुई थी इसलिये थोड़े ही दिनो मे उनकी चारो ओर ख्याति फैल गई। जगजीवन ज्ञानियो की मंडली के अगुवा बन गये।[२]

जगजीवन बनारसीदास के परम भक्त थे तथा उनकी रचनाओं से परिचित थे। बनारसीदास की मृत्यु के पश्चात जगजीवन ने सवत् १७०१ मे उनकी सभी रचनाओं का एक ही स्थान पर सकलन करके उसका नाम बनारसी विलास रखा और साहित्यिक क्षेत्र मे अपना नाम अमर कर लिया। जगजीवनराम स्वय भी कवि थे। इसलिये उन्होने एकीभाव स्तोत्र की एव भूपाल चौबीसी की भाषा टीका की थी। इनके कितने ही पद भी मिलते हैं। डा० प्रेमसागर ने भूपाल चौबीसी का उल्लेख नही किया है।

जगजीवनराम के समय आगरा साहित्यकारो एव साहित्यसेवियो का प्रमुख केन्द्र था। प० हीरानन्द ने समवसरण विधान की प्रशस्ति मे जगजीवनराम का अच्छा वर्णन किया है जो निम्न प्रकार है—

अब सुनि नगरराज आगरा, सकल लोक अनुपम सागरा।
साहजहाँ भूपति है जहाँ, राज करे नयमारग तहाँ ।।७५।।

ताको जाफरखा उमराउ, पचहजारी प्रगट कराउ।
ताको अगरवाल दीवान, गरगगोत सब विधि परधान ।।७९।।

सघही अभैराज जानिये, सुखी अधिक सब करि मानिये।
बनितागण नाना परकार, तिनमे लघु मोहनदे सार ।।८०।।

ताको पूत पूत-सिरमौर, जगजीवन जीवन की ठौर।
सुन्दर सुभवरूप अभिराम, परम पुनीत धरम-धन-धाम ।।८१।।

---

१ नगर आगरे में अगरवाल गरगगोत नागर नवलसा।
संघ ही प्रसिद्ध अभिराज राज मांननीक, पचवाल नलनी मे भयो है कवलसा।
ताके प्रसिद्ध लघु मोहनदे संघइनि, जाके जिनमारग विराजित धवलसा।
ताहि को सपूत जगजीवन सुविद्व जैन, बनारसी बैन जाके हिए में सबलसा।

२ समै जोग पाइ जग जीवन विख्यात भयो,
ज्ञान की मंडली मे जिसको विकास है।

काल-लबधि कारन रस पाइ, जग्यो जथारथ अनुभौ आइ।
अहनिसि ग्यानमडली चैन, परत और सब दीसै फैन ॥८२॥

इससे दो बातो पर प्रकाश पडता है—एक तो यह कि सवत् १७०१ में आगरे में ज्ञाताओ की एक मडली या आध्यात्मियो की सैली थी, जिसमे सघवी जगजीवनराम, प० हेमराज, रामचन्द, सघी मथुरादास, भवालदास, और भगवतीदास थे। भगवतीदास को "स्वपरप्रकाश" विशेषण दिया है। ये भगवतीदास वेही जान पडते हैं जिनका उल्लेख बनारसीदासजी ने नाटक समयसार मे निरन्तर परमार्थ चर्चा करने वाले पंच पुरुषो मे किया है। हीरानन्दजी अपने दूसरे छन्दोबद्ध ग्रन्थ पचास्तिकाय (१७०१) मे भी धनमल और मुरारि के साथ इन्ही का ज्ञातारूप मे उल्लेख किया है।

दूसरी बात यह है कि जफरखा बादशाह शाहजहाँ का पाचहजारी उमराव था जिसके कि जगजीवन दीवान थे और जगजीवन के पिता अभयराज सर्वाधिक सुखी सम्पन्न थे। उनके अनेक पत्नियाँ थी जिनमे से सबसे छोटी मोहनदे से जगजीवन का जन्म हुआ था।

२४. कुंअरपाल

ये कविवर बनारसीदास के अभिन्न मित्र थे।[१] जिन पाच साथियो के साथ बैठकर बनारसीदास परमार्थ चर्चा किया करते थे उनमे कुअरपाल का नाम भी सम्मिलित है।[२] पाण्डे हेमराज ने उन्हे ज्ञाता अधिकारी के रूप मे स्मरण किया है। महोपाध्याय मेघविजय ने अपने "युक्ति प्रबोध" में उनकी सर्वमान्यता स्वीकार की है। स्वय कवि कुअरपाल ने अपनी "समकित बत्तीसी" मे अपना यश चारो ओर नगरो मे फैलने के लिये लिखा है।[3]

---

१ कुंवरपाल बनारसी मित्र जुगल इक चित्त।
तिनहि ग्रंथ भाषा कियो बहु विधि छन्द कवित्त ॥२॥

१ रूपचंद पंडित प्रथम, दुतिय चतुर्भुज नाम।
तृतीय भगौतीदास नर, कौरपाल गुणधाम ॥
धरमदास ए पंच जन, मिलि बैठे इक ठौर।
परमारथ चरचा करै, इन के कथा न ओर ॥

२ पुरि पुरि कंवरपाल जस प्रगट्यो, बहुविध ताप बंस वरणिज्जई।
धरमदास जसकंवर सदा धनी, अडसाला बिसतर किम किज्जई।

बनारसीदास ने "सूक्ति मुक्तावली" मे कुंअरपाल का नाम अपने अभिन्न मित्र के रूप मे लिया है और दोनो ने मिलकर सूक्ति मुक्तावली भाग रचना की ऐसा उल्लेख किया है। कवि की अब तक कवरपाल बत्तीसी एव सम्यकत्व बत्तीसी रचनाये उपलब्ध हो चुकी है।

कुअरपाल का जन्म ओसवाल वश के चौरडिया गोत्र मे हुआ था। कुअरपाल के पिता का नाम अमरसिंह था। नाथूराम प्रेमी ने अमरसिंह का जन्म स्थान जैसलमेर माना है। कुअरपाल के हाथ का लिखा हुआ एक गुटका विक्रम सवत् १६८४-८५ का है जिसमे विभिन्न पाठो का सग्रह है। कुछ रचनायें स्वय कवि द्वारा निर्मित भी है। लेकिन उनका नामोल्लेख नही हुआ है। इसी तरह एक गुटका और मिला है जो स्वय कुअरपाल के पढने के लिये लिखा हुआ गया था। जिसमे कुअरपाल द्वारा लिखी हुई समकित बत्तीसी का विषय अध्यात्मरस से है। इसका अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

हुआै उछाह मुजस आतम सुनि, उत्तम जिके परम रस भिन्ने।
ज्यउ सुरही तिण चरहि दूध हुई, ग्याता नेरह प्रन गुन गिन्ने॥
निजबुधि सार विचारि अध्यातम, कवित बत्तीस भेट कवि किन्ने।
कवरपाल अमरेम 'तनू' भव, अतिहितचित आदर कर लिन्नै॥

२५ सालिवाहन

सालिवाहन १७वी शताब्दी के अन्तिम चरण के कवि थे। इन्होने सवत् १६६५ मे आगरा मे रहत हरिवश पुराण भाषा (पद्य) की रचना की थी। इनके पिता का नाम खरगसेन एव गुरु का नाम भट्टारक जगभूषण था। कवि भदावर प्रान्त के कञ्चनपुर नगर के निवासी थे। हरिवश पुराण की प्रशस्ति मे इन्होने अपना परिचय निम्न प्रकार दिया है—

सवत् सोरहिसै तहाँ भये तापरि अधिक पचानवे गये।
माघ मास किसन पक्ष जानि, सोमवार सुभवार बखानि॥
भट्टारक जगभूषण देव गनधर सादृस वादि जु एइ।
नगर आगिरो उत्तम थानु साहिजहाँ तपे दूजो भान॥
बाहन करी चौपई बन्धु हीन बुधि मेरी मति अन्धु।

२६ सुन्दरदास

सुन्दरदास नाम के जैन कवि भी हुये हैं जो बागड प्रान्त के रहने वाले

थे। लेकिन यह बागड प्रदेश डूगरपुर वाला बागड प्रदेश नही है किन्तु देहली के आसपास के प्रदेश को बागड प्रदेश कहा जाता था ऐसा डा० प्रेमसागर जैन ने माना है। डा० जैन के अनुसार सुन्दरदास शाहजहाँ के कृपापात्र कवियो मे से थे। बादशाह ने इनको पहिले कविराय और फिर महाकविराय का पद प्रदान किया था। डा० जैन ने लिखा है कि सुन्दरदास राजस्थानी कवि थे तथा जयपुर से ५० किलोमीटर पूर्व की ओर स्थित दौसा उनका जन्म स्थान था। इनकी माता का नाम सती एव पिता का नाम चौखा था। सुन्दरदास आध्यात्मिक कवि थे। इनके अभी तक चार ग्रन्थ एवं कुछ फुटकर रचनायें प्राप्त हो चुकी है। ग्रन्थो के नाम हैं सुन्दरसतसई, सुन्दर विलास, सुन्दर शृगार एव पाखड पचासिका। जयपुर के ठोलियो के मन्दिर मे पद एव सहेलीगीत भी मिलता है। सहेलीगीत का प्रारम्भ निम्न प्रकार हुआ है—

सहेल्लो हे यो ससार असार मोचित मे या अपनो जी सहेल्लो हे
ज्यो राचे तो गवार तन धन जोबन थिर नही।

सुन्दर शृगार—इसकी एक प्रति साहित्य शोध विभाग जयपुर के सग्रह मे है जिसमे ३५६ पद्य हैं। प्रारम्भ मे कवि ने अपना एव बादशाह शाहजहाँ का परिचय निम्न प्रकार दिया है—

तीन पहरि लो रवि चले, जाके देसनि नाहि।
जीत लई जगती इती, साहिजहा नर नाहि ॥८॥

कुल दरिया खाई कियो, कोटतीर के ठाव।
आठो दिसि यो बसि करि, यो कीजै इक गाव ॥९॥

साहिजहा तिनि गुननि को, दीने अगिनित दान।
तिन मै सुन्दर सुकवि को, कीयो बहुत सनमान ॥१०॥

नग भूषन मनि सबद ये, हय हाथी सिर पाइ।
प्रथम दीयौ कवि राय पद, बहुरि महाकवि राइ ॥११॥

विप्र ग्वारियर नगर को, बासी है कविराज।
जासौं साहि मया करो, सदा गरीब निवाज ॥१२॥

जब कवि कौ मन यौं बढ्यौ, तब यह कीयौ बिचारु।
बरनि नाइका नायक विरच्यौ ग्रथ विस्तार ॥ १३ ॥

सु दर कृत सिंगार है, सकल रसनि को सारु ।
नाव धरयो या ग्रथ कौ, यह सु दर सिंगार ॥ १४ ॥

जो सु दर सिंगार को, पढे, गुने सग्यानु ।
तिन मानौ सभार मैं, करयौ सुधारस पान ॥१५॥

सवत् सोरह मे बरष, बीते अठ्यासीत ।
कातिक सुदि षष्टि गुरौ, रच्यौ ग्रथ करि मीति ॥१६॥

सुन्दर शृ गार की प्रशस्ति से मालूम होता है कि कवि ग्वालियर के रहने वाले ब्राह्मण कवि थे जैन नही थे ।

२८. **परिहानन्द (नन्दलाल)**

परिहानन्द आगरा के पास गोसुना ग्राम के रहने वाले थे लेकिन बाद मे आगरा आकर रहने लगे थे । वे अग्रवाल जातीय गोयल गोत्र के श्रावक थे । उनकी माता का नाम चन्दा तथा पिता का नाम भैरू था । काशी नागरी प्रचारिणी पत्रिका हस्तलिखित ग्रथो की खोज २०वा त्रैवार्षिक विवरण मे माता का नाम चन्दन दिया हुआ है ।[२] कवि के समय मे आगरा पूर्ण वैभवशाली नगर था जहा सभी तरह का व्यापार था जिस कारण वहा कवि के शब्दो मे असख्य धनवान रहते थे । उस समय आगरा मथुरा मडल का उत्तम नगर माना जाता था ।[3]

परिहानन्द ने हिन्दी के अच्छे कवि थे उन्होने यशोधर चरित्र को सवत् १६७० श्रावण शुक्ला सप्तमी सोमवार को समाप्त किया था । डा प्रेमसागर जैन ने कवि का नाम परिहानन्द के स्थान पर नन्दलाल लिखा है । नन्द नाम से सवत

---

१ अग्रवाल वरबंस गोसना गांव को
गोयल गोत प्रसिद्ध चिह्न ता ठांव को
माता चंदा नाम पिता भैरू भन्यौ
परिहानन्द कही मन मोद अ ग न गुन नां गिन्यौं ।५९८॥

२ माताहि चन्दन नाम पिता भयरो भन्यो
नन्द कहो मनमोद गुनो गन ना गन्यो ।

३. नगर आगरौ बसै सुवासु, जिहपुर नाना भोग विलास ।
बसहि साहु बहु धनी असंखि, वनजहि बनज सापहहिनखि ।
गुणी लोग छत्ती सौ कुरी, मथुरा मंडल उत्तम पुरी ।

१६६३ वाली कृति "सुदर्शन सेठ कथा" को भी इन्ही कवि की रचना स्वीकार किया है। सुदर्शन सेठ कथा कि एक प्रति भट्टारकीय शास्त्र भण्डार अजमेर में सुरक्षित है।

कवि की तीसरी कृति 'गूढ विनोद' में भी कवि ने अपना नाम नन्द ही दिया है। इसकी एक पाण्डुलिपि जयपुर के पडित लूणकरणजी के शास्त्र भण्डार मे संग्रहीत है।

यशोधर चरित्र ५९८ पद्यों का प्रबन्ध काव्य है। रचना भाषा एव शैली की दृष्टि से यह एक उत्तम कृति हैं। यह काव्य अभी तक अप्रकाशित हैं।

२८. **परिमल्ल**

परिमल्ल कवि हिन्दी के १७वी शताब्दी द्वितीय चरण के कवि थे। ये प्रथम कवि हैं जिन्होने काव्य प्रारम्भ करने की तिथि दी है नही तो सभी कवि रचना समाप्ति की तिथि देते हैं। परिमल्ल का श्रीपाल चरित एक मात्र काव्य है जिसको अभी तक उपलब्धि हुई है। कवि ने इसे सवत १६५१ आष ढ शुक्ला अष्टमी अष्टाह्निका पर्व के प्रथम दिन प्रारम्भ किया था।

सवत् सोलह से उच्चरयौ सावरण इक्यावन आगरा।
मास असाढ पहुतो आइ वरषा रिति को कहे बढाइ।
पक्ष उजाली आठै जाणि, सुक्रवार वार परवाणि।
कवि परिमल्ल सुद्ध करि चित्त, आरम्भ्यो श्रीपाल चरित।

उस समय देश पर बादशाह अकबर का शासन था। चारो ओर सुख शान्ति थी कवि ने अकबर को दूसरा भानु लिखा है

बब्बर पातिसाह हवं गयौ, ता सुत साहि हमाऊ भयौ।
जा सुत अकबर साहि समाण, सो तप तप्यौ दूसरौ भाण ॥३२॥

ताकै राज न होइ अनीति, बसुधा बहुत करि वसि जीति।
कितेक देस तास की आन, दूजौ और न ताहि समान ॥३३॥

वश परिचय—परिमल्ल कवि अत्यधिक सम्मानित वश से सबधित थे इनकी जाति विरहिया जैन थी। कवि के प्रपितामह चदन चौधरी थे जो ग्वालियर के राजा मानसिंह द्वारा सम्मानित थे। उनकी कीर्ति चारो ओर फैली हुई थी। वे स्वय प्रतापी थे तथा अपने कुल को प्रसन्न रखने वाले थे। कवि के पितामह रामदास एव पिता आसकरन थे। ये आसकरण के पुत्र थे। परिमल्ल आगरा में आकर रहने लगे

थे। और वही पर रहते हुए उन्होने श्रीपाल चरित को चौपई बन्ध छन्द मे पूर्ण किया था।[१]

कवि की एक मात्र कृति श्रीपाल चरित की राजस्थान के ग्रथ भण्डारो में कितनी ही पाडुलिपिया उपलब्ध होती हैं। पूरा काव्य २३०० चौपई छन्दो मे निबद्ध है। यद्यपि श्रीपाल का जीवन कथा लोकप्रिय कथा है लेकिन कवि की वर्णन शैली बहुत ही अच्छी है जिसमे काव्य मे चमत्कार छा गया है।

काव्य की एक प्रति आमेर शास्त्र भण्डार मे संख्या १३६० पर सग्रहीत है जिसमे १२५ पत्र है तथा जिसे सवत् १७९४ मे पाटन मे जैकिशन जोशी द्वारा लिपिबद्ध किया गया था।

२९. वादिचन्द्र

वादिचन्द्र विद्यानन्दि की परम्परा मे होने वाले भ. ज्ञानभूषण के प्रशिष्य एव भ. प्रभाचन्द्र के शिष्य थे। इन्हे साहित्य निर्माण की रुचि गुरु परम्परा से प्राप्त हुई थी। सस्कृत एव हिन्दी गुजराती पर इनका अच्छा अधिकार था इसलिये इन्होने सस्कृत एव हिन्दी दोनो मे अपनी कलम चलायी। ये एक समर्थ साहित्यकार थे। सवत् १६४० मे इन्होने सस्कृत मे वाल्हीक नगर मे पार्श्वपुराण की रचना करके अपने कर्तृत्व शक्ति का परिचय दिया।[२] ज्ञानसूर्योदय नाटक को सवत् १६४८[३] एव यशोधर चरित्र को सवत् १६५७ मे पूर्ण किया था।[४] "पवनदूत" कालीदास के मेघदूत के आधार पर रचा गया काव्य है।[५]

---

१ गोत्रि गोरी ठाळो उत्तिम थांन, सूरवीर यह रामान।
ता आगे बदन चौधरी, कीरति सब जग में विस्तरी॥ ६६॥
जाति विरहिया गुराह गभीर अति प्रताप कुल रजन धीर।
ता सुत रामदास परवान, ता सुत अस्ति महा सुर ग्यांन॥ ६७॥
तसु कुल मंडल है परिमल्ल, सबे आगरा में अरिसल्ल।
तासु मंहि न बुद्धि नहि आन, कोयौ चोपई बध प्रवांन॥ ६८॥

२ शून्याब्दो रसाब्जांके वर्षे पक्षे समुज्वले।
कार्तिक मास पंचम्यां वाल्होके नगरे मुदा॥ पार्श्वपुराण

३ प्रशस्ति संग्रह–सम्पादक–डा कस्तूरचन्द कासलीवाल पृष्ठ १६

४ अंकलेश्वर-सुग्रामे श्री चिन्तामरिण मन्दिरे।
सप्तपच रसाब्जांके वर्षे कारि सुशास्त्रकम्॥

५. प उदयपाल कासलीवाल द्वारा सम्पादित-जैन साहित्य प्रसारक कार्यालय बम्बई द्वारा सन १९१४ में प्रकाशित

इसके अतिरिक्त सुलोचना चरित्र की एक पाण्डुलिपि ईडर के शास्त्र भण्डार में सग्रहीत है।

वादिचन्द्र की हिन्दी में भी कितनी ही कृतिया मिलती है जो राजस्थान के विभिन्न शास्त्र भण्डारो में उपलब्ध होती हैं। अब तक उपलब्ध कुछ कृतियो के नाम निम्न प्रकार है.—

१–पार्श्वनाथ वीनती
२–श्रीपाल सौभागी आख्यान
३–बाहुबलिनो छद
४–नेमिनाथ समवसरण
५–द्वादश भावना
६–आराधना गीत
७–अम्बिका कथा
८–पाण्डवपुराण

पार्श्वनाथ विनती की एक प्रति दि. जैन मन्दिर कोटडियो का, डूंगरपुर के शास्त्र भण्डार मे सग्रहीत हैं। इसका रचनाकाल सवत् १६४८ दिया हुआ है।[1] श्रीपाल सोभागी आख्यान की उदयपुर एव कोटा के शास्त्र भण्डारो मे प्रतिया सुरक्षित हैं।[2] इसका रचना काल सवत् १६५१ है। प. नाथूराम प्रेमी ने आख्यान के विषय मे लिखा है कि यह एक गीति काव्य है और इसकी भाषा गुजराती मिश्रित हिन्दी है। इसकी रचना सघपति घनजी सबा के आग्रह से हुई थी। आख्यान में सभी रसो का प्रयोग हुआ है तथा भाषा एव शैली मे सरलता एव प्रवाह है।[3] यह एक भक्ति प्रधान काव्य है। काव्य का एक उदाहरण देखिये—

दान दीजे जिन पूजा कीजे, समकित मनें राखिजे जी
सूत्रज भणिए णवकार गणिए, असत्य न विभाषिजे जी
लोभ तजी जे ब्रह्म धरीजे, साभल्यातु फल एह जी
ए गीत जे नर नारी सुणसे अनेक मगल तह गेह जी

१ राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्रंथ सूची पचम भाग–पृ स. ११६१
२. राजस्थान के जैन शास्त्र भण्डारों की ग्रंथ सूची पचम भाग–पृ सं. ४६१
३. संघपति धनजी सवा वचनें कीधो ए प्रबन्ध जो।
केवली श्रीपाल पुत्र सहित तुम्ह नित्य करो जयकार जी।

बाहुबलि नो छन्द–इसकी एक पाण्डुलिपि दि. जैन मन्दिर कोटडिया डू गरपुर के एक गुटके मे सग्रहीत है । डा प्रेमसागर जैन ने इसका नाम भरत बाहुबलि छन्द नाम दिया हुआ है ।[१] इस कृति मे वादिचन्द्र ने अपने गुरु का नाम निम्न प्रकार किया है—

तस पाय लागे प्रभासचन्द्र, वाणि बोल्ये वादिचन्द्र ।

४-नेमिनाथ नो समवसरण, ५-गौतमस्वामी स्तोत्र एव ३-द्वादश भावना की पाण्डुलिपिया दिगम्बर जैन खण्डेलवाल मन्दिर उदयपुर के शास्त्र भण्डार के एक गुटके मे सग्रहीत है । इस गुटके मे वादिचन्द्र के गुरु भ ज्ञानभूषण एव भ वीरचन्द्र आदि की कृतियाँ भी सग्रहीत हैं । डा प्रेमसागर जैन ने आराधना गीत, अम्बिका कथा एव पाण्डवपुराण इन कृतियो का और उल्लेख किया है ।[२]

३०. कनककीर्ति

कनककीर्ति नामक दो विद्वान हो गये हैं । एक कनककीर्ति खरतर गच्छीय शाखा के प्रसिद्ध जिनचन्द्रसूरी की शिष्य परम्परा मे नयकमल के प्रशिष्य एव जय-मन्दिर के शिष्य थे । जैन गुर्जर कविओ भाग एक मे इनकी दो रचनायें नेमिनाथरास एव दौपद्रीरास का उल्लेख हुआ है । इनका निर्माण क्रमश. बीकानेर एव जैसलमेर मे हुआ था इसलिये सभवत. कवि उसी क्षेत्र के होगे ।

दूसरे कनककीर्ति दिगम्बर विद्वान थे और वे भी १७वी शताब्दी के ही थे । इन्होने अपने आपको माणिक का शिष्य होना बतलाया है । इन कनककीर्ति की दिगम्बर भण्डारो मे पर्याप्त सख्या मे कृतिया मिलती है । तत्वार्थ सूत्र की श्रुतसागरी टीका पर हिन्दी गद्य मे जो टीका लिखी है वह दिगम्बर समाज मे बहुत लोकप्रिय टीका है । इसकी भाषा ढू ढारी है इसलिये लगता है कि ये कनककीर्ति ढूढाहड प्रदेश के किसी ग्राम अथवा नगर के रहने वाले थे । उन्होने अपनी किसी भी रचना मे खरतरगच्छ अथवा नयकमल के नाम का उल्लेख नही किया है इसलिये डा प्रेमसागर जैन का दोनो विद्वानो को एक मानना सही प्रतीत नही लगता ।[३]

दिगम्बर कनककीर्ति की अब तक निम्न रचनाओ की खोज की जा चुकी हैं ।

---

१ हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि–पृष्ठ संख्या १३८
२ हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि–पृष्ठ संख्या १३९
३ हिन्दी जैन भक्ति काव्य और कवि–पृष्ठ संख्या १७८

१-तत्वार्थ सूत्र भाषा टीका
२-बारहखडी
३-मेघकुमार गीत
४-श्रीपाल स्तुति
५-कर्म घटवाली
६-पार्श्वनाथ की आरती

उक्त रचनाओ के अतिरिक्त कनककीर्ति के पद, स्तवन, विनती आदि कितनी ही लघु कृतियां मिलती हैं। इन सभी कृतियो से कवि के दिगम्बर मतानुयायी होने का ही उल्लेख मिलता है।

३१. विष्णु कवि

विष्णु कवि उज्जैन के रहने वाले थे। सवत् १६६६ में इन्होने भविष्यदत्त कथा को उज्जैन मे समाप्त किया था। इसी कथा की एक मात्र अपूर्ण पाण्डुलिपि श्री दिगम्बर जैन सरस्वती भवन पचायती मन्दिर मस्जिद खजूर देहली मे सग्रहीत है। पूरा काव्य ४०१ चौपई छन्दो मे निबद्ध है। भाषा बहुत सरल किन्तु सरस है। कवि ने अपना परिचय निम्न प्रकार दिया है—

सवतु सोरहसै हवे गई, अधिका तापर छासठि भई।
पुरी उज्जैनी कविनि कौ दासु, विष्णु तहा करि रह्यो निवासु।
मन वच क्रम सुनौ सबु कोई, वत्र्न्या सुनै पुत्र फल होइ।
बहिरे सुनं ति पावे कान, मूरिख हौहि ते चतुर सुजान।
निर्धन सुनै एकु चित्त लाइ, ता घर रिधि चढै सुभ भाइ।
जो लवधारे चित्त मझारि, रण रावण नहि आवे हारि।
अचला होइ रुप गुन रासि, जन्म न परै कर्म की पासि।
और बहुत गुन कह लगि गनौ, धर्म कथा यहु मनु दे सुनौ
जन्म त होइ ताहि अवसान, निश्चल पदु पावै निर्वान॥

श्वेताम्बर जैन कवि

३२ हरि कलश

हीर कलश खरतर गच्छ के साधु थे। ये जिन चन्द्रसूरि की शिष्य परम्परा मे होने वाले हर्षप्रभ के शिष्य थे। उनका साहित्यिक काल सवत् १६१५ से १६५७ तक का माना जाता है। इन्होंने बीकानेर एव नागौर में सर्वाधिक विहार किया।

ये राजस्थानी भाषा के कवि कहलाते हैं। अब तक उनकी दस रचनायें प्राप्त हो चुकी हैं जिनके नाम निम्न प्रकार हैं—

१. सम्यकत्वकौमुदी (१६२८)	२ सिंहासन बत्तीसी (१६३६)
३ कुमति विध्वसन चौपई (१६१७)	४ आराधना चौपाई (१६१३)
५ अठारह नाता (१६१६)	६. रतनचूड चौपई
७. मोती कपासिया सवाद	८. हरियाली
९. मुनिपति चरित्र चौपई (१६१८)	१० सोलह स्वप्न सज्झाय (१६२२)

३३ **समयसुन्दर**

समयसुन्दर का जन्म साचोर मे हुआ था। इनका जन्म सवत् १६१० के लगभग माना जाता है। डा० माहेश्वरी ने इसे स० १६२० का माना है। इनकी माता का नाम लीलादे था। युवावस्था मे उन्होने दीक्षा ग्रहण करली और फिर काव्य, चरित, पुराण व्याकरण छन्द, ज्योतिष आदि विषयक साहित्य का पहिले अध्ययन किया और फिर विविध विषयो पर रचनाये लिखी। सवत् १६४१ से आपने लिखना आरम्भ किया और सवत् १७०० तक लिखते ही रहे। इस दीर्घकाल मे इन्होने छोटी-बडी सैकडो ही कृतियाँ लिखी थी। समयसुन्दर राजस्थानी साहित्य के अभूतपूर्व विद्वान् थे, जिनकी की कहावतो मे भी प्रशसा वर्णित है।

"राजा ना ददते सौख्यम्" इन आठ अक्षरों के वाक्य के आपने १० लाख से भी अधिक अर्थ करके सम्राट अकबर और समस्त सभा को आश्चर्य चकित कर दिया था। "सीताराम चौपाई" नामक राजस्थानी भाषा मे निबद्ध एक सुन्दर काव्य है। समयसुन्दर कुसुमाजलि मे आपकी ५६३ रचनाये प्रकाशित हो चुकी हैं। सम्बप्रद्युमन चौपाई, मृगावती रास (१६६८), प्रियमेलक रा। (१६७२), शत्रुजय रास, स्थूलिभद्र रास आदि रचनाओ के नाम उल्लेखनीय है।

३४. **जिनराजसूरि**

ये युग प्रधान जिनचन्द्रसूरि के प्रशिष्य थे। ये भी राजस्थानी भाषा में लिखने वाले कवि थे। इनकी शालिभद्र चौपई बहुत ही लोकप्रिय कृति है। "जिन राजसूरी कृति सग्रह" मे इनकी सभी रचनाये प्रकाश मे आ चुकी हैं। नैषधकाव्य पर इन्होने ३३००० श्लोक प्रमाण सस्कृत टीका की थी। जिनराजसूरि ने सवत् १६८६ मे आगरा मे बादशाह शाहजहाँ से भेंट की थी।

३५. दामो

ये वाचक उदयसागर के शिष्य थे। इनका पूरा नाम दयासागर था। स० १६७१ में इन्होने जालौर मे "मदन नारिंद चौपई" की रचना समाप्त की थी। यह हिन्दी भाषा का एक सुन्दर प्रेम काव्य है। इस रचना के मध्य मे रति सुन्दरी ने जो गुप्त लेख अपने प्रियतमा को भेजा था वह विशेष रूप से उल्लेखनीय है। इसका एक पद्य निम्न प्रकार है—

विरह अगि उपजी अधिक अहनिस दहैं सरीर।
साहिब देहु पसाऊ करि, दरसन रूपी नीर॥

३६. कुशललाभ

कुशललाभ राजस्थानी भाषा के उल्लेखनीय कवि थे। "ढोलामारू चौपई" आपकी बहुत ही प्रसिद्ध कृति मानी जाती है। इन्होने "ढोलामारू का दूहा" के बीच-बीच मे अपनी चौपाइया मिलाकर प्रबन्धात्मकता उत्पन्न करने का प्रयास किया था। कुशललाभ की चौपाइयो मे विरह रस मे कोई व्याघात नही पहुंचा है अपितु कथा के एक सूत्र मे बध जाने मे प्रबन्ध काव्य का आनद आया है। डा० हजारीप्रसाद द्विवेदी ने भी कुशललाभ की रचना कौशल की प्रशसा की है।

कुशललाभ मे कवित्व शक्ति गजब की थी। तीनो ही रसो मे उन्होने सकल काव्यो का निर्माण किया और साहित्य जगत मे गहरी लोकप्रियता प्राप्त की। माधवानल चौपाई इनकी शृंगाररस प्रधान रचना है। श्री पूज्यवाहण गीत, स्थूलिभद्र, छत्तीसी, तेजसार रास, स्तम्भन पार्श्वनाथ स्तवन, गौडी पार्श्वनाथ स्तवन और नवकारछद इनकी भक्ति परक रचनाये हैं। स्थूलिभद्र छत्तीसी का प्रथम पद्य देखिये—

सारद शरदचन्द्र कर निर्मल, ताके चरण कमल चित लाइकि
सुणत सतोष होई श्रवण कु, नागर चतुर सुनइ चित भाइकि
कुशललाभ मुनि आनद भरि, सुगुरुप्रसाद परम सुख पाइकि
करिहु थूलभद्र छत्तीसी, अति सुन्दर पइबध बनाइकि

३७ मानसिंह मान

ये खरतरगच्छ के उपाध्याय शिव निधान के शिष्य और सुकवि। इनके रचनाये सवत् १६७० से १६६३ तक प्राप्त होती है। इन्होने राजस्थानी एवं हिन्दी दोनो में काव्य रचनाये की थी। योग बावनी, उत्पत्ति-नाम एव भाषा

कविरस मजरी के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। अन्तिम रचना शृंगार रस प्रधान है नायक नायिका वर्णन सम्बन्धी १०६ इसमे पद्य हैं। इसके आदि और अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

सकल कला निधि वादि गज, पचानन परधान।
श्री शिव विधान पाठक चरण, प्रणमी बदे मुनि मान ॥१॥

नव अकुर जोवन भई, लाल मनोहर होइ।
कोपि सरल भूषण ग्रहै, चेष्टा मुग्धा होइ ॥२॥

अन्तिम— नारि नारि सब को कहे, किऊ नाइकासु होइ।
निज गुण मनि मति रीति धरी, मान ग्रथ अब लोइ।

३८. उदयराज

उदयराज खरतगच्छीय साधु थे। मिश्रबन्धु विनोद मे इनके आश्रयदाता का नाम महाराजा रायसिह लिखा है[1] लेकिन भजन छत्तीसी मे आश्रयदाता जोधपुर के महाराजा उदयसिंह थे ऐसा स्पष्ट होता है। श्री अगरचन्द नाहटा ने भी इसी मत को माना है।[2]

भजन छत्तीसी मे कवि ने लिखा है कि उन्होने इसे सवत् १६६७ मे पूर्ण किया था जब वे ३६ वर्ष के थे।[3] इनके पिता का नाम भद्रसार, माता का नाम हरणा, भ्राता का नाम सूरचन्द्र, पत्नि का नाम पुरवणि, पुत्र का नाम सूदन और मित्र का नाम रत्नाकर था।[4]

---

१ मिश्रबन्धु विनोद प्रथम भाग पृष्ठ ३६४

२ राजस्थान में हिन्दी के हस्तलिखित ग्रन्थो की खोज—भाग—२ परिशिष्ट। पृष्ठ १४२—४३

३ सोलहसे सतसठे कीध जन भजन छत्तीसी
मोनु बरस छत्तीस हुव भनि आवइ ईसी

४ समपिता भद्रसार जनम समये हरखा उर।
समपि भ्रात सुरचन्द्र मित्र समये रयणायर ॥
समपि कलमि पूरवणि, समपि पुत्र सुदन विचायर
रूप अने अवतार ओ मो समये आपज रहण
उदैराज वूह लधौ रतौ, भव भव समये मह महण
भजन छत्तीसी पद्य ३२

इनकी कृतियो में गुणबावनी, भजन छत्तीसी, चौबीस जिन सवैय्या, मन प्रशसा दोहा, एव वैद्य विरहिणी प्रबन्ध के नाम उल्लेखनीय है। इनको कविताओं में सरसता एव सरलता है तथा पाठक को आकर्षण करने की शक्ति है। भजन छत्तीसी का एक पद्य देखिये—

प्रीति प्राय परजले प्रीति अवरा पर जालै
प्रीति गोत्र गालवे प्रीति सुध बश बिटाले।
प्रीति काज घर नारि छेद दे छोरु छोडै।
प्रीति लाज परिहरै प्रीति पर खडे पाडै।
धन धरै देत दुख अग मे, अभाव भर लै अजरो जरै
उदेराज कहे सुणि आतमा, इसी प्रीति जिणऊं करै।

३९. श्रीसार

श्रीसार खतरगच्छीय क्षेमकीर्ति शाखा के श्री रत्नहर्ष के शिष्य थे। ये हिन्दी के अच्छे कवि एव सफल गद्य लेखक थे। इनका समय १७वीं शताब्दी का अन्तिम चरण है। अब तक आपकी तीस से भी अधिक कृतिया प्राप्त हो चुकी हैं। कवि की और भी रचनाओ की खोज आवश्यक है।

४० गणि महानन्द

गणि महानन्द के गुरु का नाम विद्याहर्ष था जो तपागच्छ शाखा के हीरविजयसूरी की परम्परा से सम्बन्धित थे। इनकी एकमात्र रचना अजना सुन्दरी रास प्राप्त हुई है जिसे कवि ने संवत् १६६१ मे रायपुर नगर मे समाप्त की थी। इसकी एक पाण्डुलिपि जैन सिद्धान्त भवन आरा में सग्रहित है। एक वर्णन देखिये जिसमे अजना सखियो के साथ खेलने का वर्णन किया गया है—

फूलिय वनह बनमालीय वालीय करइ रे टकोल।
करि कुकुम रग रोलीय घोलिय झकमझोल॥
खेलइ खल खडो क्लई, मोकली महीयर सात।
अजना सुन्दरी सुन्दरी मजरी गुही करी ठान॥५४॥

४१. सहजकीर्ति

सहजकीर्ति राजस्थानी भाषा के कवि थे। उनका सागानेर निवास स्थान था तथा खरतरगच्छ की क्षेम शाखा के साधु थे। आचार्य हेमनन्दन के शिष्य थे। इनकी गुरु परम्परा में जिनसागर, रत्नसागर, रत्नहर्ष एव हेमनन्दन के नाम

उल्लेखनीय है। राजस्थान इनका प्रमुख कार्यक्षेत्र माना जाता है। इनके द्वारा निबद्ध रचनाओं में प्रीति छत्तीसी, शत्रुजय, महात्म्यरास, सुदर्शन श्रेष्ठिरास, जिनराज सूरि गीत, जैसलमेर चैत्य प्रवाडी, कलावती रास (१६६७), व्यसन छत्तीसी (१६६८), देवराज बच्छराज चौपई (१६७२), अनेक शास्त्र समुच्चय, पार्श्वनाथ महात्म्य काव्य, वैराग्य शतक आदि के नाम उल्लेखनीय है।

सहजकीर्ति की कितनी ही रचनायें दिगम्बर शास्त्र भंडारो मे भी उपलब्ध होती है जिनमे चउबीस जिनगणधर वर्णन, पार्श्वभजन बीस तीर्थ कर स्तुति आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। सहजकीर्ति का निश्चित समय तो मालूम नही हो सका लेकिन इनकी अधिकाश रचनाये १७वी शताब्दी के तृतीय चरण की प्राप्त होती हैं। कवि की भाषा का एक उदाहरण निम्न प्रकार है—

केवल कमलाकर सुर, कोमल वचन विलास।
कवियण कमल दिवाकर, पणमिय फलविधि पास।
सुर नर किद्धर वर भमर, सुन चरण कज जास।
सरल वचन कर सरसती, नमीयइ सोहाग वास।
जासु पसायइ कवि लहइ, कविजन मई जस वास।
हस गमणि सा भारती, देउ प्रभू वचन विलास॥

—सुदर्शन श्रेष्ठिरास

४२. हीरानन्द मुकीम

हीरानन्द मुकीम आगरा के धनाढ्य श्रावक थे। शाहजादा सलीम से उनका विशेष सम्बन्ध था। ये जौहरी थे। यात्रा सघ निकालने मे इन्हे विशेष रुचि थी। कविवर बनारसीदास ने भी अपने अर्द्ध कथानक मे इनके सम्मेदशिखर यात्रा सघ का उल्लेख किया है। श्री अगरचन्द नाहटा के अनुसार 'वीर विजय सम्मेद शिखर चैत्य परिपाटी" मे यात्रा सघो का वर्णन दिया हुआ है। जिसमे साह हीरानन्द के सघ का भी वर्णन आया है। सघ मे हाथी, घोडे, रथ, पैदल और तुमकदार भी थे। सघ का स्थान स्थान पर स्वागत होता था।

हीरानन्द स्वय कवि भी थे। इनके द्वारा लिखी हुई "अध्यात्म बावनी" हिन्दी की एक अच्छी कृति मानी जाती है। बावनी की रचना सवत् १६६८ आषाढ सुदी ५ है बावनी का प्रथम एव अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

ऊंकार मरु पुरुष ईह अलप अगोचर
अतरज्ञान विचारि पार पावई नहि को नर

ध्यान मूल मनि जाणि आणि अंतरि हहरावउ।
आतम तत्त् अनूप रूप तसु ततखिण पावउ।।
इम कहइ हीरानन्द संघपति अमल अटल इह ध्यान थिरि।
सुत्र सुरति सहित मन मइ धरउ भुगति मुगति दायक पवर।।१।।

अंतिम पद्य—

मंगल करउ जिन पास आस पूरण कलि सुरतर।
मगल करउ जिन पास दास जाके सब सुर नर।
मगल करउ जिन पास जास पय सेवई सुरपति
मंगल करउ जिन पास तास पय पूजइ दिनपति
मुनिराज कहई मगल करउ, जिन सपरिवार श्री कान्ह सुख
वावन्न बरन बहु फल करहु सघपति हीरानद तुब।।५७।।

४३ हेम विजय

हेमविजय आचार्य हीरविजयसूरि के प्रशिष्य एव विजयसेनसूरि के शिष्य थे। सवत् १६३९ मे हीरविजयसूरी अकबर द्वारा आमत्रित किये गये थे। इसी तरह विजयसेनसूरि भी सम्राट अकबर द्वारा आमत्रित थे। इस तरह हेमविजय को अच्छी गुरु परम्परा मिली थी। हेमविजयसूरि हिन्दी के भी अच्छे विद्वान थे। इनके द्वारा निर्मित कितने ही पद मिलते हैं इनमे भी नेमिनाथ के पद उल्लेखनीय है एक पद देखिये—

कहि राजमती सुमती सखियान कूं एक खिनेक खरी रहुरे।
सखिरी मगिरि अगुरी मुही वाहि करति बहुत इसे निहुरे।
अबही तबही कबही जबही यदुराय कूं जाय इसी कहुरे।
मुनि हेम के साहिब नेमजी हो, अब तोरन तें तुम्ह क्यू बहुरे।

४४. पदमराज

"अभयकुमार प्रबन्ध" पदमराज कृत हिन्दी काव्य है जिसमें अभयकुमार के जीवन पर प्रकाश डाला गया है। पदमराज खरतरगच्छ के आचार्य जिनहस के प्रशिष्य एव पुण्यसागर के शिष्य थे। जैसलमेर नगर मे इसकी रचना समाप्त हुई थी। प्रबन्ध का रचना काल सवत १६५० है। प्रबन्ध का अन्तिम पद्य देखिये—

सवत सोलहसइ पचासि जैसलमेरु नगर उलासि।
खरतरगच्छ नायक जिन हस तस्य सीस गुणवंत संस।
श्री पुण्यसागर पाठक सीस, पदमराज पभणइ सुजगीस।
जुग प्रधान जिनचन्द मुणिद विजयमान निरुपम आनन्द।
भणइ गुणइ जे चरित महत, रिद्धि सिद्धि सुख ते पामन्ति।

भट्टारक रत्नकीर्ति

[४६ [

भट्टारक रत्नकीर्ति धर्म गुरु थे । उपदेश देना, विधि विधान कराना एवं संघ का सचालन करना जैसे उनके प्रमुख कार्य थे [1] । लेकिन सबसे अधिक विशेषता उनकी काव्य शक्ति थी । वे गुजरात प्रदेश के रहने वाले थे । गुजराती उनकी मातृभाषा थी । लेकिन हिन्दी मे उन्होने भक्ति परक गीत लिखे और तत्कालीन समाज मे जिन भक्ति के प्रति आकर्षण पैदा किया । रत्नकीर्ति का जन्म गुजरात प्रान्त मे घोघा नगर मे हुआ था । उनके पिता हूंबड जातीय श्रेष्ठी देवीदास थे [2] । माता का नाम सहजलदे था । इनके जन्म के समय के सम्बन्ध मे कोई जानकारी नही मिलती लेकिन इतना अवश्य है कि माता ने ऐसे उत्तम पुत्र को पाकर अपने आप को धन्य माना था । पुत्र जन्म पर घर मे ही नही पूरे नगर मे उत्सव आयोजित किये गये थे और माता-पिता भविष्य के सुनहले स्वप्न देखने लगे थे । बालक बडा होनहार था । इसलिए उसको पढने लिखने मे देर नही लगी और थोडे ही समय मे उसने प्राकृत एवं सस्कृत का अध्ययन कर लिया । गुजराती उनकी मातृभाषा थी और हिन्दी उसने सहज रूप मे सीख ली थी । थोडे ही समय मे वह अपनी बुद्धि चातुर्य एव विनयशीलता के कारण सबका प्रिय बन गया ।

सवत् १६३० मे अभयनन्दि भट्टारक गादी पर विराजमान थे । अभयनन्दि आचार्य कुन्दकुन्द की परम्परा मे होने वाली मूलसघ, सरस्वति समाज एव बलात्कारगण शाखा मे होने वाले भट्टारक लक्ष्मीचन्द के प्रशिष्य एव अभयनन्दि के शिष्य थे । अभयनन्दि का उस समय काफी प्रभाव था और वे दिगम्बर गच्छ के शिरोमणि थे । गुणो के सागर एव विद्या के केन्द्र थे । भट्टारक अभयनन्दि का जब बालक रत्नकीर्ति की बुद्धि के सम्बन्ध मे जानकारी मिली तो वे उसको अपना शिष्य बनाने के लिए आतुर हो गये । एक दिन अकस्मात ही जब अभयनन्दि का घोघा नगर मे विहार हुआ तो वे बालक को देखते ही बडे प्रसन्न हुए और उसकी बुद्धि एव वाकचातुर्य से प्रभावित होकर उसे अपना शिष्य बना लिया ।

---

१. राजस्थान के जैन सन्त-व्यक्तित्व एवं कृतित्व–पृष्ठ संख्या १२७ से १३४

२ हुंबड वंशे विबुध विख्यात रे, मात सेहजलदे देवीदास तात रे ।
कुंवर कलानिधि कोमल काय रे, पद पूजे जेम पातक पलाय रे ।।

यद्यपि रत्नकीर्ति ने पहले शास्त्रों का अध्ययन कर रखा था लेकिन भट्टारक अभयनन्दि इससे संतुष्ट नहीं हुए और पुनः उसे अपने पास रखकर सिद्धान्त, काव्य व्याकरण, ज्योतिष एव आयुर्वेद विषयों के ग्रथों का अध्ययन करवाया। बालक व्युत्पन्नमति था इसलिये शीघ्र ही उसने ग्रंथों पर अधिकार पा लिया। अध्ययन समाप्त होने के पश्चात् अभयनन्दि ने उसे अपना पट्ट शिष्य घोषित कर दिया। बत्तीस लक्षणों एव बहत्तर कलाओ से सम्पन्न विद्वान युवक को कौन अपना शिष्य बनाना नही चाहेगा।

सवत १६३० के दक्षिण प्रान्त के जालणा नगर में एक विशेष समारोह आयोजित किया गया। समारोह के आयोजक थे सघपति पाक साह तथा सघवणि रपाई तथा उनके पुत्र सघवी आसवा एव सघवी रामाजी जो जाति से बघेरवाल थे। समारोह में भ अभयनन्दि ने सवत् १६३० वैशाख सुदि ३ के शुभ दिन भट्टारक पद पर रत्नकीर्ति का पट्टाभिषेक कर दि।। उसका नाम रत्नकीर्ति रखा गया। इस पद पर वे सवत १६५६ तक रहे। भट्टारक पट्टाभिषेक के समय वे सिद्धान्त ग्रथो के परम वक्ता थे तथा आगम काव्य, पुराण, तर्क शास्त्र न्याय शास्त्र, छद शास्त्र, नाटक आदि ग्रथो पर वे अच्छा प्रवचन करते थे।

आकर्षक व्यक्तित्व

सत रत्नकीर्ति के सम्बन्ध मे अनेक पद मिलते है जिनमे उनकी सुन्दरता, उनकी विद्वत्ता एव स्वभाव के विस्तृत वर्णन किये गये हैं। इन पदो के रचयिता हैं गणेश जो उनके शिष्यो मे से एक थे। ये पद उस समय लिखे गये थे जब वे विहार करते थे। रत्नकीर्ति की सुन्दरता का वर्णन करते हुए कवि गणेश लिखते हैं उनकी आखे कमल के समान थी, उनका शरीर फूल के समान कोमल था जिसमे से करुणा टपकती थी। वे पापो के नाशक थे। वे सकल शास्त्रो के ज्ञाता थे और अपने प्रवचनो को इतना अधिक सरस बना देते थे कि जिसको सुनकर सभी श्रोता गद्-गद् हो जाते थे। कवि ने उन्हे गोतम गणधर की उपमा दी है। इसी तरह एक दूसरे पद में उनकी सुन्दरता का व्याख्यान करते हुए गणेश कवि लिखते हैं कि उनकी काति चन्द्रमा के समान थी। उन की दत पक्ति दाडम के समान थी। उनकी वाणी से मधुर रस टपकता था। उनके अधरोष्ठ बिम्ब फल के समान थे। उनके हाथ अत्यधिक कोमल थे तथा हृदय विशाल था। वे पाचो महाव्रतो के धारी, पाच समिति एवं तीन गुप्ति के पालक थे। उनका उदय पृथ्वी पर अभयकुमार के रूप मे हुआ था वे दिगम्बर

आगम काव्य पुराण सुलक्षण, तर्क न्याय गुरु जाणे जी।
छद नाटिका पिंगल सिद्धान्त, पृथक पृथक वखाणे जी।।
गीत/रजि० सं० ९/पृष्ठ ६६–६७

धर्म के शृ गार स्वरूप थे। उन्होंने कामदेव पर बालकपने से ही विजय प्राप्त कर ली थी। वे अत्यधिक विनयी, विवेकी, मानव थे और दान देने मे उन्होंने देवताओं को भी पीछे छोड दिया था। विद्वत्ता में वे अकलंक निष्कलक एव गोवर्धन के समान थे। कवि ने लिखा है ऐसे महान सत को पाकर कौन समाज गौरवान्वित नहीं होगा। एक अन्य पद मे कवि गणेश ने लिखा है कि वे गोमटसार के महान ज्ञाता थे और अभयकुमार के समान व्युत्पन्न मति थे। उनके दर्शन मात्र से ही विपतियां स्वयमेव दूर भाग जाया करती थी।

विहार

रत्नकीर्ति २७ वर्ष तक भट्टारक रहे। इस अवधि मे उन्होने सारे देश में विहार करके जैन धर्म एव सस्कृति तथा साहित्य का खूब प्रचार प्रसार किया। उनका मुख्य कार्यक्षेत्र गुजरात एव राजस्थान का बागड प्रदेश था। बारडोली मे उनकी भट्टारक गादी थी इसलिये उन्हे बारडोली का सत भी कहा जाता है। उनकी गादी की लोकप्रियता आसमान को छूने लगी थी इसलिये उन्हे स्थान-स्थान से सादर निमन्त्रण मिलते थे। वे भी उन स्थानो पर विहार करके अपने भक्तो की बात रखते थे। वे जहा भी जाते सारा समाज उनका पलक पावडे बिछाकर स्वागत करता और उनके मुख से धर्म प्रवचन सुनकर कृत कृत्य हो जाता। उनके विहार के सबध मे लिखे हुए कितने ही गीत मिलने है जिनमे उनके स्वागत के लिये जन भावनाओ को उभारा गया है। यहा ऐसा एक पद दिया जा रहा है—

सखी री श्रीरत्नकीरति जयकारी
अभयनद पाट उदयो दिनकर, पच महाव्रत धारी।
सास्त्रसिधात पुराण ए जो सो तर्क वितर्क विचारी।
गोमटसार सगीत सिरोमणी, जाणी गोयम अवतारी।
साहा देवदास केरो सुत सुखकर सेजलदे उर अवतारी।
गणेश कहे तुम्हे वदो रे भवियण कुमति कुसग निवारी॥

इसी तरह के एक दूसरे पद मे और भी सुन्दर ढग से रत्नकीर्ति के व्यक्तित्व को उभारा गया है जिसके अनुसार ७२ कलाओ से युक्त, चन्द्रमा के समान मुख वाले गच्छ नायक, रत्नकीर्ति विशाल पाडित्य के धनी हैं। जिन्होंने मिथ्यात्वियो के मत का मर्दन किया है तथा वाद विवाद मे अपने आपको सिह के समान सिद्ध किया है। सरस्वती जिनके मुख मे बिराजती है। वह मान सरोवर के हस के समान, नभ मडल मे चन्द्रमा के समान सम्यक चरित्र के धारी, तथा जैनधर्म के मर्मज्ञ, जालणा-पुर मे प्रसिद्धि प्राप्त, मेघावी, सघवी तोला, आसवा, मली के आराध्य ऐसे भट्टारक

रत्नकीर्ति का जोरदार स्वागत के लिये कवि गणेश जन सामान्य को प्रेरित करता है।[1]

एक ग्रन्य पद में भट्टारक रत्नकीर्ति खान मलिक द्वारा सम्मानित हुए थे ऐसा भी उल्लेख मिलता है।[2] रत्नकीर्ति पोरबन्दर गये। घोघा नगर में तो वे आते ही रहते थे। बारडोली उनका केन्द्र था। बागड प्रदेश के सागवाडा गलियाकोट एव बासवाडा ग्रादि मे भी बराबर जाते रहते थे।

f

प्रतिष्ठा वधान

रत्नकीर्ति ने कितने ही विधान एव प्रतिष्ठाए सम्पन्न करवायी थी। पचकल्याणको मे वे स्वय प्रतिष्ठाचार्य बनते ग्रौर प्रतिष्ठाग्रो का सचालन करते थे। उनके द्वारा सम्पन्न तीन प्रतिष्ठाग्रो का वर्णन मिलता है जिनके माध्यम से वे तत्कालीन समाज मे धार्मिक भावनायें जाग्रत किया करते थे। सबसे पहिले उन्होने दादूनगर में सवत १६३६ मे पचकल्याणक प्रतिष्ठा सम्पन्न करवायी।[3]

सवत १६४३ मे बारडोली नगर मे ही बिम्ब प्रतिष्ठा का ग्रायोजन सम्पन्न करवाया। नगर मेचारो प्रकार के सघ का मिलन हुग्रा। भट्टारक रत्नकीर्ति के परामर्शानुसार ककोली। (निमन्त्रण पत्र) लिखे गये जिन्हे गावो मे एव नगरो मे भेजा गया। विशाल मडप बनाया गया तथा प्रतिष्ठा महोत्सव मे ग्र कुरारोपण, जलयात्रा ग्रादि विविध क्रियाए सम्पन्न हुई। पच कल्याणक प्रतिष्ठा समाप्ति पर प्रतिष्ठाकारको के रत्नकीर्ति ने तिलक किया उनके साथ तेजबाई, जैमल, मेघाई,

---

१ कला बहोतरी कोडामणो रे, कमल वदन करुणाल रे।
गछ नायक गुण ग्रागलो रे, रत्नकीरति विबुध विशाल रे।।
ग्रावो रे मामिनी गजगामिनी रे, स्वामि जो वाणि विख्यात रे।
ग्रभयनद पद कंज दिनकर रे, धन एहना मात ने तात रे।।

२ लक्षण बत्तीस सकल ग्र गि बहोतरि, खांन मलिक दिये मानजे।
गोरगीत पृष्ठ संख्या १९५।

३ मांगसीर सुदी पचमी दिने, कुकम चित्रि लखाय।
देस देस पठावे पडत, आवे सज्ज वृद।
बिंब प्रतिष्ठा जोव जइये पुण्य तस वर कंद।।

भानेज गोपाल, बेजलदे, मानबाई बहिन आदि सभी थे । यह प्रतिष्ठा संवत १६४३ वैशाख बुदी पञ्चमी गुरुवार के शुभ दिन समाप्त हुई थी ।[१]

बलसाड नगर मे फिर उन्होने पच कल्याणक प्रतिष्ठा सम्पन्न कराई । यह प्रतिष्ठा हूबड वशीय मल्लिदास ने कराई थी । उसकी पत्नी का नाम राजबाई था । उसके जब पुत्र जन्म हुआ तब मल्लिदास ने दान आदि मे खुब पैसा लगाया तथा एक पच कल्याणक प्रतिष्ठा का आयोजन किया । मगसिर सुदी पचमी के दिन कु कुम पत्रिका लिखी गई ।

चारो ओर गावो मे पडितो को भेजा गया । पत्रिका मे लिखा गया कि जो भी पच कल्याणक प्रतिष्ठा को देखेगा उसे महान पुण्य को प्राप्ति होगी ।[१] पन्च कल्याणक प्रतिष्ठा की पूरी विधि सम्पन्न की गयी । अ कुरारोपण, वस्तु विधान नादी मडल, होम, जलयात्रा आदि विधान किये गये । मडल मे भट्टारक रत्नकीर्ति सिंहासन पर विराजमान रहते थे । विविध वाद्य यत्र बजाये गये थे । सघपति मल्लिदास, सघवेण मोहनदे, राजबाई आदि की प्रसन्नता की सीमा नही रही । अन्त मे कलशाभिषेक सम्पन्न हुए तब प्रतिष्ठा समारोह की समाप्ति की घोषणा की गयी ।[२]

इसके पश्चात माघ सुदी एकदशी के शुभ दिन भट्टारक रत्नकीर्ति ने ब्रह्म

---

१ एणी परे सज्जन आवयाए श्रीजिन मंडप स्वार के
उत्सव सोभताए याग मडल विध सोभतिए ।
सघपूज सुखकार के, उत्सव अति घणाए
जिन उपार कु भ ढालायाए, जय जयकार सुथायके ॥
पच कल्याणक विध हवाए, श्री रत्नकीर्ति गुरुराय के ॥

२ अरे सघ मेल्या विविध देशना, साल छतीस ए ।
वैशाख बुदि एकवसी सोमवार, प्रतिष्ठा तिलक असीस ए ।
गीत पृष्ठ संख्या 65

३ श्री रत्नकीर्ति भट्टारक बचने, कंकोलि लखाई जे ।
गाँम गाँमनाँ सघ सेजवाला मे मे पाला आवे ॥
मडल रचना अति घणी उपमा, अ कोरारोपण उवार जे ।
जल यात्रा सातिक सघ पुजा, अन्न दान अपार जी ॥
सवत सोल छेहतालि, वैशाख बवि पचमी ने गुरुवार जी ।
रत्नकीर्ति गीर तिलक करे, धन्य श्री सघ जय जयकार ॥

जयसागर को आचार्य पद पर दीक्षित किया। सर्व प्रथम प्रासुक जल से स्नान कराया गया। भट्टारक रत्नकीर्ति ने उसके माथे पर तिलक किया तथा पाच महाव्रतो को अगीकार कराया गया।[६]

इस प्रकार भट्टारक रत्नकीर्ति जीवन पर्यन्त देश के विभिन्न भागो मे विहार करते रहे। वास्तव मे भट्टारक रत्नकीर्ति का युग भट्टारको का स्वर्ण युग था जब सारे देश मे उनके त्याग एव तपस्या की इतनी अधिक प्रभावना थी कि समाज का अधिकाश भाग उन पर समर्पित था। उनके आदेश को शिरोधार्य करने मे ही जीवन की उपलब्धि मान जाता था। भट्टारक सस्था भी अपने आपको साधु समाज का एक प्रतिनिधि बनने का पूरा प्रयास करती रही। समय समय पर उसने अपने को योग्य प्रमाणित किया और समाज एव सस्कृति के विकास मे पूर्ण जागरुक रहा। रत्नकीर्ति का विशाल व्यक्तित्व समाज की आशाओ का केन्द्र था।

शिष्य परिवार

रत्नकीर्ति वैसे तो अनेको शिष्यो के आचार्य थे, जीवन निर्माता थे और उनके मार्गदर्शक भी, थे लेकिन उनमे से कुमुदचन्द, ब्रह्म जयसागर, गणेश, राघव एव दामोदर के नाम विशेषत उल्लेखनीय है। इन सभी ने रत्नकीर्ति के सम्बन्ध मे पद एव गीत लिखे हैं। कुमुदचन्द्र तो रत्नकीर्ति के पश्चात भट्टारक गादी पर ही बैठे थे। वे योग्य गुरु के योग्य शिष्य थे। लेकिन गनेश ने रत्नकीर्ति के सबध मे सबसे अधिक पद एव गीत लिखे हैं। इन सबके सम्बन्ध में आगे विस्तृत प्रकाश डाला जावेगा। ऐसा लगता है कि रत्नकीर्ति के साथ उनका शिष्य परिवार भी चलता था और वह उनके प्रति अपनी भक्ति भाव प्रगट करता रहता था। रत्नकीर्ति की परम्परा के भट्टारको को छोड़कर अन्य भट्टारको के सम्बन्ध मे इस प्रकार के गीत एव पद प्रायः नही मिलते हैं।

कृतित्व

रत्नकीर्ति भक्त कवि थे। नेमिराजुल के जीवन ने उन्हे सबसे अधिक

---

३ माघ सुदी एकादसीए ए सोभन सुक्रवार के।
श्री रत्नकीर्ति सुरीवर हसा तिलक हवा जयकार के
ब्रह्म जयसागर जाणसि ए आचारज पद सार के।
जल यात्रा जन वेखताए, श्री रत्नकीर्ति यतिराय के।
पंच महाव्रत आपया ए संघ सानीध्य गुरुराय के।
मल्लिदासनी वेल

प्रभावित किया था। यही कारण है कि उनकी अधिकाश कृतियो मे ये दोनो ही आराध्य रहे है। नेमिराजुल का इस प्रकार का वर्णन अन्य किसी कवि द्वारा लिखा हुआ नही मिलता है। अब तक जितनी खोज हो सकी है उसके अनुसार कवि के ३८ पद प्राप्त हो चुके है तथा ५ अन्य लघु रचनाये है। यद्यपि ये सभी लघु कृतियाँ हैं लेकिन भाव एव विषय की दृष्टि से सभी उच्च कोटि की कृतियाँ हैं। रत्नकीर्ति सन्त थे लेकिन अपने पदो मे उन्होने विरह एव शृ गार दोनो ही का अच्छा वर्णन किया है। वे राजुल के सौन्दर्य एव उसकी तडफन से बडे प्रभावित थे। यही कारण है उनकी प्रत्येक कृति मे दोनो ही भावो की कमी नही है।

सावन का महिना विरही युवतियो के लिये असह्य माना जाता है। जब आकाश मे काले काले बादलो की घटा छा जाती है। कभी वह गरजती है तो कभी बरसती है। ऐसी प्राकृतिक वातावरण मे राजुल भी अकेली कैसे रह सकती थी। इसलिये वह भी अपने विरह को अपनी सखियो के समक्ष बहुत ही करुणामय शब्दो मे निम्न प्रकार व्यक्त करती है—

सखी री सावनी घटाई सतावे
रिमझिम बून्द बदरिया बरसत, नेमि नेरे नही आवे।
कूजत कीर कोकिला बोलत, पपीया वचन न लावे।
दादुर मोर घोर घन गरजत, इन्द्र धनुष डरावे ॥सखी॥
लेख लन्दूरी गुपति वचन को, जदुपति कू जु सुनावे
रतनकीरति प्रभु निठोर भयो, अपनो वचन बिसरावे ॥

रतनकीर्ति ने उक्त पद मे राजुल की विरही अबला का बहुत ही सही चित्रण किया है। इसमे राजुल की आत्मा बोल रही है और वह नेमि पिया के मिलन के लिये व्याकुल हो चली है। कभी कभी पति त्याग के कारण को लेकर राजुल के मन मे अन्तर्द्वन्द्व होने लगता है। पशुओ की पुकार का बहाना उसके समक्ष में नही आता और वह कहती है कि सम्भवत मुक्ति रूपी स्त्री के वरण के लिये नेमि ने राजुल को छोडी है। पशुओ की पुकार तो एक बहाना है। इसलिये वह कह उठती है कि "रत्नकीर्ति प्रभु छोडी राजुल मुगति वधु विरमाने।"

कभी कभी राजुल नेमि के घर आने का स्वप्न लेने लगती है और मन मे प्रफुल्लित हो उठती है। एक ओर नेमि हरी है तथा दूसरी ओर वह स्वय हरिवदनी है। हरि के सदृश ही उसकी दो आखे हैं तथा अधरोष्ठ भी हरिलता के रग वाले हैं। इस तरह वह अपने शरीर के सभी अगो को हरि के अंगो के समान मान बैठती है और मन मे प्रसन्न हो उठती है।

लेकिन जब उसे वास्तविक स्थिति का बोध होता है तो वह नेमि के विरह में तडपने लगती है और एक रात्रि के सहवास के लिये ही उनसे प्रार्थना करने लगती है। वह कहती है कि प्रातः होने पर चाहे वे दीक्षा स्वीकार करलें लेकिन एक रात्रि को कम से कम उसके साथ व्यतीत करने पर वह अपने जीवन को धन्य समझ लेगी।

नेम तुम आवा धरिय घरे
एक रयनि रही प्रात पियारे बोहोरी चारित धरे ।।नेम।।

और जब नेमि राजुल को बार बार पुकार पर भी नही आते हैं तो राजुल भी रुठने का बहाना करती है क्योकि पता नही रुठने से ही नेमि आ जावे इसलिये वह नेमि के पास अपना सन्देश भेजती है कि न वह हाथ मे मेहन्दी माडेगी और न आखों मे काजल डालेगी। वह सिर का अलकार नही करेगी और न मोतियो से अपनी माग को भरेगी। उसे किसी से भी बोलना अच्छा नही लगता। वह तो नेमि के विरह मे ही तड़पती रहेगी और उनकी दासी बनकर रहना चाहेगी।

न हाथे मडन करू कजरा नेन भरू
होउ रे वेरागन नेम की चेरी।
सीस न मागन देउ माग मोती न लेउ।
अब पोर हू तेरे गुनकी चेरी।

नेमि के विरह मे राजुल पागल हो जाती है इसीलिये कभी वह अपनी सजनी से पूछती है तो कभी चन्द्रमा से बात करने लगती है। कभी वह कामदेव को उल्हाना देती है तो कभी वह जलधर से गर्जना नही करने की प्रार्थना करती है। बडा दर्द भरा है कवि के गीत मे। राजुल के हृदयगत भावो को उभारने मे कवि पूर्णत सफल हुआ है।

सुनो मेरी सयनी धन्य या रयनी रे।
पीयु घर आवे तो जीव सुख पावे रे।।
सुनि रे विधाता चन्द सतापी रे
विरहनी बन्ध के सफेद हुआ पापी रे।
सुन रे मनमथ बतिया एक मुझ रे।

नेमि राजुल के अतिरिक्त भट्टारक रत्नकीर्ति ने भगवान राम के स्तवन के रूप मे पद्य लिखे हैं। कवि ने राम की जिस रूप मे स्तुति की है उसमें उसने

महाकवि तुलसीदास जैसी शैली को अपनाया है। ऐसा मालूम होता है कि महाकवि तुलसी एवं सूरदास ने राम एवं कृष्ण भक्ति की जो गंगा बहायी थी उससे रत्नकीर्ति अपने आपको नहीं बचा पाये और वे भी राम भक्ति में समा गये और 'वदेह जनता शरण" तथा कमल वदन करुणा निलय जैसे कुछ सुन्दर भक्ति पूर्ण पद लिखकर जन मानस को राम भक्ति में डुबो दिया। कवि का एक पद देखिये—

वदेह जनता शरण
दशरथ नदन दुर्गति निकंदन, राम नाम शिव करन ॥१॥

अमल अनत अनादि अविकल, रहित जनम जरा मरन।
अलख निरजन बुध मन रजन, सेवक जग अघव्रत हरन ॥२॥

काम रूप करुणा रस रूप्रिम, सुर नरनायक नुत चरण।
रतनकीरति कहे सेवो सुन्दर भवउदधि तारन तरन ॥३॥

रत्नकीर्ति के अब तक निम्न पद एवं कृतियां प्राप्त हो चुकी है।

१ सारंग ऊपर सारग सोहे सारगत्यासार जी
२ सुण रे नेमि सामलाया साहेब क्यो बन छोरी जाय
३ सारग सजी सारग पर आवे
४ वृषभ जिन सेवो बहु प्रकार
५ सखी री सावन घटाई सतावे
६ नेम तुम कैसे चले गिरिनार
७ कारण कोउ पीया को न जाणे
८ राजुल गेहे नेमी जाय
९ राम सताये रे मोही रावन
१० अब गिरि वरज्यो न माने मोरो
११. नेमि तुम आवो घरिय घरे
१२ राम कहे अवर जया मोही भारी
१३ दशानन वीनती कहत होइ दास
१४ वरज्यो न माने नयन निठोर
१५ झीलते कहा करयो यदुनाथ
१६ सरद की रयनि सुन्दर सोहात
१७ सुन्दरी सकल सिंगार करे गोरी
१८. कहा थे मडन करु कजरा नैन भरु
१९. सुनो मेरी सयनी धन्य या रयनी रे

२०. रथडो नीहालती रे पूछति सहे सावन नी वाट
२१. सखी को मिलावो नेम नरिंदा
२२. सखी री नेम न जानी पीर
२३. वदेहू जनता शरणं
२४. श्रीराग गावत सुर किन्नरी
२५. श्रीराग गावत सारगधरी
२६. आजू आली आये नेम नो साउरी
२७. बली बधो का न बरज्यो अपनो
२८ आजो रे सखि सामलियो वहालो रथि परि रुडि आवे रे
२९. गोखि चडी जुए राजुल राणी नेमिकुवर वर जावे रे
३०. आवो सोहामणीसुन्दरी वृन्द रे पूजिये प्रथम जिणद रे
३१ ललना समुद्रविजय सुत साम रे यदुपति नेमकुमार हो
३२ सुणि सखि राजुल कहे हैड हरप न माय लाल रे
३३. ससधर वदन सोहामणि रे, गजगामिनी गुणमाल रे
३४ वणारसी नगरी नो राजा अश्वसेन का गुणधार
३५ श्रीजिन सनमति अवतरया ना रगी रे
३६ नेम जी दयालुडारे तू तो यादव कुल सिणगार
३७ कमल वदन करुणा निलय
३८. सुदर्शन नाम के मै वारि

अन्य कृतिया

३९ महावीर गीत
४० नेमिनाथ फागु
४१ नेमिनाथ का बारहमासा
४२ सिद्ध धूल
४३, बलिभद्रनी वीनती
४४ नेमिनाथ वीनती

उक्त नामाकित पदो के अतिरिक्त रत्नकीर्ति की सबसे बडी रचना "नेमिनाथ फागु" है। इस फागु मे भगवान नेमिनाथ एव राजुल का जीवन वर्णित है। 'फागु' नामाकित इस कृति मे कवि श्रृंगार रस मे अधिक बहे है और प्रत्येक वर्णन को श्रृंगार प्रधान बना दिया है। राजुल की सुन्दरता का वर्णन करते हुए कवि ने उसे एक से एक सुन्दर उपमा मे प्रस्तुत किया हैं। ऐसी ही चार पंक्तियां पाठको के अवलोकनार्थ प्रस्तुत की जा रही है।

चन्द्र वदनी मृग लोचनी मोचनी खंजन मीन।
वासग जीत्यो वेणिह, श्रेणिय मधुकर दीन
युगल गल दीये सशि, उपमा नाशा कीर
अधर विद्रुम सम उपता, दतनू निर्मलनीर ॥

फाग मे ५८ पद्य है जिनमे राजुल नेमि का जन्म से लेकर निर्वाण तक की घटना का वर्णन किया गया है। फाग मे भी राजुल की विरह वेदना को सशक्त शब्दो में व्यक्त करने का कवि का ध्येय रहा है। और उसमे कवि पूर्णत. सफल भी रहे हैं।

फाग का रचना स्थान हासोट नगर रहा था जो गुजरात का प्रमुख सास्कृतिक नगर था। फाग की राग केदार है।[1]

बाहरमासा : भट्टारक रतनकीर्ति की यह कृति भी बडी रचनाओ मे से है। इसमे नेमि के वियोग मे राजुल के बारह महिने कैसे व्यतीत होते है इसका सुन्दर वर्णन किया गया है। कवि का बारहमासा जेठ मास से प्रारम्भ होता है तथा प्रत्येक महिने का वह विस्तृत वर्णन करता है वह राजुल के विरही जीवन के प्रत्येक मनोगत भावो को उभारना चाहता है जिसमे वह पर्याप्त रूप से सफल हुआ है।

आषाढ मास आते ही पति का विरह और भी सताने लगता है। दादुर क्या बोलते हैं मानो प्राण ही निकलते हे। घनी वर्षा होती है। अधेरी रात्रिया होती हैं तो पिय की बाट जोहते-जोहते आखो मे आसू आ जाते हैं। पपीहा पिउ पिउ बोलने लगता है तो राजुल कैसे धैर्य धारण कर सकती है। वृक्ष भी आपस मे हवा के झोको के साथ जब हिलते हे तो वे परस्पर मे बात करते हुए लगते हैं। और जब मयूर अपने पखो को फैलाकर मयूरी के मन को प्रसन्न करता है तो मन अधीर हो जाता है। जब आकाश मे बिजली झबक-झबक कर भभकने लगती है तो उसकी कोमल काया उसे कैसे सहन कर सकती है। बिना पिया के वह अकेली कैसे रह सकती है।

तिम तिम नाहनो नेह गाजे आषाढि अगाज।
दादुर बोले प्राण तोले बरसाते विशाल।

---

१ नेमि विलास उल्हास स्यु, जो गासे नर नारि
रत्नकीरति सूरीवर कहे, ते लहे सौख्य अपार॥ १॥
हासोट मांहि रचना रची, फाग राग केदार
श्री जिन जुग धन जाणये, सारदा वर दातार॥ २॥

दिवस अंधारी रातडी वलि वाट वाटे नीर
बापीयडो पिउ पिउ बोले किम धरूं मन धीर
तरु तरुणी साखा करे बाथा सांकवा सोहेत ।
रितुकाल मोर कला करी मयूरी मन मोहेत ।
श्राज सखी श्रगाल श्राव्यो उन्हईं ले मेह ।
झबक झबके बिजली किम सेहूं कोमल देह
आयो परणा पीउने पासे करे कामिनी लाड
किम रहूं हूं एकली रे आवयो आषाढ ।

भाषा —बारहमासा की भाषा पर गुजराती का अधिक प्रभाव है क्योंकि इसकी रचना भी घोघा नगर के जिनचैत्यालय मे की गई थी । घोघा नगर १६वीं शताब्दी में भट्टारको के विहार का प्रमुख केन्द्र था । वहां श्रावकों की अच्छी बस्ती थी । जिन मन्दिर था । वह सागर के किनारे पर बना हुआ था ।

शेष रचनाए —कवि की अन्य सभी रचनाए गीत रूप में हैं जिनमें नेमि राजुल प्रकरण ही प्रमुख रूप से प्रस्तुत किया गया है । उसके गीतो की आत्मा नेमि राजुल इसी तरह है जिस तरह मीरा के कृष्ण रहे थे । अन्तर इतना सा है कि एक ओर नेमिनाथ विरागी जीवन अपनाते हैं । अपनी तपस्या मे लीन हो जाते हैं और राजुल उनके लिये तडफती : अपने विरह की व्यथा सुनाती है, रोती है और अन्त मे जब नेमि तपस्वी जीवन पर ही बने रहते है तो वह स्वय भी तपस्विनी बन जाती है तथा भोगो से विरक्त होकर जगत के समक्ष एक अनोखा उदाहरण प्रस्तुत करती है । नेमि राजुल के प्रसग मे भट्टारक रत्नकीर्ति अपने गीतो के माध्यम से राजुल के मनोगत भावो का, उसकी विरही जीवन का सजीव चित्र उपस्थित करता है जबकि मीरा स्वयं ही राजुल बनकर कृष्ण के दर्शनो के लिये लालायित रहती है स्वय गाती है, नाचती है और अपने आराध्य की भक्ति मे पूर्णतः समर्पित हो जाती है ।

भट्टारक रत्नकीर्ति अपने समय के प्रमुख सन्त थे । उनका पूर्णत. विरागी जीवन था । साथ ही मे वे लेखनी के भी धनी थे । अपने भक्तो, अनुयायियो एवं प्रशासको के अतिरिक्त समस्त समाज को नेमि राजुल के प्रसग से जिन भक्ति में समर्पित करना चाहते थे । लेकिन जिन भक्ति का उद्देश्य भोगों की प्राप्ति न होकर कर्मों की निर्जरा करना था । इसलिये ये गीत १७वीं सदी में बहुत लोकप्रिय रहे और समस्त देश मे गाये जाते रहे ।

वे अपने समय के प्रथम सन्त थे जिन्होंने नेमि राजुल के प्रसंग को अपने

पदो की विषय वस्तु बनाया। उनके समय में मीरा एवं सूरदास के राधा कृष्ण से सम्बन्धित पद लोकप्रिय बन चुके थे और भक्ति रस से प्रोतप्रोत भक्त को उनके प्रतिरिक्त कुछ नही दिख रहा था भट्टारक रत्नकीर्ति ने समय की गति को पहिचाना और अपने अनुयायियो एव समाज का ध्यान आकृष्ट करने के लिये नेमि राजुल कथानक को इतना उछाला कि उसमे उन्हे पूर्ण सफलता प्राप्त हुई। राजुल के मनोगत भावो को व्यक्त करते समय वे कभी स्वाभाविकता से दूर नही हठे और जा कुछ भाव तोरण द्वार से लौटने पर अपने पति के प्रति किसी नवोढा के होने चाहिये उन्ही भावो को अपने पदो मे उतारने मे उन्हे आशातीत सफलता मिली।

भट्टारक कुमुदचन्द्र

[४७]

कुमुदचन्द्र भट्टारक रत्नकीर्ति के प्रमुख शिष्य थे। वे भट्टारक गादी पर रत्नकीर्ति के द्वारा अभिषिक्त किये गये और बागड एवं गुजरात प्रदेश के धर्माधिकारी बन गये। भ. रत्नकीर्ति ने अपनी गादी की यशोगाथा को चारो और फैला दिया था इसलिए कुमुदचन्द्र के भट्टारक बनते ही उनकी भी कीर्ति चारो और फैलने लगी। जब वे भट्टारक बने तो युवा थे। सौन्दर्य उनके चरणो को चूमता था। सरस्वती की उन पर पहिले से ही कृपा थी। उनकी वाणी मे आकर्षण था इसलिये वे जन-जन के विशेष प्रिय बन गये और समाज पर उनका पूर्ण वर्चस्व स्थापित हो गया।

कुमुदचन्द्र का जन्म गोपुर ग्राम में हुआ था। पिता का नाम सदाफल एवं माता का नाम पदमाबाई था। वे मोढवंश के सच्चे सपूत थे।[1] उनका जन्म का नाम क्या था इसका कही उल्लेख नही मिलता लेकिन वे जन्म से ही होनहार थे युवावस्था के पूर्व ही उन्होने सयम धारण कर लिया था। उन्होने इन्द्रियो के नगर को उजाड कर कामदेव रूपी नाग को सहज के ही जीत लिया।[2] अध्ययन की ओर उनकी प्रारम्भ से ही रुचि थी इसलिए वे रात दिन व्याकरण, नाटक, न्याय, आगम-शास्त्र, छद शास्त्र एव अलकारो का अध्ययन किया करते थे।[3] गोम्मटसार जैसे ग्रन्थो का उन्होने विशेष अध्ययन किया था। गुर्वावली गीतों मे कुमुदचन्द्र का निम्न प्रकार गुणगान गाया गया है—

---

१. मोढ वंश शृंगार शिरोमणि साह सदाफल तात रे
जायो जतिवर जुग जयवन्तो पदमाबाई सोहात रे।

२. बालपणे जिणे सयम लिधो, धरीयो वेराग रे।
इन्द्रिय ग्राम उजारया हेला, जीत्यो मद नाग रे।

३. अहनिशि छन्द व्याकरण नाटिक भणे
न्याय आगम अलंकार।
वादीगज केशरी बिरुद्ध धार रे
सरस्वती गच्छ सिणगार रे। गीत धर्म सागर कृत

तस पद कुमुद कुमुदचन्द्र, क्षमावत गुरु गत तंद्र ।
मुनीन्द्र चद्र समो यश उजलोए
\+ + + + + +
कुमुदचन्द्र जेहलो चादलो, रत्नकीरति पाटे गोरह भलो ।
मोढवश उदयाचल रवि, जेहना वचन बखाणे कवि ।

एक गीत मे कुमुदचन्द्र की सभी दृष्टियो से प्रशसा की गई है । गीत के अनुसार पचाचार, पाँच समिति एव तीन गुप्ति के वे पालनकर्ता थे । क्रोध कषाय पर उन्होने प्रारम्भ से ही विजय प्राप्त करली थी । कामदेव पर भी उनकी विजय अदभुत थी इसलिये वे शीलशृ गार कहलाते थे । गीत में उनकी जन्मभूमि, माता पिता एव वश सभी का गुणानुवाद किया है—यही नही उनकी शारीरिक विशेषताओ को भी गिनाया गया हैं ।

समिति गुपति आदि ए पाले चरित्र तेर प्रकार ।
क्रोध कषाय तजी रे वेगे जीत्यो रति भरतार ।
शील शृंगार सोहे रे बुद्धि उदयो प्रभवकुमार ।।
\+ + + + + +
आखडी कज पाखडी रे अधर रग रह्यो परवाल
राणी नाभली रे लाजीगई कोमल बन अतराल ।
शरीर सोहामणू रे गमने जीत्यो गज गुणगान ।
को कहे गुरु अवतारे देउ दान मान मोती भाल ।।

सवत् १६५६ वैशाख मास मे बारडोली नगर मे रत्नकीर्ति ने स्वय अपने शिष्य कुमुदचन्द्र को अपने ही हाथो से भट्टारक पद पर प्रतिष्ठापित कर दिया ।[1] यह था भट्टारक रत्नकीर्ति का त्याग । वे उसी समय से मूलसघ सरस्वती गच्छ के शृ गार कहलाने लगे । शास्त्रार्थ करने मे वे अत्यधिक चतुर थे ।[2]

विहार

कुमुदचन्द्र ने भट्टारक बनते ही गुजरात एव राजस्थान मे विहार किया और

---

१ संवत् सोल छपन्ने वैशाखे प्रगट पट्टोधर थाप्या रे ।
रत्नकीरति गोर बारडोली वर सूर मंत्र शुभ आप्या रे ।।
२. मूल संघ मगढ मणि माहत सरसति गच्छ सोहावे रे ।
कुमुदचंद्र भट्टारक आगलि वादि को वादे न आवे रे ।।

अपने ओजस्वी, मधुर तथा आकर्षक वाणी से सबका हृदय जीत लिया। वे जहां भी जाते अभूतपूर्व स्वागत होता तथा समाज उनके लिये पलक पावडे बिछा देता। कुंकम छिड़का जाता तथा चौक पूर करके बधावा गाये जाते। चारों ओर भक्ति एवं गुणानुवाद का वातावरण बन जाता। उनके दर्शनमात्र से समाज अपने आपको धन्य मान लेता।[1]

कुमुदचन्द्र के एक शिष्य संयमसागर ने तो समस्त समाज से उनके स्वागत करने के लिये निम्न पद लिखा हैं:—

आवो साहेलडी रे सहू मिलि संगे
बांदो गुरु कुमुदचन्द्र ने मनि रंगे।
छंद आगम अलंकार नो जांण
चारु चितामणी प्रमुख प्रमाण।
तेर प्रकार ए चारित्र सोहे
दीठडे भवियण जन मन मोहे।
साह सदाफल जेहनो तात
धन जनम्यो पदमाबाई मात।
सरस्वती गच्छ तणो सिणगार
वेगस्युं जीतियो दुर्द्धरमार।
महीयले मोढवंसो सु विख्यात
हाथ जोडावियां वादी संघात।
जे नरनार ए गोर गुण गावे
सयमसागर कहे ते सुखी थाय॥

गनेश कवि ने भी एक कुमुदचन्द्रनी हमची लिखी है जिसमें उसने कुमुदचन्द्र के गुणों का विस्तृत वर्णन किया है। बारडोली नगर मे भट्टारक गादी स्थापित करने एवं उस पर कुमुदचन्द्र को पट्टस्थ करने में सघपति कह्नानजी,स सहस्रकरण श्री मल्लिदास एव गोपाल श्री का सबसे बडा योगदान था। हमची में कुमुदचन्द्र के पाडित्य एव विद्वत्ता की निम्न शब्दों मे प्रशसा की है

पडित पणे प्रसिद्ध प्राक्रमी वागवादिनी वर एहने
सेवो सुरतरु चिन्त्यो चिंतामरिण उपमा नहीं कहे ने रे

---

१. सुन्दरि रे सहु आवो, तम्हे कुंकमु छडो देवडावो
वास मोतिये चौक पूरावो, अमे सहु गुरु कुमुदचन्द्र ने वधावो॥

भट्टारक पद स्थापन के पश्चात् बारडोली नगर साहित्यिक, धार्मिक एवं आध्यात्मिक गतिविधियों का केन्द्र बन गया। कुमुदचन्द्र की वाणी सुनने के लिये वहां धर्म प्रेमी समाज का जमघट रहता था। कभी तीर्थ यात्रा करने वालों का संघ उनका आशीर्वाद लेने आता तो कभी कभी विभिन्न नगरों का समाज उन्हें सादर निमन्त्रण देने आता। कभी वे स्वयं ही संघ का नेतृत्व करते तथा तीर्थों की यात्रा कराने में सहयोग देते। संवत १६८२ में कुमुदचन्द्र संघ सहित घोघा नगर आये जो उनके गुरु रत्नकीर्ति का जन्म स्थान था। बारडोली वापिस लौटने पर श्रावकों ने उनका अभूतपूर्व स्वागत किया। इसी वर्ष उन्होंने गिरनार जाने वाले एक संघ का नेतृत्व किया था और उसमें अभूतपूर्व सफलता पाई थी।[1]

साहित्य सेवा

कुमुदचन्द्र बड़े भारी साहित्यिक भट्टारक थे। साहित्य सर्जना में वे अधिक विश्वास करते थे। इसलिये भट्टारक पद के कर्त्तव्य से अवकाश पाते ही वे काव्य रचना में लग जाते। इसलिये एक गीत में उन के लिये "अहनिशि छंद व्याकर्ण नाटिक भणे न्याय आगम अलंकार" लिखा गया है। कुमुदचन्द्र की अब तक जितनी रचनायें मिली हैं वे सब राजस्थानी भाषा की ही हैं। उनकी अब तक २८ छोटी बड़ी कृतियां एवं ३० से भी अधिक पद मिल चुके हैं। लेकिन शास्त्र भण्डारों की खोज पोने पर और भी रचनायें मिलने की आशा है। उनकी प्रमुख रचनाओं के नाम निम्न प्रकार है :—

१ भरत बाहुबलि छंद
२. त्रेपन क्रिया विनती
३. ऋषभ विवाहलो
४. नेमिनाथ का द्वादशमासा
५. नेमिश्वर हमची
६. त्रण्यरतिगीत
७. हिन्दोलना गीत
८. दशलक्षणि धर्म व्रत गीत
९. अठाई गीत
१०. व्यसन सातनूं गीत
११. भरतेश्वरगीत

---

१. संवत सोल ब्यासीये संवच्छर गिरनारि यात्रा कीधा।
श्री कुमुदचंद्र गुरु नामि संघपति तिलक कहूया॥
गीत धर्मसागर कृत

१२. पार्श्वनाथगीत
१३. गौतम स्वामी चौपाई
१४. सकटहर पार्श्वनाथनी विनती
१५. लोडणपार्श्वनाथनी विनती
१६. जिनवर विनती
१७. गुरुगीत
१८. आरतीगीत
१९. जन्म कल्याणक गीत
२०. अधोलडी गीत
२१. शीलगीत
२२. चिन्तामणि पार्श्वनाथ गीत
२३. दीवाली गीत
२४ चौबीस तीर्थंकर देह प्रमाण चौपाई
२५. बलभद्रनी विनती
२६. नेमिजिन गीत
२७. बणजारागीत
२८. गीत
२९. विभिन्न राग रागनियों में निमित पद

इस प्रकार कुमुदचन्द्र की जो कृतिया राजस्थान के विभिन्न शास्त्र भण्डारों में उपलब्ध हुई हैं उनका नामोल्लेख किया जा सका है। कवि की सभी रचनायें राजस्थानी भाषा मे हैं जिन पर गुजराती का पूर्ण प्रभाव है। वास्तव मे १७वीं शताब्दि मे गुजराती एव राजस्थानी भिन्न-भिन्न नही हो सकी थी। इसलिये कवि ने अपनी कृतियो में दोनों ही भाषाओं का प्रयोग किया है। इनकी रचनाओं में गीत अधिक है जिन्हे ये अपने प्रवचन के समय श्रोताओं के साथ गाते थे। नेमिनाथ के तोरण द्वार पर आकर वैराग्य धारण करने की अद्भुत घटना से वे अपने गुरु रत्नकीर्ति के समान बहुत प्रभावित थे इसलिये इन्होने भी नेमि राजुल पर कितनी ही रचनाएं एवं पद लिखे हैं उनमे नेमिनाथ बारहमासा, नेमिश्वरगीत, नेमिजिनगीत आदि के नाम उल्लेखनीय है। कवि की कुछ प्रमुख रचनाओं का परिचय निम्न प्रकार है .—

१. भरत बाहुबली छंद

भरत बाहुबलि एक खण्ड काव्य है, जिसमे मुख्यत: भरत और बाहुबलि के युद्ध का वर्णन किया गया है। भरत चक्रवर्ति को सारा भूमण्डल विजय करने के

पश्चात मालूम होता है कि अभी उनके छोटे भाई बाहुबलि ने उनकी अधीनता स्वीकार नही की है तो सम्राट भरत बाहुबलि को समझाने को दूत भेजते हैं। दूत और बहुबलि का उत्तर-प्रत्युत्तर बहुत सुन्दर हुआ है।

अन्त मे दोनो भाइयो मे युद्ध होता है, जिसमे विजय बाहुबलि की होती हैं। लेकिन विजय श्री मिलने पर भी बाहुबलि जगत से उदासीन हो जाते हैं और वैराग्य धारण कर लेते हैं। घोर तपश्चर्या करने पर भी "मैं भरत की भूमि पर खड़ा हुआ है" यह शल्य उनके मन से नही हटती। लेकिन जब स्वय सम्राट भरत उनके चरणों मे आकर गिरते हैं और वास्तविक स्थिति को प्रगट करते हैं तो उन्हे तत्काल केवल ज्ञान प्राप्त हो जाता है। पूरा का पूरा खण्ड काव्य मनोहर शब्दों में ग्रथित है। रचना के प्रारम्भ मे कवि ने जो अपनी गुरु परम्परा दी है वह निम्न प्रकार है—

पणविवि पद आदीश्वर केरा, जेह नामे छूटे भव-फेरा।
ब्रह्म सुता समरु मतिदाता, गुण गण मडित जग विख्याता॥

वंदवि गुरु विद्यानंदि सूरी, जेहनी कीर्ति रही भर पूरी।
तस पट्ट कमल दिवाकर जाणु, मल्लिभूषण गुरु गुण बखाणु॥

तस पट्टोधर पडित, लक्ष्मीचन्द महाजस महित।
अभयचन्द गुरु शीतल वायक, सेहेर वश मंडन सुखदायक॥

अभयनदि समरु मन मांहि, भव भूला बल गाडे बांहि।
तेह तणि पट्टे गुणभूषण, वदवि रत्नकीरति गत दूषण॥
भरत महिपति कृत मही रक्षण, बाहुबलि बलवत विचक्षण।

बाहुबलि पोदनपुर के राजा थे। पोदनपुर धन धन्य, बाग बगीचा तथा झीलो का नगर था। भरत का दूत जब पोदनपुर पहुचता है तो उसे चारो ओर विविध प्रकार के सरोवर, वृक्ष, लताये दिखलाई देती है। नगर के पास ही गंगा के समान निर्मल जल वाली नदी बहती है। सात-सात मजिल वाले सुन्दर महल नगर की शोभा बढ़ा रहे हैं। कुमुदचद्र ने नगर की सुन्दरता का जिस रूप में वर्णन किया है उसे पढिये—

चाल्यो दूत पयाणें रे हे तो, थोडे दिन पोयणपुरी पोहोतो।
दीठी सीम सघन कण साजित, वापी कूप तडाग बिराजित॥

कलकार जो नल जल कु डी, निर्मल नीर नदी अति ऊंडी।
विकसित कमल अमल दलपंती, कोमल कुमुद समुज्वल कंती॥

वन वाडी आराम सुरंगा, अंब कदंब उदंबर तुंगा ।
करण केतकी कमरख केली, नव नारंगी नागर वेली ।।

अगर तगर तरु तिंदुक ताला, सरल सोपारी तरल तमाला ।
बदरी बकुल मदाड बीजोरी, जाई जुई जंबु जमीरी ।।
चंदन चंपक चारउली, वर वासंती वटवर सोली ।
रायणरा जंबु सुविशाला, दाडिम दमणो द्राख रसाला ।।

फूला सुगुल्ल अमूल्ल गुलाबा, नीपनी वाली निबुक निंबा ।
कणयर कोमल लता सुरंगी, नालीयरी दीसे अति चंगी ।।
पाडल पनश पलाश महाघन, लवली लीन लवग लताघन ।

बाहुबलि के द्वारा अधीनता स्वीकार न किए जाने पर दोनों ओर की विशाल सेनायें एक दूसरे के सामने आ डटीं । लेकिन देवों और राजाओं ने दोनों भाइयों को ही चरम शरीरी जानकर यह निश्चय किया कि दोनों ओर की सेनाओं में युद्ध न होकर दोनों भाइयो मे ही जलयुद्ध नेत्रयुद्ध एवं मल्लयुद्ध हो जावे और उसमें जो जीत जावे उसे ही चक्रवर्ती मान लिया जाये । इस वर्णन को कवि के शब्दों में पढिये—

त्रण्य युद्ध त्यारे सहु बेठा, नीर नेत्र मल्लाह व परंठया ।
जो जीते ते राजा कहिये, तेहनी आण विनयसुं वहिए ।
एह विचार करीने नरवर, चल्या सहु साथे मछर भर ।
भुजा दड मन सुंड समाना, ताडगा जबारे नाना ।
हो हो कार करि ते धाया, वच्छो वच्छ ते पडया रावा ।
हक्कारे पच्चारे पाडे, वलया वलग करी ते त्राडे ।
पग पडधा पोहोवीतल बाजे, कडकडता तरुवर से भाजे ।
नाठा वनचर त्राठा कायर, छूटा मयगल फूटा सायर ।।
गड गडता गिरिवर ते पडीआ, फूल फरता फणिपति डरीआ ।
गढ गडगडीआ मन्दिर पडीआ, दिग दतीव मक्या चल चकीया ।
जन खलभली धावालक छलीया, भव-भीरु अबला कल मलीआ ।
तोपण से धरणी धवड्के, चलड डता पडता नवि चूकें ।

---

१. चाल्या मल्ल अखाड़े बलीआ, सुर नर किन्नर जोवा मलीआ ।
काछ्या काछ कसी कड तांणी, बोगड बोली बोले वाणी ।।

(२) त्रेपन क्रिया विनती

इसमें त्रेपन क्रियाओ के पालने पर प्रकाश डाला गया है। त्रेपन क्रियाओं में ८ मूलगुण, १२ व्रत, १२ तप, ११ प्रतिमा, ४ प्रकार के दान तथा ६ आवश्यकों के नाम गिनाये गये है। विनती की अन्तिम दो पक्तिया निम्न प्रकार है—

जे नर नारी गावसी ए विनती सुचग।
ते मन वांछित पामसे नित नित मगल रग।

(३) आदिनाथ विवाहलो

इसका दूसरा नाम ऋषभजिन विवाहलो भी है। कवि की "विवाहलो" बडी कृतियो मे गिना जाता है जो ११ ढालो मे पूर्ण होता है। विवाहलो नाभिराजा की नगरी-कोशल नगरी वर्णन मे प्रारम्भ होता है। नाभिराजा के मरुदेवी रानी थी जो मधुर वाणी युक्त, रूप की खान एव रूप की ही कली थी। रानी १६ स्वप्न देखती है। स्वप्न का फल पूछती है और यह जानकर प्रसन्नता से भर जाती है कि वह तीर्थंकर की माता बनने वाली है। आदिनाथ का जन्म होता है। इन्द्रो द्वारा जन्म कल्याणक मनाया जाता है। आदिनाथ बडे होते है और उनका विवाह होता है। इसी विवाह का कवि ने विस्तृत वर्णन किया है। कच्छ महाकच्छ की कन्याओ की सुन्दरता, देवताओ द्वारा विवाह की तैयारी, विवाह मे बनने वाले विविध व्यञ्जन, बारात की तैयारी, ऋषभ का घोडी पर चढना, बाद्ययन्त्रो का बजना, अनेक उत्सवो का आयोजन आदि का सुन्दर वर्णन किया गया है। अन्त मे भरत बाहुबलि आदि पुत्रो की उत्पत्ति, राज्य शासन, वैराग्य आदि का भी वर्णन किया गया है।

प्रस्तुत रचना तत्कालीन सामाजिक रीति रिवाजो की प्रतीक है। कवि ने प्रत्येक रीति रिवाज का बहुत ही सुन्दर वर्णन किया है। विवाह मे बनने वाले व्यञ्जनो का वर्णन देखिये—

दूध पाक चखासा करीया, सारा सकरपारा कर करीया।
मोटा मोती मोदक लावे दलिया कसमसीआ भावे।
अति सरवर सेवइया सुन्दर, आरोगे भोग पुरन्दर
श्रीसे पापड मोटा तलीया, मोरआला अति उजलीया
मीठे सरसी ये राई दोधी, मेल्हे केरो अवाणे कीधी
आध्या केर काकड स्वाद लागे, लिंबू जमता जीभे रस जागे।

विवाहलो सवत् १६७८ अषाढ शुक्ला २ सोमवार को समाप्त हुआ था। इस समय कुमुदचन्द्र घोघा नगर मे थे।

संवत सोल पच्योतारए, मासा अषाढ धनसार।
उजली बीज रलीया मणिए, अति जसो ते शनिवार
लक्ष्मीचन्द्र पाटे निरमलाए, अभयचन्द्र मुनिराय।
तस पदे अभयनन्दि गुरुए, रत्नकीरति सुभ काय
कुमुदचन्द्र मन उजलेए, घोघा नगर मझारि।

विवाहलो की पाण्डुलिपियाँ राजस्थान के विभिन्न भण्डारों में उपलब्ध होती है।

(४) नेमिनाथ का द्वादशमासा

इसमें नेमिनाथ के विरह में राजुल की तड़पन का सुन्दर वर्णन मिलता है। बाहरमासा कवि की लघु कृति है जो १४ पद्यो में पूर्ण होती है।

(५) नेमीश्वर हमची

भट्टारक रत्नकीर्ति के समान ही कुमुदचन्द्र भी नेमि राजुल की भक्ति में समर्पित थे इसलिये उन्होने भी नेमि राजुल के जीवन पर विभिन्न कृतियां एव पद लिखे है। हमची भी ऐसी ही रचना है जिसमें ८७ छन्दों में नेमिनाथ के जीवन की मुख्य घटनाओं का वर्णन किया गया है। रचना की भाषा राजस्थानी है लेकिन उस पर महाराष्ट्री का प्रभाव है। पूरी रचना अलकारो से युक्त है। हमची में राजुल की सुन्दरता, बरात की सजधज, विविध वाद्य यन्त्रो का प्रयोग, तोरण द्वार से लोटने पर राजुल का विलाप आदि घटनाओ का बहुत ही मार्मिक वर्णन मिलता है।

नेमिनाथ तोरण द्वार से लौट गये। राजुल विलाप करने लगी तथा मूर्च्छित होकर गिर पडी। माता पिता ने बहुत समझाया लेकिन राजुल ने किसी की भी नहीं सुनी। आखिर पति ही तो स्त्री के जीवन में सब कुछ हैं इसी का एक वर्णन देखिये—

बाडि बिना जिम वेलि न सोहे, अर्थ बिना जिम वाणी।
पंडित जिम सभा न सोहे, कमल बिना जिम पाणी रे ॥ ८२ ॥
राजा बिन जिम भूमि न सोहे, चंद्र बिना जिम रजनी।
पीउड बिना अबला न सोहे, सांभलि मेरी सजनी ॥ ८३ ॥

हमची की पाण्डुलिपि ऋषभदेव के भट्टारकीय शास्त्र भण्डार के एक गुटके में सग्रहीत है।

(६) अध्यर्तित गीत

यह भी विरहात्मक गीत है और राजुल की तीनो ऋतुओं में पति वियोग से होने वाली दशा का वर्णन किया गया है। इसमें मुख्यतः प्रकृति वर्णन अधिक हुआ है। लेकिन ऋतु वर्णन का आलबन राजुल ही है। शीत ऋतु आने पर राजुल कहती है कि वह बिना पिया के कैसे रहेगी—

वाजे ते शीतल वायरा, बाले ते वाहिर हार।
धूजे ते बनना पखिया, किम रहेस्ये रे बनि पिय सुकुमार के ॥ ८ ॥

इसी तरह हिम ऋतु मे निम्न सात प्रकार के साधन सुख का मूल माना गये है—

तैल तापन तुला तरुणी ताम्रपट तंबोल।
तप्ततोय ते सातमूं सुखिया मेरे हिम रिति सुख मूल के।

इस प्रकार गीत छोटा होने पर भी गागर में सागर के समान है।

(७) हिन्दोला गीत

यह गीत भी राजुल का सन्देश गीत है जिसमें वह नेमि के विरह से पीडित होकर विभिन्न सन्देश वाहकों से नेमि के पास अपना सन्देश भेजती रहती है। गीत मे कवि ने राजुल की आत्मा को निकाल कर रख दिया है राजुल कहती है—

घर वन जाल सग सहू, विरह दवानल झील।
हू हिरणी तिहा एकली, केसरि काम कराल ॥ १४ ॥
वह फिर सदेश भेजती है
भोजन तो भावे नही, भूषण करे रे सताप
जो हूं मरिस्य विलखि थई, तो तह्म लागस्ये पाप ॥ १९ ॥
पशु देखी पाछा बल्या, मनस्सु थया रे दयाल
मझ उपरि माया नही, ते तम्हेस्या रे कृपाल ॥ २० ॥
तम्हे सयम लेवा सचरया, जाण्यो पम्वो हवं मर्म।
एकस्यु रुसी एकस्यु तुसी अबलो तुम्हारी धर्म ॥ २१ ॥

गीत मे ३१ पद्य है। अन्त मे कवि ने अपने नाम का उल्लेख किया है—

ए भणता सुख पामीइ, विघन जाये सहु दुरि।
रतनकीरति पर मडणो, बोले कुमुदचन्द्र सूरि ॥ ३१ ॥

(८) दशलक्षणि धर्म व्रत गीत

इस गीत में दश लक्षण धर्मों पर सुन्दर प्रकाश डाला गया है। कवि ने गीत का प्रारम्भ निम्न प्रकार किया है—

धर्म करो ते चित उजले रे जे दस लक्षण।
स्वर्गतणा ते सुख पामीइ जिम तरीय संसार ॥१॥

(९) अठाई गीत

वर्ष में तीन बार अष्टाह्निका पर्व आता है जो कार्तिक, फागुन एवं अषाढ मास के शुक्ल पक्ष की अष्टमी से पूर्णिमा तक आठ दिन तक मनाया जाता है। प्रस्तुत गीत मे अष्टाह्निका व्रत करने की विधि एव कितने उपवास करने पर कितना फल मिलता है उसका वर्णन किया गया है। पूरा गीत १४ पद्यो का है जिसका अन्तिम भाग निम्न प्रकार है—

जे नर नारी व्रत करीये तेहने घरि आणद जी
रत्नकीरति गोर पाट-पटोधर, कुमुदचन्द्र सुरिंद जी।

(१०) व्यसन सातनूं गीत

कवि ने प्रस्तुत गीत मे मानव को सप्त व्यसनो के त्याग की सलाह दी है क्योकि जो भी प्राणी इन व्यसनो के चक्कर मे पड़ा है उसी का जीवन नष्ट हुआ है। सात व्यसन है—जुआ खेलना, मांस खाना, मदिरा पान करना, वेश्या सेवन करना, शिकार खेलना, चोरी करना, पर स्त्री सेवन करना। कवि ने पहिले ८ पद्यो मे व्यसनो की बुराई बतलाई है और फिर आगे के चार पद्यो मे उदाहरण देकर इन व्यसनो मे नही पड़ने की सलाह दी है।

परनारी संगम—म करिस्य मूरख व्यसन सातमे परनारी री सग।
हाव भाव करस्ये ते खोटी, जे हवो रग पतग।
जीव मूंके व्यसन असार, जीव छूटे तु संसार ॥

उदाहरण—चारुदत्त दुख अति घणुं पाम्यो, राज्यो वेश्या रूप।
ब्रह्मदत्त चक्री आहेडे, ते पडियो भव कूप।
जीव मूंके व्यसन असार, जीव छूटे तु ससार ॥

(११) भरतेश्वर गीत

कवि ने भरतेश्वर गीत का दूसरा नाम 'अष्ट प्रातिहार्य गीत' भी लिखा है। इसमें आदिनाथ के समवसरण की रचना एवं भगवान के अष्ट प्रातिहार्यों का वर्णन दिया हुआ है। गीत सरल एवं मधुर भाषा मे निबद्ध है। इसमें सात छन्द हैं अन्तिम छन्द निम्न प्रकार है—

भव्य जीवनने जे सबोधे, चोत्रीस अतिशयवंत।
युगला धर्म निवारण स्वामी सही मडल विचरत।
शेष कर्मने जीते जिनवर थया मुक्ति श्रीवंत।
कुमुदचन्द्र कहे श्रीजिन गाता लहिये सुख अनंत ॥७॥

(१२) पार्श्वनाथ गीत

इस गीत मे कवि ने हासोट नगर के जिन मन्दिर मे विराजमान पार्श्वनाथ स्वामी के पच कल्याणको का वर्णन किया है। गीत मे १० पद्य हैं हैं। अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

श्री रत्नकीरति गुरुने नमी, कीधा पावन पंच कल्याण।
सुरी कुमुदचन्द्र कहे जे भणे, ते पामे अमर विमान ॥१०॥

(१३) गौतम स्वामी गीत

गौतम स्वामी के नाम स्मरण के महात्म्य का वर्णन करना ही गीत रचना का प्रमुख उद्देश्य रहा है। पूरे गीत मे ८ पद्य है।

(१४) लोडण पार्श्वनाथ विनती

लाड देश के डभाई नगर मे पार्श्वनाथ स्वामी का प्रख्यात मन्दिर है। वहां की पार्श्वनाथ की जिन प्रतिमा लोडण पार्श्वनाथ के नाम से जानी जाती है। भट्टारक कुमुदचन्द्र ने एक बार अपने सघ सहित वहा की यात्रा की थी। पार्श्वनाथ स्वामी की सातिशय प्रतिमा है जिसके नाम स्मरण से ही विघ्न बाधाएं स्वतः ही दूर हो जाती है। विनती मे ३० पद्य हैं—अन्तिम तीन पद्य निम्न प्रकार हैं—

जेह ने नामे नासे शोक, सकट सघला थाये फोक।
लक्ष्मी रहे नित संगे ॥२८॥

नाम जपंता न रहे पाप, जनम मरण टाले संताप।
आवे मुगति निवास ॥२९॥
जे भर समरे लोडण नाम, ते पावे मन वंछित काम।
कुमुदचन्द्र कहे भासा ॥३०॥

(१५) आरती गीत

भगवान की आरती करने से अशुभ कर्मों का नाश होता है पुण्य की प्राप्ति होती है और अन्त में मोक्ष की उपलब्धि होती है। इन्ही भावों को लेकर यह आरती गीत निबद्ध किया गया है। इसमे ७ पद्य हैं।

सुगंध सारग दहे, पाप ते नवि रहे।
मनह वांछित लहे, कुमुदचन्द्र करो जिन आरती।

(१६) जन्म कल्याणक गीत

तीर्थंकर का जन्म होने पर देवताओं द्वारा उनका जन्माभिषेक उत्सव मनाया जाता है उसी का इसमे वर्णन किया गया है। एक पंक्ति मे सिद्धार्थनन्दन के नाम का उल्लेख करने से यह भगवान महावीर के जन्म कल्याणक का गीत लगता है। गीत में ८ पद्य हैं। प्रत्येक पद्य चार-चार पंक्तियों का है।

(१७) अन्धोलडी गीत

प्रस्तुत गीत मे बालक ऋषभदेव की प्रातःकालीन जीवन चर्या का वर्णन किया गया है। ऋषभदेव के प्रातः उठते ही अन्धोलडी की जाती है अर्थात् उनके अगो मे तेल, उबटन, केशर, चन्दन लगाया जाता है। तेल चुपडा जाता है फिर निर्मल एव स्वच्छ जल से स्नान कराया जाता है। स्नान के पश्चात् शरीर को अगोछा से पोछा जाता है फिर पीत वस्त्र पहनाये जाते है आखों में कज्जल लगाया जाता है। उसके पश्चात् नाश्ता मे दाख, बादाम, अखरोट, पिस्ता, चारोली, घेवर, फीणी, जलेबी, लड्डू आदि दिये जाते हैं।

ऋषभदेव ने नाश्ता के पश्चात् बहुत बारीक वस्त्र पहिन लिये साथ ही में कान मे कुण्डल, पाव मे घुघरडी, गले मे हार तथा हाथों मे बाजूबन्द पहिन लिये और वे सबके मन को लुभाने लगे।

गीत में १३ पद्य हैं। अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

बाजूबन्द सोहामणी राखडली मनोहार।
रुपे रतिपति जीतियो, जाये कुमुदचन्द्र बलिहार॥

(१८) शील गीत

इस गीत में कवि ने चारित्र प्रधानता पर जोर दिया है। यदि मानव असंयमी है काम वासना के अधीन होकर अनैतिक आचरण करता है तो उसके अच्छी गति कभी प्राप्त नहीं हो सकती। दूसरी स्त्रियो के साथ जीवन बिगाड़ने के लिये कवि कहता है—

जेह वो खोटो रे रग पतगनो।
तेहवो चटको रे परत्रिय सगनो
परत्रिया केरो प्रेम प्रिउडा रखे को जाणो खरो।
दिन चार रग सुरग रूअडो, पछे मरहे निरधरे।
जो घणा साथे नेह माडे छांडि ते हस्यु बातडी
इस जाणी मन करि नाहुला, परनारी साथे प्रीतडा।।

गीत मे १० ढाल एव १० त्रोटक छन्द है।

(१६) चिन्तामणि पार्श्वनाथ गीत

प्रस्तुत गीत में चिन्तामणि पार्श्वनाथ की अष्ट द्रव्य से पूजा करने के महात्म्य का वर्णन किया गया है। अष्ट द्रव्यो मे प्रत्येक द्रव्य से पूजा करने के महत्व पर भी प्रकाश डाला गया है।

जल चन्दन अक्षत वर कुसुमे, चरु दीवडलो धूपे रे।
फल रचना सू अरघ करो सखी जिम न पडो भव कूप रे

गीत मे १३ पद्य हैं। गीत के अन्त मे कवि ने अपने एव अपने गुरु दोनों के नामों का उल्लेख किया है। चिन्तामणि पार्श्वनाथ पर कवि का एक गीत और भी मिलता है।

(२०) दीवाली गीत

इस गीत मे दीपावली के अवसर पर भगवान महावीर के मोक्ष कल्याणक उत्सव मनाने के लिये प्रेरणा दी गयी है। उसी समय गौतम गणधर को कैवल्य हुआ और अपने ज्ञान के आलोक से लोकालोक को प्रकाशित किया। देवताओं ने नृत्य करके निर्वाण कल्याणक मनाया तथा मानव समाज ने घर घर में दीपक जला-कर निवाण कल्याणक के रूप मे दीपावली मनायी।

(२१) चौबीस तीर्थंकर देह प्रमाण गीत

प्रस्तुत गीत में चौबीस तीर्थंकरों के देह प्रमाण पर चार चरणों का एक एक पद्य निबद्ध किया गया है। रचना साधारण श्रेणी की है। जो २७ पद्यों में पूरी होती है। अन्तिम पद्य निम्न प्रकार है—

ए चौवेसे जिनवर नमो,
जिम संसार विषे नवि भमो।
पामो अविचल सुखनी खानि
कुमुदचन्द्र कहे मीठी वाणी ॥२७॥

(२२) वणजारा गीत

इस गीत मे जगत की नश्वरता का वर्णन किया गया है। गीत की प्रत्येक पंक्ति "वणजारा रे एह संसार विदेस, भमीय भमी तु उसनो" से समाप्त होती है। यह मनुष्य वणजारे के रूप मे यो ही संसार में भटकता रहता है। वह दिन रात पाप कमाता है इसलिये ससार बन्धन से कभी नहीं छूटने पाता।

पाप कर्या ते अनंत, जीव दया पालो नहीं।
साची न बोलियो बोल, मरम मो साबहु बोलिया ॥

गीत में विविध उपाय भी सुझाये गये हैं। गीत में 41 पद्य हैं।

पद साहित्य

छोटी बड़ी रचनाओं के अतिरिक्त कुमुदचन्द्र ने पद भी पर्याप्त संख्या में निबद्ध किये हैं। उस समय पद रचना करना भी कविगत विशेषता मानी जाती थी। कबीर, मीराबाई, सूरदास एवं तुलसीदास सभी ने अपने अपने पदों के माध्यम से भक्तिरस की जो गंगा बहाई थी वैसी ही अथवा उसी के अनुरूप कुमुदचन्द्र ने भी अपने पदों में अर्हद भक्ति की ओर जन सामान्य का ध्यान आकृष्ट किया। वे भगवान पार्श्वनाथ के बड़े भक्त थे। इसलिये अपने पदो मे भी पार्श्वनाथ भक्ति की गंगा बहाई। वे कहते हैं कि उन्होने आज भगवान पार्श्व के दर्शन किये हैं। उनका शरीर सावला है, सुन्दर मूर्तिमान है तथा सिर पर सर्प सुशोभित है। वे कमठ के मद को तोड़ने वाले हैं तथा चकोर रूपी संसार के लिये वे चन्द्रमा के समान हैं। पाप रूपी अन्धकार को नष्ट कर प्रकाश करने वाले हैं तथा सूर्य के समान उदित होने वाले हैं। इन्हीं भावों को कवि के शब्दों में देखिये—

आजु मैं देखे पास जिनेंदा
सावरे गात सोहमनि मूरति, शोभित शीस फर्णेदा ।।आजु।।
कमठ महामद भजन रंजन, भविक चकोर सुचंदा
पाप तमोपह भुवन प्रकाशक उदित अनूप दिनेंदा ।।आजु।।
भूविज-दिविज पति दिनुज दिनेसर सेवित पद अरविन्दा
कहत कुमुदचन्द्र होत सबे सुख देखत वामानंदा ।।आजु।।

कुमुदचन्द्र लोडण पार्श्वनाथ के बडे भक्त थे। उन्होने लोडण पार्श्वनाथ की विनती लिखने के अतिरिक्त दो पद भी लिखे हैं जिनमे लोडण पार्श्वनाथ की भक्ति करने मे अपने आपको सौभाग्यशाली माना है एक पद में "वे आज सबनि में हूं बड भागी" कहते हैं और दूसरे पद में लोडण पार्श्वनाथ के दर्शनमात्र से अपने जन्म को सफल मान लेते हैं इसलिये वे कहते हैं "जनम सफल भयो, भयो सु काजरे, तनकी तपत मेरी सब मेटी, देखत लोडण पास आज रे।'

भक्ति के रग मे रग कर वे भगवान से कहते हैं कि यदि वे दीनदयाल कहते हैं तो उन जैसे दीन को क्यो नही उबारते हैं। कवि का "जो तुम दीनदयाल कहावत" वाला पद अत्यधिक लोकप्रिय रहा तथा जन सामान्य उसे गाकर प्रभु भक्ति मे अपने आपको समर्पित करता रहा।

जब भक्तिरस मे ओतप्रोत होने पर भी विघ्नो का नाश नही होने लगा तथा न मनोगत इच्छाएं पूरी होने लगी तो भगवान को भी उलाहना देने मे वे पीछे नही रहे और उनसे स्पष्ट शब्दो मे निम्न प्रार्थना करने लगे—

प्रभु मेरे तुम कु ऐसी न चाहिये
सघन विघन घेरत सेवक कू मौन धरी किउं रहिये ।।प्रभु।।
विघन-हरन सुख-करन सबनिकु, चित चिन्तामनि कहिए
अशरण शरण अबन्धु बन्धु कृपासिन्धु को विरद निबहिये ।।प्रभु।।

जो मनुष्य भव में आकर न तो प्रभु की भक्ति करते हैं और न व्रत उपवास पूजा पाठ करते हैं तथा कोई न पुण्य का काम करते हैं लेकिन जब वे मृत्यु को प्राप्त होने लगते हैं तो हृदय मे बडा भारी पछतावा होता है और उनके मुख से निम्न शब्द निकल पडते हैं—

मैं तो नर भव बाधि गमायो
न कियो तप जप व्रत विधि सुन्दर, काम भलो न कमायो ।।मैं तो।।

विकट क्रोध तैं कपट कूर करी, निपट विषै लपटायो
निटक कुटिल शठ संगति बैठो, साधु निकट विघटायो ।।मैं तो।।

इसी पद में कवि आगे कहते हैं कि हे मानव तू दिन प्रतिदिन गांठ जोड़ता रहा और दान देने का नाम भी नहीं लिया और जब यौवन को प्राप्त हुआ तो दूसरी स्त्रियों के चक्कर में फसकर अपना समस्त जीवन ही गवां दिया । जब संसार से विदा होने लगा तो किसी ने साथ नहीं दिया और पापों की गठरिया लेकर ही जाना पड़ा तब पश्चात्ताप के अतिरिक्त शेष कुछ नहीं रहा । इन्हीं भावों को कवि के शब्दों में देखिए—

कृपण भयो कुछ दान न दीनो दिन दिन दाम मिलायो ।
जब जोवन जंजाल पडयो तब परत्रिया तनु चित लायो ।।मैं तो।।
अंत समैं कोउ संग न आवत, झूठहि पाप लगायो ।
कुमुदचन्द्र कहे चूक परी मोही, प्रभु पद जस नही गायो ।।मैं तो।।

अर्हंद भक्ति एवं पार्श्व भक्ति के अतिरिक्त भट्टारक कुमुदचन्द्र ने अपने गुरु भट्टारक रत्नकीर्ति के समान राजुल नेमि पर भी कितने ही पद निबद्ध करके राजुल की विरह भावना के व्यक्त करने में वे आगे रहे हैं । राजुल की विरह भावना को व्यक्त करते हुए वे "सखी री अब तो रह्यो नहि जात", जैसे सुन्दर पद की रचना कर डालते हैं और उसमे राजुल के मनोगत भावो का पूरा चित्र प्रस्तुत कर देते हैं । राजुल को न भूख लगती है और न प्यास सताती है तथा वह दिन प्रतिदिन मुरझाती रहती है । रात्रि को नींद नही आती है और नेमि की याद करते करते प्रातः हो जाता है । विरहावस्था में न तो चन्द्रमा अच्छा लगता है और न कमल पुष्प । यही नही मद मद चलने वाली हवा भी काटने दौड़ती हैं इन्हीं भावो को कवि के शब्दो मे देखिये—

नहि न भूख नहीं तिसु लागत, घरहि घरहि मुरझात ।
मन तो उरझी रहयो मोहन सु सेवन ही सुरझात ।।सखी।।
नाहिते नींद परती निसि वासर, होत विसुरत प्रात ।
चन्दन चन्द्र सजल नलिनी दल, मन्द मरुत न सुहात ।।

अब तक कवि के ३८ पद उपलब्ध हो चुके हैं लेकिन बागड प्रदेश के शास्त्र भण्डारों में संग्रहीत गुटको में उनका और भी पद साहित्य मिलने की संभावना है । कुमुदचन्द्र के पदों के अध्ययन से उनकी गहन साहित्य सेवा का पता चलता है । वे भट्टारक जैसे सम्मानीय एवं व्यस्त पद पर रहते हुए भी दिन रात साहित्याराधना

में लगे रहते थे और अपनी छोटी बड़ी कृतियों के माध्यम से समाज में पवित्र वातावरण बनाने में लगे रहते थे। वास्तव में उनका समस्त जीवन ही जिनवाणी की सेवा में समर्पित रहता था। उनका पद साहित्य एवं अन्य कृतियां उनके हृदय का प्रतिनिधित्व करती हैं। वे दिन रात तीर्थंकर भक्ति मे स्वयं डूबे रहते थे और अपने भक्तों को डुबोया रखते थे। वह समय ही ऐसा था। चारों ओर भक्ति ही भक्ति का वातावरण था। ऐसे समय मे कुमुदचन्द्र ने जनता की मांग को देखते हुए साहित्य सर्जना मे अपने आपको समर्पित रखा। उनका साहित्य पढ़ने से उनके हृदय की चुभन का पता लगता है। उनको सारे समाज को विभिन्न प्रकार की बुराइयों एवं दूषित वातावरण से दूर रखते हुए जीवन का विकास करना था और इसके लिये साहित्य सर्जन को ही अपना एक मात्र साधन माना। वे अपने गुरु रत्नकीर्ति से भी दो कदम आगे रहे और अनेको कृतियो की रचना करके उस समय के भट्टारको साधु सन्तो के समक्ष एक नया आदर्श उपस्थित किया।

शिष्य परिवार

वैसे तो भट्टारको के अनेक शिष्य होते थे। उनके सम्पर्क मे रहने मे ही लोग गौरव का अनुभव करते थे। लेकिन कुमुदचन्द्र ने अपने सभी शिष्यों को साहित्य सेवा का व्रत दिया और अपने समान ही साहित्य सर्जन मे लगे रहने की प्रेरणा दी। यही कारण है कि उनके शिष्यो की भी अनेक रचनाएं मिलती है। कुमुदचन्द्र के प्रमुख शिष्यो मे—अभयचन्द्र, ब्रह्मसागर, धर्मसागर, संयमसागर, जयसागर एवं गणेशसागर के नाम उल्लेखनीय हैं। इन सबने कुमुदचन्द्र के सम्बन्ध में भी कितने ही पद लिखे हैं जिससे उनके विशाल व्यक्तित्व एवं अपने गुरु के प्रति समर्पित जीवन का पता लगता है। इनके सम्बन्ध मे आगे विस्तृत रूप से प्रकाश डाला जावेगा।

विहार

गुजरात का बारडोली नगर इनका प्रमुख केन्द्र था। इसलिये इन्हे बारडोली का सन्त भी कहा जाता है। यही पर रहते हुए वे सारे देश मे अपने जीवन, त्याग एवं साधना के आधार पर लोगो को पावन सन्देश सुनाते रहते थे। वे प्रतिष्ठाओं में भी जाते थे और वहा जाकर धर्म प्रचार किया करते थे।

भट्टारक काल

कुमुदचन्द्र भट्टारक गादी पर संवत् १६५६ से १६८५ तक रहे। इन २६–३० वर्षों मे उन्होने समाज को जाग्रत रखा और सदैव साहित्य एवं धर्म प्रचार की ओर

अपना लक्ष्य रखा। वे संघ के साथ विहार करते और जन जन का हृदय सहज ही जीत लेते। वे प्रतिष्ठा—महोत्सवों, व्रत विधानों आदि में भाग लेते और तत्कालीन समाज से ऐसे आयोजनों को करते रहने की प्रेरणा देते।

भाषा

कुमुदचन्द्र की कृतियो की भाषा राजस्थानी के अधिक निकट है। लेकिन गुजरात एव बागड प्रदेश उनका मुख्य विहार स्थल होने के कारण उसमे गुजराती का पुट भी आ गया है। मराठी भाषा में भी वे लिखते थे। 'नेमीश्वर हमची' मराठी भाषा की सुन्दर रचना है। कृतियो से उनके पदों की भाषा अधिक परिस्कृत हैं और कितने ही पद तो खडी बोली में लिखे गये जैसे लगते हैं और उन्हे तुलसी, सूर और मीरा द्वारा रचित पदो के समकक्ष रखे जा सकता हैं। भाषा के साथ साथ भाव एव शैली की दृष्टि से भी कवि का पद साहित्य उल्लेखनीय है। रचनाओं में थारी, म्हारी, पाछे, बल्यो, जैसे शब्दो का प्रयोग बहुत हुआ है। इसी तरह आव्यूं, जाव्यूं, हरख्या, सूक्या जैसे क्रिया पदो की बहुलता है। कभी-कभी कवि शुद्ध राजस्थानी शब्दो का प्रयोग करता है जिसे निम्न पद्य मे देखा जा सकता है—

कातिय दिन दिवालिना सखि घरि घरि लील विलास जी
किम करु कत न आवियो, हवेस्युं करिये घरि घरि वासि जी।

नेमिनाथ बारहमासा

इसी तरह राजस्थानी भाषा का एक और पद्य देखिये—

वचन माहरु मानिये, परनारी थी रहो वेगला।
अपवाद माथे चढे मोटा रक थइये दोहिला।

शील गीत

छन्दों का प्रयोग

कुमुदचन्द्र की विविध रचनाओं से ज्ञात होता है कि वे छन्द शास्त्र के अच्छे वेत्ता थे इसलिये उन्होंने अपनी कृतियों को विभिन्न छन्दो में निबद्ध की है। कवि को सबसे अधिक त्रोटक, ढाल एवं विभिन्न राग रागनियों में काव्य रचना करना प्रिय रहा। गीत लिखना उन्हे रुचिकर लगता था इसलिये इन्होंने अधिकांश कृतियां गीतात्मकता शैली में लिखी हैं। वे अपनी प्रवचन सभाओं में इन गीतो को सुनाकर अपने भक्तों को भाव विभोर कर देते थे।

संवत् १७४८ कार्तिक शुक्ला पञ्चमी के दिन लिखित एक प्रशस्ति में भट्टारक कुमुदचन्द्र की पूर्ववर्ती एव उत्तरवर्ती भट्टारक परम्परा निम्न प्रकार दी है—

मूल सघ, सरस्वती गच्छ एव बलात्कारगण

आचार्य कुन्दकुन्द
|
भट्टारक लक्ष्मीचन्द्र
|
भट्टारक अभयचन्द्र
|
अभयनन्दि
|
रत्नकीर्ति [१६३०–१६५६]
|
कुमुदचन्द्र [१६५६–१६८५]
|
अभयचन्द्र (द्वितीय)
|
शुभचन्द्र (१७२१)
|
रत्नचन्द्र [स० १७४५]

इस प्रकार भट्टारक कुमुदचन्द्र के पश्चात संवत् १७०० के पूर्व तक भट्टारक अभयचन्द्र एव भ शुभचन्द्र और हुए। इन दोनो भट्टारको का परिचय निम्न प्रकार है—

४६ भट्टारक अभयचन्द्र

अभयचन्द्र सवत् १६८५ मे भट्टारक गादी पर विराजमान हुए। वे भट्टारक बनते समय पूर्णयुवा थे। उन्होने कामदेव के मद को चकनाचूर कर दिया था। वे विद्वना मे गौतम गणधर के समान थे। अपूर्व क्षमाशील, गभीर एव गुणो की खान थे। विद्या के वे कोष थे तथा वाद विवाद मे वे सदैव अपराजित रहते थे। प. श्रीपाल ने उनके सम्बन्ध मे अपने एक पद मे निम्न प्रकार परिचय दिया है—

चन्द्रवदनी मृग लोचनी नारि
अभयचन्द्र गछ नायक वादो, सकल सघ जयकारि।

बक्षन महामद मोडीए मुनिवर, गोयम सम गुणधारी
क्षमावतंब गम्भीर विचक्षण, गुरुयो गुण भंडारी ।।

अभयचन्द्र अपने गुरु भट्टारक कुमुदचन्द्र के योग्यतम शिष्य थे। उन्होने भट्टारक रत्नकीर्ति एव भट्टारक कुमुदचन्द्र का समय देखा था और देखी थी उनकी साहित्यिक साधना इसलिये जब वे स्वय भट्टारक बने तो उन्होने भी उसी परम्परा को जीवित रखा। बारडोली नगर मे इनका पट्टाभिषेक हुआ था। उस दिन फाल्गुण सुदी 11 सोमवार सवत् 1685 था। पाट महोत्सव मे समाज के अनेक प्रतिष्ठित व्यक्ति उपस्थित थे। इनमे सघवी नागजी, हेमजी, मेघजी, रूपजी, मालजी, भीमजी आदि के नाम उल्लेखनीय है। कविवर दामोदर ने पाट महोत्सव का निम्न शब्दो में वर्णन किया है—

बारडोली नयरि उछव कीधो, महोछव अन्त अवारी ।
सघवी नाग जी अति आणधा, हेमजी हरख अपार ।
सघवी कु वर जी कुलमडल, मेघजी महिमावत
रुपजी मालजी मनोहारु, बहु सज्जन मन मोहत ।
सघवं भीमजी गावस्यु, सुत जीवा मने उल्हास
सघवई जीवराज उनट घणो, पहोती छे मन तणी आस ।
सवत सोल पच्यासीये, फागुण सुदि एकादशी सोमवार
नेमिचन्द्रे सुर मत्रज, आप्पा वरतयो जयकार ।।

अभयचन्द्र का जन्म सवत् 1640 के लगभग हूवड वश में हुआ था। इनके पिता का नाम श्रीपाल एव माता का नाम कोडमदे था। बचपन में ही बालक अभयचन्द्र को साधुओ की मडली में रहने का सुअवसर मिल गया था। हेमजी कु वर जी इनके भाई थे। ये सम्पन्न घराने के थे। युवावस्था के पूर्व ही उन्होंने पाच महाव्रतो का पालन प्रारम्भ कर दिया था।

हूवड वशे श्रीपाल साह तात, जनम्यो रुडी रतनवे कोडमदे मात ।
लघु पणे लीधो महाव्रत भार, मनवश करी जीत्यो दुर्धर मार ।

इसी के साथ इन्होने सस्कृत प्राकृत के ग्रंथों का उच्च अध्ययन किया। न्याय शास्त्र में पारंगता प्राप्त की तथा अलंकार शास्त्र एवं नाटकों का तलस्पर्शी अध्ययन किया। इसके साथ ही अष्टसहस्री, त्रिलोकसार, गोम्मटसार जैसे ग्रन्थों का गहरा ज्ञान प्राप्त किया।

व्याकर्ण छन्द अलकार रे अष्ट सहस्त्री उदार रे
त्रिलोक गोम्मटसार के भाव हृदय धरे ॥

जब उन्होंने युवावस्था मे पदार्पण किया तो त्याग एव तपस्या के प्रभाव से उनकी मुखाकृति स्वयमेव आकर्षक बन गयी और भक्तो के लिये वे आध्यात्मिक जादूगर बन गये । इनके पचासो शिष्य बन गये उनमें गणेश, दामोदर, धर्मसागर, देवजी, रामदेवजी के नाम विशेषतः उल्लेखनीय हैं । इन शिष्यों ने भट्टारक अभयचन्द्र की अपने गीतो मे भारी प्रशसा की है । लगता है उस समय चारो ओर अभयचन्द्र का यशोगाथा फैल गयी थी । जब वे विहार करते तो इनके शिष्य जन-साधारण को एव विशेषत. महिला समाज को निम्न शब्दो मे आह्वान करते थे—

आवो रे भामिनी गज वर गमनी
वादवा अभयचन्द्र मिली मृग नयनी ।
मुगताफलनी लाल भरी जे
गच्छनायक अभयचन्द्र वधावीजे ।
कुंकुम चन्दन भरीय कचोली
मेरो पद पूजो गोरना रंग भली ॥ ३ ॥

अभयचन्द्र के सम्बन्ध मे उनके शिष्य प्रशिष्यो द्वारा कितने ही प्रशसात्मक गीत मिलते है जिनसे कितने ही नवीन तथ्यो की जानकारी मिलती है । इन्ही के शिष्य धर्मसागर ने एक गीत मे उनके यश की प्रशसा करते हुए लिखा है कि देहली के सिंहासन तक उनकी प्रशसा पहुच गयी थी और वहा भी उनका सम्मान था । चारो ओर उनका यश फैल गया था ।

दिल्ली रे सिंहासन केरो राजियो रे
गाजियो यश त्रिभुवन मन्दिरे ॥

इसी तरह उनके एक शिष्य दामोदर ने अपने एक गीत मे भक्तो से निम्न प्रकार का आग्रह किया है—

वादो वादो सखी री श्री अभयचन्द्र गोर वादो ।
मूलसघ मंडन दुरित निकदन कुमुदचन्द्र पाटि वादो ॥ १ ॥
शास्त्र सिद्धान्त पूरण ए जाण, प्रतिबोधे भवियण अनेक
सकल कला करी विश्व में रजे भंजे वादि अनेक ॥ २ ॥
हूबड वशे विख्यात वसुधा, श्रीपाल साधन तात ।
जायो जननी यती यशवतो कोडमदे धन मात ॥ ३ ॥

रतनचन्द्र पाटि कुमुदचन्द्र यति प्रेमे पूजो पाय ।
तास पाटि श्री अभयचन्द्र गोर दामोदर नित्य गुण गाय ॥ ४ ॥

भट्टारकों की वेश भूषा लाल चद्दर वाली होती थी। चद्दर को राजस्थानी मे पछेवडी कहते हैं। इसलिये जब भट्टारक अभयचन्द्र अपनी भट्टारकीय वेश भूषा में सभा में बैठते थे दो वे कितने सुन्दर एव लुभावने लगते थे इसी को धर्म सागर ने एक गीत मे छन्दो बद्ध किया है —

लाल पिछोडी अभयचन्द्र सोहे
निरखतां भवियकना मन माहे ।
आखडली कज पांखडीरे, मुखडू ते पूनिमचन्द
शुक चांचो सम नासिका रे, अधर प्रवालनां वृद रे
कठे कबू हराविया रे, हैडले सरस्वती वाल्ही
वादि सकोमल एहजीरे पिछि, हाथि रढियो ली रे

सवत् १७०६ मे भट्टारक अभयचन्द्र का सूरत नगर में विहार हुआ। उस समय उनका वहा अभूतपूर्व स्वागत हुआ। घर घर मे उत्सव आयोजित किये गये। मगल गीत गाये गये। चारो ओर आनन्द ही आनन्द छा गया। जय जय कार होने लगी। इसी एक दृश्य का "देवजी" ने एक पद मे निम्न प्रकार छन्दो बद्ध किया है—

आज आणद मन अति घणो ए, काई वरतयो जय जय कार ।
अभयचन्द्र मुनि आवयाए काई सूरत नगर मझार रे ॥
घरे घरे उछव अति घणाए, काई माननी मगल गाय रे ।
अ ग पूजा ने उवारणाए, काई कु कुम छडादे वडाय रे ।
श्लोक वखाणो गोर प्रसोभता रे, वाणी मीठी अपार साल तो ।
धर्म कथा ये माणी ने प्रतिबोध ए, कोई कुमति नो करे परिहार जी ।
सवत सतर छलोतरे काई हरिजी प्रेमजीनी पूगी आस रे ।
रामजीने श्रीपाल हरखी पाए, काई वेलजी कुअरजी मोहनदास रे ।
गौतम सम गोर सोभनो ए, काई बुधे जयो अभयकुमार रे ।
सकल कला गुण मडणो ए, काई देवजी कहे उदमो उदार रे ॥

इस तरह के और भी बीसो गीत भट्टारक अभयचन्द्र के सम्बन्ध मे उनके ईन शिष्यो द्वारा लिखे हुये मिलते हैं जिनमें उनकी भूरि भूरि प्रशसा की गई है। अभयचन्द्र का इतना अच्छा वर्णन उनके असाधारण व्यक्तित्व की ओर स्पष्ट

सकेत हैं। वे 36 वर्ष तक भट्टारक पद पर रहे और सारे प्रदेश में अपने हजारों प्रशंसको एवं भक्तो का समूह इकट्ठा कर लिया।

अभयचन्द्र के अब तक निम्न रचनायें प्राप्त हो चुकी हैं—

(१) वासपूज्यनी धमाल (२) गीत
(३) चन्दा गीत (४) सूखडी
(५) पद्मावती गीत (६) शान्तिनाथजी विनती
(७) आदीश्वरजी विनती (८) पञ्चकल्याणक गीत
(९) बलभद्र गीत (१०) लाछन गीत
(११) विभिन्न पद।

भट्टारक अभयचन्द्र की विद्वता एव शास्त्रो के ज्ञान को देखते हुए उक्त कृतिया बहुत कम है इसलिये अभी उनकी किसी बडी कृति के मिलने की अधिक सभावना है लेकिन इसके लिये बागड प्रदेश एव गुजरात के शास्त्र भण्डारो मे खोज की आवश्यकता है। इसके अतिरिक्त यह भी सभव है कि अभयचन्द्र ने साहित्य निर्माण के स्थान पर वैसे ही प्रचार प्रचार पर अधिक जोर दिया हो।

अभयचन्द्र की उक्त सभी रचनाए लघु कृतिया हैं। यद्यपि काव्यत्व भाषा एव शैली की दृष्टि से ये उच्च स्तरीय रचनाए नही है लेकिन तत्कालीन समाज की माग पर ये रचनाए लिखी गयी थी इसलिये इनमे कवि का काव्य वैभव एव सौष्ठव प्रदर्शन होने के स्थान पर प्रचार-प्रसार का अधिक लक्ष्य रहा था। कुछ प्रमुख रचनाये का सामान्य परिचय निम्न प्रकार है—

१—वासपूज्यनीधमाल

१० पद्यो मे २०वे तीर्थ कर वासुपुज्य स्वामी के कल्याणकों का वर्णन दिया गया है। धमाल मे सूरत नगर का उल्लेख है जो ममवत वहा के मन्दिर मे वासुपुज्य स्वामी की प्रतिमा स्तवन के कारण होगा।

सूरत नगर मानु जगईस, सकल सुरासर नामे शीस।
मूलसघ मण्डल मनोहर, कुमुदचन्द्र करुणा भण्डार ॥९॥
तेह पाटे उदयो वर हश, अभयचन्द्र धन हूबड वश।
ते गोर गाये एह सुभास, भणता सुणता स्वर्ग निवास ॥१०॥

२—चन्दागीत

इस गीत मे कालीदास के मेघदूत के विरही यक्ष की भाति स्वय राजुल

अपना सन्देश चन्द्रमा के माध्यम से नेमिनाथ के पास भेजती हैं। सर्वप्रथम चन्द्रमा से अपने उद्देश्य के बारे में निम्न शब्दों में वर्णन करती है—

विनय करी राजुल कहे, चन्दा वीनतडी अब धारो रे।
उज्ज्वल गिरि जई बीनवे, चन्दा जिहा छे प्राण आधार रे॥
गगने गमन ताहरुं रुवडुं, चन्दा अमिव वरषे अन्नन्त रे।
पर उपगारी तू भनो, चन्दा बलि बलि बीनवू संत रे॥

राजुल ने इसके पश्चात् भी चन्द्रमा के सामने अपनी यौवनावस्था की दुहाई दी तथा विरहग्नि का उसके सामने वर्णन किया।

विरह तणां दुख दोहिता, चदा ते किम में सहे जाय रे।
जल बिना जेम मछली, चंदा ते दुःख में जाय रे॥

राजुल अपने सन्देश वाहक से कहती है कि यदि कदाचित नेमिकुमार वापिस चले आवें तो वह उनके आगमन पर वह पूर्ण शृंगार करेगी। इस वर्णन मे कवि ने विभिन्न अंगो मे पहिने जाने वाले आभूषणो का अच्छा वर्णन किया है।

३ सूखडी

यह ३७ पदो की लघु रचना हैं, जिसमे विविध व्यजनो का उल्लेख किया किया गया है कवि को पाकशास्त्र का अच्छा ज्ञान था। "सूखडी" से तत्कालीन प्रचलित मिठाइयो एव नमकीन खाद्य सामग्री का अच्छी तरह परिचय मिलता है। शान्तिनाथ के जन्मावसर पर कितने प्रकार की मिठाइया आदि बनाई गई थी–इसी प्रसग को बतलाने के लिए इन व्यजनो का नामोल्लेख किया गया है। एक वर्णन देखिये—

जलेबी खाजला पूरी, पतासा फीणी सजूरी।
दहीपरा फीणी माहि, साकर भरी॥६॥
+ + +
सकरपारा सुहाली, तल पयडी सांवली।
थापड़ास्यू थीणु घीय, आलू जीवली॥४॥
मरकीने चादखानि, दोठ ने दही बडा सोनी।
बावर घेवर श्रीसो, अनेक बानी॥१॥

4 आदीश्वरणी विनति

इसमे आदिनाथ भगवान का स्तवन तथा पाचो कल्याणकों का वर्णन किया गया है। रचना सामान्य हैं।

इसमे आदिनाथ के पन्चकल्याणको का वर्णन किया गया है पद्य सख्या २१ है। रचना सामान्य है।

आदीश्वरनु मन्त्र कल्याणक गीत

इस प्रकार भट्टारक अभयचन्द्र ने अपनी लघु रचनाओ के माध्यम से जो महती सेवा की थी वह सदैव अभिनन्दनीय रहेगी।

५०. भट्टारक शुभचन्द्र

भट्टारक अभयचन्द्र के पश्चात् शुभचन्द्र भट्टारक गद्दी पर बैठे। सवत् १७२१ की ज्येष्ठ बुदि प्रतिपदा के दिन पोरबन्दर मे एक विशेष उत्सव किया गया और उसमे शुभचन्द्र को पूर्ण विधि के साथ भट्टारक गद्दी पर अभिषिक्त किया गया।[1] प. श्रीपाल ने शुभचन्द्र हमची लिखी है उसमे शुभचन्द्र अभिषिक्त के भट्टारक पद पर अभिषेक होने से पूर्व तक का पूरा वृतान्त दिया हुआ है।

शुभचन्द्र का जन्म गुजरात प्रदेश के जलसेन नगर में हुआ जहा गढ एवं मन्दिर थे तथा सुन्दर सुन्दर भवन थे। वही हूबड वश के शिरोमणि हीरा श्रावक थे। माणिकदे उनकी पत्नी का नाम था। बचपन से ही बालक व्युत्पन्नमति थे उसका विद्याध्ययन की ओर विशेष ध्यान था, इसलिए व्याकरण, तर्कशास्त्र, पुराण एव छन्द शास्त्र का गहरा अध्ययन किया। अष्टसहस्री जैसे कठिन ग्रन्थो को पढा। प्रारम्भ मे उसका नाम नवलराम था लेकिन ब्रह्मचर्यव्रत धारण करने पर उसका नाम सहेजसागर रखा गया और भट्टारक बनने पर वे शुभचन्द्र नाम से प्रसिद्ध हुये।[2]

शुभचन्द्र शरीर से अतीव सुन्दर थे। श्रीपाल कवि ने उनकी सुन्दरता का निम्न प्रकार वर्णन किया है—

नाशा शुक चची सम सुन्दर, अधर प्रवाली वृन्द।
रक्तवर्ण द्विज पंक्ति विराजित, निरखता आनन्द रे ।।९।।

---

1 सवो सवत सत्तर एक बीसे वली जेष्ठ बदो प्रतिपद दीवसे
श्री पोरबन्दर मोहोछव हवा, मल्या चतुविध संघ ते नवा नवा

2. हूबड़ वंश हिरणो हीरा' सम सोहे मन गो धन्य
वस मन रंजक माणिकवे शुभ जायो सुन्दर तन्न रे
बालपणे बुधिवंत विलक्षण विद्या चउद निधान।
जैनागम जिन भक्ति करें एह जिन सास्त्र बहुतान रे ।।५।।

रूपे मदन समान मनोहर, बुद्धे अभय कुमार ।
सीले सुदर्शन समान सोहे गोतम सम अवतार रे ॥१०॥

एक दिन भट्टारक अभयचन्द्र ने अपनी प्रवचन सभा में हर्षित होकर कहा कि सहेजसागर के समान कोई मुनि नहीं है। वही पट्टस्थ होने योग्य है । वह आगमों का सार भी जानता है।

इसके पश्चात सघपति प्रेमजी, हीरजी, मल्लजी, नेमीदास हूबड वंश शिरोमणी बाघजी, सघजी, रामजीनन्दन, गागजी जीवधर वर्धमान आदि सभी श्रीपुर से आये और चतुर्विध सघ के समक्ष यह महोत्सव का आयोजन किया। सघ सहित श्री जगजीवन राणा भी पाट महोत्सव मे आये तथा दक्षिण से धर्मभूषण भी ससघ सम्मिलित हुये। शुभ मुहूर्त देखकर जिन पूजा की गई। शान्ति होम विधान सम्पन्न हुआ। जलयात्रा एवं जीणमवार हुई और जेठ सुदी प्रतिपदा के दिन जय जयकार शब्दों के बीच शुभचन्द्र को पट्टस्थ विराजमान कर दिया। सूरि मन्त्र धर्मभूषण ने दिया।

---

1 एकदा अतिआनन्द बोले, अभयचन्द्र जयकार ।
सुरणयो सहु सज्जन मन रगे, पाट तरणो सुविचार रे ॥१॥
सहेज सिंधु सम नहीं को यतिवर, आगमा जाणे सार ।
पाट योग छे सुन्दर एहने, आपयो गच्छ नो भार रे ॥२॥
सघपति प्रेमजी हीरजी रे, सहेर वंश शृंगार ।
एकलमल्ल आवई अति उदयो, रत्नजी गुण भण्डार रे ॥३॥
नेमीदास निरुपम नर सोहे प्रसई अवाई वीर ।
हुम्बड़ वंश शृंगार शिरोमरिण बाघजी कंध धीर रे ॥४॥
रामजीनन्दन गांगाजी रे, जीवंधर वर्धमान ।
इत्यादिक सघपति ए साते, आवा श्रीपुर गाम रे ॥५॥
पाट महोछव मांड्यो रगे' सघ चतुर्विध लाव्या ।
सघपति श्री जगजीवन राणो सघ सहित ते आव्या ॥६॥
दक्षण देश नो गच्छपति रे, धर्मभूषण तेड़ाका ।
अति आडबर साथे साहमो करीने तव धराव्या रे ॥७॥
शुभ महूरत जोई जिन पूजा शांतिक होम विधान ।
जमणवार पुगते जल जात्रा आपे श्रीफल पान रे ॥८॥

शुभचन्द्र हमची

पट्टस्थ होने के पश्चात् इन्होंने अपने जीवन का लक्ष्य निर्धारित किया और अपने आत्म उद्धार के साथ-साथ समाज के अज्ञानान्धकार को दूर करने का बीडा उठाया और उन्हें अपने मिशन मे पर्याप्त सफलता भी मिली। उन्होंने अनेक स्थानों पर विहार किया और जन जन के श्रद्धा एवं भक्ति के पात्र बने। वे तीर्थों के वन्दना को जाते तो अपने साथ पूरे सघ को ले चलते। एक बार वे सघ के साथ मांगी तुगीगिरी की यात्रा पर गए थे और वहां आनन्द के साथ पूजा विधान सम्पन्न किये थे।

मांगीतुगी गई जिन भेरियाए, पूजा कीधा पवित्र निज गात्र।
सातिक त्रीस चोबिसि पूजा, सोभताए, जल यात्रा करी पोषे पात्र ॥८॥

जब वे नगर मे विहार करते तो उनके भक्तगण उनका गुणानुवाद करते, प्रशसा करते और स्तवन मे पदो की रचना करते। इस प्रसंग पर निर्मित एक पद देखिये—

वादो श्री शुभचन्द्र सुखकारी
अभयचन्द्र सूरि पाटे पट्टोधर, अकलक समो अवतारी।
साह मनजी कुल मडल सु दर, ज्ञानकला गुणधारि॥
माणकदे धन्य तात मनोहर, अध्यम तत्व विचारि ॥२॥
मूलसघ सरहस विचक्षण वादी विबुध मदहारी।
पच महाव्रत शीलशिरोमणि, शुद्धाचार अभरी ॥वादो॥
सोलकला शशि वदन विराजित, मनमथ मान उतारी
वाणी विनोद मिथ्यात भागे अवनी गयो उदारि
मही मडल महिमा छे मोये, कीरति जल विस्तारि
अमल विमल वाणी मम बोले, गुण गाउ नर नारि ॥वादो॥५॥

"शुभचन्द्र" के शिष्यो मे प श्रीपाल, गणेश, विद्यासागर, जयसागर, आनन्दसागर आदि के नाम विशेषत उल्लेखनीय है। "श्रीपाल" ने तो शुभचन्द्र के कितने ही पदो मे प्रसशात्मक गीत लिखे हैं–जो साहित्यिक एव ऐतिहासिक दोनो प्रकार के हैं।

भ शुभचन्द्र साहित्य निर्माण मे अत्यधिक रुचि रखते थे। यद्यपि उनकी कोई बडी रचना उपलब्ध नही हो सकी है, लेकिन जो पद साहित्य के रूप में इनकी कृतिया मिली हैं, वे इनकी साहित्य-रसिकता की ओर प्रकाश डालने वाली है। अब तक इनके निम्न पद प्राप्त हुए हैं—

१. पेखो सखी चन्द्रसम मुख चन्द्र
२. आदि पुरुष भजो आदि जिनेन्दा
३. कौन सखी सुध ल्यावे श्याम की
४. जपो जिन पार्श्वनाथ भवतार
५. पावन मति मात पद्मावति पेखता
६. प्रात समये शुभ ध्यान धरीजे
७. वासुपूज्य जिन बिनती-सुणो वासु पूज्य मेरी विनती
८. श्री सारदा स्वामिनी प्रणमि पाव, स्तवू वीर जिनेश्वर विबुधराय।
९ अज्झारा पार्श्वनाथनी वीनती

उक्त पदो एव विनतियो के अतिरिक्त अभी भ. शुभचन्द्र की और भी रचनाएं होंगी, जो किसी गुटके के पृष्ठो पर अथवा किसी शास्त्र भण्डार में स्वतन्त्र ग्रथ के रूप मे अज्ञातावस्था मे पडी हुई अपने उद्धार की बाट जोह रही होगी।

पदो मे कवि ने उत्तम भावो का रखने का प्रयास किया है ऐसा मालूम होता है कि शुभचन्द्र अपने पूर्ववर्ती कवियों के समान "नेमि-राजुल" की जीवन-घटनाओ से अत्यधिक प्रभावित थे इसलिए एक पद म उन्होने "कौन सखी सुध ल्यावे श्याम की" मार्मिक भाव भरा। इस पद से स्पष्ट है कि कवि के जीवन पर मीरा एव सूरदास के पदो का प्रभाव भी पडा है—

कौन सखी सुध ल्यावे श्याम की।
मधुरी धुनी मुखचद विराजित, राजमति गुण गावे ।।श्याम।।१।।
अ ग विभूषण मनीमय मेरे, मनोहर माननी पावे।
करो कछ तन्त मन्त मेरी सजनी, मोहि प्राणनाथ मिलावे ।।श्याम।।२।।
गज गमनी गुण मन्दिर स्यामा, मनमथ मान सतावे।
कहा अवगुन अब दीन दयाल छोरि मुगति मन भावे।
सब सखी मिली मनमोहन के ढिग, जाई कथाजु सुनावे।
सुनो प्रभु श्रीशुभचन्द्र के साहिब, कामिनी कुल क्यो लजावें ।।४।।

कवि ने अपने प्राय सभी पद भक्ति रस प्रदान लिखे हैं। उनमे विभिन्न तीर्थंकरो का स्तवन किया गया है। आदिनाथ स्तवन का एक पद है देखिये—

आदि पुरुष भजो आदि जिनेन्दा ।।टेक।।
सकल सुरासुर शेष सु व्यतर, नर खग दिनपति सेवित चदा ।।१।।

जुग आदि जिनपति भये पावन, पतित उदाहरण नाभि के नंदा ।
दीन दयाल कृपा निधि सागर, पार करो अघ-तिमिर जिनेंदा ॥२॥

केवल ग्यान थे सब कछु जानत, काहू कहू प्रभु मो मति मंदा ।
देखत दिन-दिन चरण सरण ते, विनती करत यो सूरि शुभचंदा ॥३॥

५१ भट्टारक रत्नचन्द्र

ये भट्टारक शुभचन्द्र के शिष्य थे और उनके स्वर्गवास के पश्चात् भट्टारक गादी पर बैठे थे । एक प्रशस्ति के अनुसार ये सवत् १७४८ कार्तिक शुक्ला पचमी को भट्टारक पद पर आसीन थे । प० श्रीपाल ने एक प्रभाती गीत मे भ. रत्नचन्द्र के सम्बन्ध मे निम्नगीत लिखा है जिसके अनुसार रत्नचन्द्र अत्यधिक सुन्दर एव अग प्रत्यगो से मनोहारी लगते थे । वे विद्वान थे । सिद्धान्त ग्रन्थों के पाठी थे तथा अष्टसहस्री जैसे कष्ट साध्य ग्रन्थो के पारगामी अध्येता थे । पूरा प्रभाति गीत निम्न प्रकार है —

प्रात समे समरो सुखदाय
बादीये रतनचन्द्र सूरी राय ।
रूप देखी गयो इन्द्र आवास
गमने गज हस रह्या वनवास ।
बदन देखि शशधर हवो खीण
लोचने बाजीया खज मृग मीन ।
जेहना वचन तणे भडकाये
सकल वादीश्वर निज वश थाये ।
शील असिवर करि काम विहंडे
क्रोध माया मद लोभ ने छडे
पच मिथ्यात तणा मद खडे
प्रबल पचेन्द्री महा रिपु डडे
नव नय तत्व सिद्धान्ति प्रकासे
भलीयरे श्री जिन आगम भासे
अष्टसहस्री आदि ग्रन्थ अनेक
चार जिन वेद लहे सु विवेक
श्री शुभचन्द्र पटोद्धर राय
गछपति रत्नचन्द्र नमु पाय
मण्डण मूलसघे गुरु एह
विबुध श्रीपाल कहे गुणगेह

भट्टारक रत्नचन्द्र को साहित्य रचना में विशेष रुचि थी। लेकिन अपने पूर्व गुरुओं के समान वे भी छोटी-छोटी रचनाओं के निर्माण में रुचि रखते थे। अब तक उनकी निम्न रचनाएं मिल चुकी है—

१. वृषभ गीत अपर नाम आदिनाथ गीत
२. प्रभाति
३ गीत आदिनाथ
४. बलिभद्रनु गीत
५. चिन्तामणि गीत
६. बावनगज गीत
७. गीत

(१) आदिनाथ के स्तवन में लिखा हुआ यह छो-ा सा पद है किन्तु भाव भाषा एव शैली की दृष्टि से अत्यधिक महत्वपूर्ण है। पूरा पद निम्न प्रकार है—

वृषभ जिन सेवो सुखकार।
परम निरजन भवभय भंजन ससारार्णवतार ।।वृषभ।। टेक
नाभिराय कुलमडन जिनवर जनम्या जगदाधार।
मन मोहन मरुदेवी नन्दन, सकल कला गुणधार ।।वृषभ।।
कनक कातिसम देह मनोहर, पांचसें धनुष उदार।
उज्वल रत्नचन्द्र सम कीरति विस्तरी भुवन मझार ।।वृषभ।।

(२) प्रभाति में भी भगवान आदिनाथ की ही स्तुति की गयी है। प्रभाति मे ९ अन्तरे हैं तथा वह "सुप्रात समरो जिनराज, सकल मन वाछित सपजे काज" से प्रारम्भ की गयी है।

(३) राग असावरी में निबद्ध आदिनाथ गीत भी भगवान आदिनाथ के स्तवन के रूप मे लिखा गया है। लेकिन भाव भाषा एव शैली की दृष्टि से जैसा उक्त पद है वैसा यह गीत नही लिखा जा सका। इसकी भाषा भी गुजराती प्रभावित है। गीत वर्णनात्मक है काव्यात्मक नही। अन्त मे कवि ने गोत की समाप्ति निम्न प्रकार की है—

जय जय श्री जिननाथ निरजन वाछित पूरे आस रे।
श्री शुभचन्द्र पटोद्धर व्रज दीनकर, रत्नचन्द्र कहे भासरे ।।९।।

(4) बलिभद्रनु गीत—श्री कृष्ण के बड़े भाई बलभद्र ने तुंगी पहाड़ से

निर्वाण प्राप्त किया था। इसलिये यह पहाड़ जैनो के अनुसार सिद्ध क्षेत्र की कोटि में आता है। इस क्षेत्र की भट्टारक रत्नचन्द्र ने सघ सहित संवत् १७४५ में यात्रा की थी। उसी समय यह गीत लिखागया था। इसमे ११ पद्य हैं। काव्य एवं भाषा की दृष्टि से गीत सामान्य है लेकिन वह ऐतिहासिक बन गया हैं। गीत के ऐतिहासिक स्थल वाले पद्य निम्न प्रकार हैं—

सवत सत्तर परतालीसे काई सघपति प्रबई सार रे।
सघ सहित जात्रा करी, मुख बोले जय जयकार रे।
श्री मूलसघ सोहाकरु काई गछपति गुण भण्डार रे।
रत्नचन्द्र सुरिवर कहो, काई गावो नर ने नार रे ॥१॥

(5) "चिन्तामणी पारसनाथनु गीत" भी ऐतिहासिक बन गया है। अकलेश्वर नगर में चिन्तामणि पार्श्वनाथ का मन्दिर था। भट्टारक रत्नचन्द्र उस मन्दिर के बड़े प्रशसक थे। वहा बड़े ठाट से अष्ट द्रव्य से भगवान की पूजा होती थी। पूरा गीत निम्न प्रकार है—

श्री चितामणि पूजो रे पास, वाछित पोहोचरो मनणी आस।
आवो रे भवियण सहु मली सगे, वसुविध पूज्य रे करो मन रगे।
देस मनोहर कासी रे, सोहे, नगर बनारसी जय मन मोहे ॥आवो रे॥
विश्वसेन राजा रे राज करत, ब्रह्मादेवी राणी मु प्रेम धरत।
तस कुल अंबर अभीनवोचन्द, उदयो अनोपम पास जिनेंद।
नीलवरण नव हस्त उत्तग, निरुपम काम कलाधर चग।
सुरनर खग फणी सेवित पाय, मन मवच्छर पूरण आय।
एकदा अस्थीर ससार जाणि चारित्र लीधु रे संवेग आणी।
तप बले उपनु केवल ज्ञान, लोकालोक प्रकासी रे भान।
सेष करम सहु दूर करी ने, मुगति वधुवरी प्रेम धरी ने।
दर्शन ज्ञ न रे वीर्य अनत, पाम्या सौख्य अनतानेनत।
वाछित पूरे रे पचम काले, सकट को विघन सहु टाले।
श्री अकलेश्वर नगर निवास, सघ सकल तणी पूरे रे आस।
मुनी शुभचन्द चरण ची आणी, सूरि रतनचन्द्र वदे अमृत वाणी।
आवो रे भवियण सहु मली सघे, वसुविध पूजा रे करो मन रगे।

(६) बावनगजागीत—भट्टारक रत्नचन्द्र ने संवत १६५६ मे बावनगज सिद्ध क्षेत्र की संघ सहित यात्रा की थी। इसको चूलगिरि भी कहते हैं। यहा से पाँच

करोड मुनियों ने निर्वाण प्राप्त किया। संघ में कितने ही श्रावक थे जिनमें संघवी मल्लई, अम्बाई, संघवी शांति, माणकजी, अमीचन्द, हेमचन्द, प्रेमचन्द, रामाबाई आदि के नाम उल्लेखनीय है। जब संघ राजनगर आया तो राणा मोहनसिंह ने सबका स्वागत किया। बावनगजा सिद्ध क्षेत्र पर जब संघ पहुंचा तो संघ के साथ भट्टारक रत्नचन्द्र भी चूलगिरि पर चढे। वहां सानन्द भगवान की पूजा की तथा भट्टारकजी ने संघपति के तिलक किया। उस दिन पौष सुदी ३ सोमवार था तथा संवत १७५७ था। गीत ऐतिहासिक है इसलिये पूरा गीत यहाँ दिया जा रहा दे—

श्री जिन चरण कमल नमु, सरस्वति प्रणमु पावरे।
चूलगिरि गुन वर्णउ, श्री शुभचन्द्र पसावरे ॥१॥
पवित्र चूल गिरि भेटीये
मिलियो संघ सोहामणो पुजवा बावनगज पायरे।
पाच कोड मुनि सिद्ध था, जेणो स्तवा सुर रायरे ॥२॥
कुंवरजी कुलमंडन हवा, संघीय मल्लइ अम्बाई गुणवाण रे।
तेह कुल अम्बर चांदलो, संघ विशति थोलो भाई जाणरे ॥३॥
संघवी अम्बई सुत अमरसी, माणकजी अमीचन्द जोडरे।
तेह तणा कुंवर कोडामणा, हेमचन्द प्रेमचन्द ते संघनो कोडरे ॥४॥
रामाबाई बहनी इम कहे, भाई संघतिलक जस लीजेरे।
रतनचन्द्र गुरपद नमी, संघनां काम ते उत्तम कीजे रे ॥५॥
एने वचने सज्जन हरखिया, मुरत्त लिधो गुरु पासेरे।
मार्गसीर सुदी पंचमी, गुरु श्रीसंघ पूरे आसरे ॥६॥
सनय सनय संघ चालिये, कियो मेदा ने मीलान रे।
राज पुरिनोकडोराजीयो राणो मोहणसिंघ चतुर सुजान रे ॥७॥
संघ आयो ते जाणि करि, राये सुभट भेज्यो ते निवार रे।
जात्रा करी संघ आणीयो, राजपुर नगर मझार रे ॥८॥
संघवी आवि राणांजो ने मील्या, राणा जीये दिधा घणा मान रे।
संघ भने इहां आवियो, आपे फोफल पान रे ॥९॥
जीवनदास ने राय इम कहे, तहमे जा करावो सार रे।
राय आज्ञा मस्तग धरी, संघने लेइ चाल्यो ते निवार रे ॥१०॥
बडवानि आविडे रादिघा, मिलियो श्रीसंघ सार रे।
चूलगिरि डूंगर चढ्या, त्यारे मुखे बोले जयकार रे ॥११॥
पूज्य सिद्ध बहुविध हवि, हवा सुखकार रे।
संघ पूज हवि सोमति, जाचक बोले मंगलाचार रे ॥१२॥

चढता चढता डुंगरे, आनन्द हरख अपार रे।
बावन गज जब निरखीये, त्यारे मुखे बोले जयकार रे ॥१३।
सवत सतर सतवनो, पोस सुदि तीज सोमवार रे।
सिद्ध क्षेत्र अति सोभते, ते निमहि मानो नहि पार रे ॥१४॥
श्री शुभचन्द्र पट्टे हवो, पर बादि मद भजे रे।
रतनचन्द्र सुरिवर कहे, भव्य जीव मन रजे रे ॥१५॥

॥ इति गीत ॥

इस प्रकार भट्टारक रतनचन्द्र ने हिन्दी साहित्य के विकास मे जो महत्वपूर्ण योगदान दिया वह इतिहास मे सदा स्मरणीय रहेगा।

५२ श्रीपाल

सवत 1748 की एक प्रशस्ति मे प० श्रीपाल के परिवार का निम्न प्रकार परिचय दिया गया है—

पण्डित बणारग भार्या वीरबाई
|
पण्डित जीवराज भार्या जीवादे
|
पण्डित श्रीपाल भार्या सहजलदे
|
पण्डित अखाई प० अमरसी–प० अनतदास, प० बल्लभदास-विमलदास
पुत्री-अमरबाई, प्रेमबाई, बेलबाई

उक्त प्रशस्ति के अनुसार प० श्रीपाल के पितामह का नाम बणारग एवं पिता का नाम जीवराज था। साथ ही उनकी मातामह वीरबाई एव माता जीवादे थी। श्रीपाल की पत्नी का नाम सहजलदे था। उसके पाच लडके अखई, अमरसी, अनतदास, बल्लभदास एव विमलदास एव तीन पुत्रिया अमरबाई, प्रेमाबाई एव बेलबाई थी। श्रीपाल का पूरा वश ही पण्डित था। वे हूमतट के रहने वाले थे। तथा सघपुरा जाति के श्रावक थे। श्रीपाल एव उसके पूर्वज भट्टारकीय परम्परा के पण्डित थे तथा भट्टारक रत्नकीर्ति, भट्टारक कुमुदचन्द्र, अभयचन्द्र, शुभचन्द्र एवं भट्टारक रत्नचन्द्र परम्परा मे उनकी गहरी आस्था थी तथा अधिकाश समय उनके संघ में रह तेआये थे।

नेमिनाथ फाग

श्री जिन मुख घन जाणिय, वखाणीये वाणि विख्यात।
सारदा वरदा स्वामिनी, कामिनी भारती मात ॥ १ ॥
विमल विद्या गुरु पूजीइ, बूझिये ज्ञान अनन्त।
मुगति तणां फल पाईइं, गाइए राजुल कंत ॥ २ ॥
यादव कुल तणो मण्डप, खण्डन पापनो अंश।
अवतरयो अवनि अनोपम उपमना अधिकवतंश ॥ ३ ॥
सुन्दर शिवादेवी नन्दन, वन्दन त्रिभुवन तेह।
समुद्र विजय घन तात, विख्यात वसुधा एह ॥ ४ ॥
कुंअर करुणावन्त, महन्त कहंत अपार।
राज काज मनि आणिय, जाणिय करे मोरारि ॥ ५ ॥
जोउ पारथ एह तणू, अद्भुतणु माने मन्न।
पन्नग सेजि पोढिय, कम्बू धनुष धरे धन्न ॥ ६ ॥
मल्ल युद्ध जो ए करे, बहु परिप्राक्रमी होय।
पारखे प्राक्रमे पूरो, सूरो ए समो नही कोय ॥ ७ ॥
पाणिग्रहण करी पाडु, वेलाडुं विपरीत।
परणो प्रभू कहे प्रेमे, इम मनोहेरा रीत ॥ ८ ॥
सिषवी सुन्दरी सामले. आमले पाडवा वात।
खडी खली कौलवा चालिय, चालिय नेमने हाथि ॥ ९ ॥
जुवल कमले करी कामिनी, स्वामिनी छांडे देह।
पाणिग्रहण पर प्रेम रे, नेम धरी मनि नेह ॥ १० ॥
बल छल कल करी, भोलव्यो भोले नेमिकुमार।
उग्रसेन केरी कुंवरी, राजुल रूप अपार ॥ ११ ॥

दूहा

राजुल का सौन्दर्य

चन्द्र वदनी मृग लोचनी मोचनी खजन मीन ।
वासग जीत्यो वेणिइ, श्रेणिय मधुकर दीन ॥ १२ ॥
युगल गल दीये सशि, उपमा नाशा कीर ।
अधर विद्रुम सम उपता, दन्तनू निर्मल नीर ॥ १३ ॥

ढाल

चिबुक कमल पर षटपद, आनन्द करे सुधापान ।
ग्रीवा सुन्दर सोभती, कम्बु कपोतने वान ॥ १४ ॥
कोमल कमल कलश वे उपरि मोती सोहे ।
जाणें कमल केरी बेलडी, वेलडी बाहोडी सोहि ॥ १५ ॥
कनक कजोपम सोभतु, नाभि गम्भीर विसेस ।
जाणे विधाताइ आगुली वालिय रूपनी रेख ॥ १६ ॥
कटि हरिगति गज जीतिया, पूरिया वनमा वास ।
जघाइ जीतिय कदलिय, अगुलिय पद्म पलास ॥ १७ ॥
आभरण अग अनोपम, भूषण शरीर सोहत ।
कवि कहेस्युं बखाणीये राजुल रूप अनन्त ॥ १८ ॥
उग्रसेन को कुंअरि सुन्दरी सुलक्षण अग ।
माधव बन्धव नेमनो, वीवाह मेलो मनरग ॥ १९ ॥

दूहा

नेमिनाथ का विवाह

वेहू घरि सुभ पर प्रेमस्यूं, अही अण मिलिया अनेक ।
खरचे वित्त नित चितस्यु वीहवा वारु विवेक ॥ २० ॥
करी सगाई सुर मिलि यदुपति हलधर कहान ।
इन्द्र नरिन्द्र गयन्द चढी, ते पणि आव्या जांन ॥ २१ ॥

ढाल

जान मान माहि मोटा, महीपति मलिया अनन्त ।
एकेक पाहि अधिका वणा, ईश्वर उभया कत ॥ २२ ॥
देई निसाण सजाण चतुर चढियो रथ सोहि ।
किरिट कुण्डल केरी कानि, शक्या रवि शशि सोहे ॥ २३ ॥
आवया मण्डप दूकडा कूकडा मृग तणा वृन्द ।
देखी वल्यो तत खेचरे देव दयां तणो कंद ॥ २४ ॥

सांभलो आदयि वात विस्मास असम्भव आज ।
इहां कांई कारण आंव्यो रे, ए आव्या कोण काजि ॥ २५ ॥

दूहा

उग्रसेन राइ आणीया पंखी पशु अनेक ।
गोरव वेला मारसे, करस्ये तह्म विवेक ॥ २६ ॥
बात घातनी सांभली, अन्तर पडियो त्रास ।
धिग संसार वीह्वा किस्यो ए पशु नेस्यो पास ॥ २७ ॥

ढाल

नेमि वैराग्य

पास छोडावो एहना देहना काकरो घात ।
जांणी बात में एह तणी विवाह तणी नही बात ॥ २८ ॥
पाछो वालो रथ सारथि, सासो म करस्यो सोस ।
उपनी तृषा अति जल तणी, न समे दूधे तथाउस ॥ २९ ॥
विषय भोगवे अग्यानी, ज्ञानी न भोगवे तेह ।
भूता तन्तु बाधे मक्षिका नवि बांधे करि देह ॥ ३० ॥
इन्द्रिय सुख शुभ तव लगे, सुगति न जाणी खेल ।
दीये स्वाद नही जब लगे, तब लगे उत्तम तेल ॥ ३१ ॥
विवाह बात निवारुं, मारुं मदन महंत ।
सुध मने तप साधू, आराधु सिद्ध महंत ॥ ३२ ॥

दूहा

आलिये आवी इम कहुं सखीस्यो करे श्रृंगार ।
तोरण थी पाछो वल्यो, यदुपति नेमिकुमार ॥ ३३ ॥
सामली श्रवणे सुन्दरी, मनि धरी एक बात ।
चकित थई तब मति गई, कारण कहो मुझ बात ॥ ३४ ॥

ढाल

राजुल का विलाप

मात तात सहु देखतां, राजुल थई दिग मूढ ।
बात वारती सीचणीं, कर्मतणी गति गूढ ॥ ३५ ॥
आभरण भूषण छोडती मोडती कंकण हाथ ।
मन्दर झुलूं वहेलिय, झूलिय सहियर साथ ॥ ३६ ॥
राखो रे रथ तम्हे समरथ, हुसारथ करे बहु सोक ।
लक्षण कोण स सम्तना, मांहतना वचन सुफोक ॥ ३७ ॥

का जावे बन ह्रहला, कला कठिन कां थाय।
सांभली वीनती साहरी, साहली कोमल काय ॥ ३८ ॥
छए रति आरति अति घणी, बरसा लेरे विख्यात।
नाथ बात नो हे सोहिली बोहिली शियालानी राति ॥ ३९ ॥
सीयाले शीत पडे, पडे अति निर्मल हीम।
हरी करी चरि मद मूके, चूके तापस नीम ॥ ४० ॥
माह उमाह अति आवयो, महियल माधव राय।
पच बांण ग्रह्या हाथि ते, साथे मदन सहाय ॥ ४१ ॥
उष्ण कालि खल सरिखो, निरखो हंस कठोर।
कोमल तनि लू लागस्ये, वागस्ये वायु निठोर ॥ ४२ ॥

दूहा

अपराध पाखे का परिहरो, दया करो देव दयाल।
जलचर जल विना टलवले, विलवले राजुल बाल ॥ ४३ ॥
मैं जाण्युह तु मुझने, मिलस्ये अगो अगि।
उलट उपनो अति घणो, रग मा काकरो भग ॥ ४४ ॥

ढाल

राजुल का नेमि से निवेदन :

मग काकरि प्रिय भोगनो, भोगवो लोग विख्यात।
माहरो करग्रह करस्ये, करस्ये को जीवनो घात ॥ ४५ ॥
प्रारथी ने पाप लागू, मागो मया करो मुझ।
एक रयणी रहो पास रे, दास थाउ छु तुझ ॥ ४६ ॥
हरिहर ब्रह्मा इन्द्र रे, चन्द्र नरेन्द्र न नारि
परण्या दानव देवता, सेवता सहू ससारि ॥ ४७ ॥
सुर नर हरि हर परण्या, पशूनो न करस्यो तेणेमार।
राजुल साभलि वीनती, बोल्यो नेमिकुमार ॥ ४८ ॥
अकेका भव ने सगपण, भल पण हिसा न होय।
सुगति सुधारसढोलिय, पीये हलाहल कोय। ४९ ॥
किहा थी आव्यु एवडू डाहापण देव दयाल।
परण्या विण का परहरो बोले रायुल बाल ॥ ५० ॥
किम रहु दुख एकली, किम मानें मुझ मन्न।
रजनीपति दहे रजनीय, वासरपति दहे दन्न ॥ ५१ ॥

दूहा

स्यामाद्रि शशि काढीयो, आस्यो अतिशय सेस ।
सूर सूरी मेक बरांसीयों, बासुदेव विसेस ॥ ५२ ॥
के निशि मांही थी काढीयो, विरहिणी केरी काल ।
शीतल शशि ते सहू कहे, विरहा दवानल झाल ॥ ५३ ॥

ढाल

झाल मेहेले परणी करु, धर क मालि वेशि ।
भव मांहि भव करु, नमका मन करे परवेस ॥ ५४ ॥
एम विलवन्ती जुवती, बीनती करे पीयू पासि ।
चतुर चिन्ता करो माहरीय, ताहरी रायुल दासि ॥ ५५ ॥
सामलि सुन्दरि सीख, सीखामण ग्रहम तणि ।
सू जाणे ए सार ससार. असार अनेक ॥ ५६ ॥
तन धन गृह सुख भोगव्या, ए भव माहि अपार ।
नरके जाये जीव एकलो, एकलो स्वर्ग दूआर ॥ ५७ ॥
देवता दानव मानव तेह तणा घणा कररया भोग ।
तोहे जीव नृपति न पामीयो, मानव भवनो सो जोग ॥ ५८ ॥
उपनी तृषा अति नीरनी, क्षीरधिने कीयो पान ।
तृपति न पाम्यो आतमा, तृण जल कोण समान ॥ ५९ ॥
तात मात सहू देखता, जीव जाये निरधार ।
धर्म विना कोई जीवनें, नवि तारे ससार ॥ ६० ॥
रायुन मन मनाविय, आवी चढ्यो गिरिनारि ।
बार भेद तप आचरे, आचरे पंचाचार ॥ ६१ ॥
सुकुमालो परिसा सहे, सहसा वन मभारि ।
पनर प्रमाद दूरें करे शील सहस अठार ॥ ६२ ॥
ध्यान बले कर्म क्षय करी, अनुसरो केवल ज्ञान ।
लोकालोक प्रकाशक भासक तत्व निधान ॥ ६३ ॥
रायुले तो परतो करी, मनभर रही वेराग ।
भूषण अगला मूंकिय, शरीर सोहाग ॥ ६४ ॥
भव्य जीव प्रतिबोधिय, कीधो शिवपुर वास ।
तव बले स्त्रीलिंग छेदिय, रायुल स्वर्ग निवास ॥ ६५ ॥

उदधि सुता सुत गोर नमी, प्रणमी प्रभेचन्द पाय !
मालियो मोटे नरिन्द, अभयनन्दि गच्छपति राय ॥ ६६ ॥
तेह पद पकज मन धरी; रत्नकीरति गुण गाय।
गाये सुणे ए माहत, वसन्त रिते सुखि थाय ॥ ६७ ॥

दूहा

नेमि विलास उल्हासस्यु, जे गास्ये नरनारि।
रत्नकीरति सूरीवर कहे, लहे सौख्य अपार ॥ ६८ ॥
हासोट माहि रचना रची, फाग राग केदार।
श्री जिन जुग धन जाणीये, सारदा वर दातार ॥ ६९ ॥

इति श्री रत्नकीर्ति विरचित नेमिनाथ फाग समाप्त ।[1]

(२) बारहमासा

ज्येष्ठ मास— राग आसावरी

आ ज्येष्ट मासे जग जलहर नोउमाहरे।
काई वाय रे वाय विरही किम रहे रे॥
आए रते आरत उपजे अग रे।
अनग रे सन्तापे दुख केहे नें कहे रे ॥ १ ॥

नोडक—

केहने कहे किम रहे कामिनी आरति अगाल।
चारु चन्दन चीर चिते, माल जाणे व्याल॥
कपूर केसर केलि कुकम केवडा उपाय।
कमल दल छाटणा वन रिपु जाणे वाय॥
भावे नहीं भोजन भूषण कर्ण केरा भाय।
परीनगमे पान नीको रलि करे कर भाय॥
गिरिनारि केरो गिरितपे, सखि जेष्ठ मास विसेष।
दु सह दीन दोहिला लागे कोमला सलेषि ॥ २ ॥

१. गुटका, यशकीर्ति सरस्वती भवन ऋषभदेव, पत्र सख्या १२७ से १३२ तक

आषाढ मास—

आमर आषाढ आवयो ए पेर रे।
काई वरे रे नाह नहीं हू किम रहुं रे॥
आ जल थल मही अल मेहनू मडाण रे।
सजांण रे न सम्भारे दुख केहने कहुं रे॥
आगड अडे गगने बोहे रो अपार रे।
काई बार रे न सांचे उन्नत माहालो रे॥
आजिम जिम तिम रीति मराधु माहाले रे।
काई साले तिम तिम नेमनो नेहलोरे॥ ३॥

त्रोटक—

तिम तिम नाहनो नेह साले आषाढि अगाल।
दादुर बोले प्राण तोले वरसाले विशाल॥
दिवस अंधारी रातडी वलि वाट वाटे नीर।
बापीयडो पीउ पीउ बोले किम धरु मन धीर॥
तरु तणी साखा करे भाषा साखजा सोहत।
रितुकाल मोर कला करी मयूरी मन मोहत॥
आज सखी अगास आव्यो उन्हई ने मेह।
झब झबक झबके बीजली किम सहे कोमल देह -।
आपो पणा पीउ ने पासे, करे कामिनी लाड।
किम रहुँ हुं एकली रे आवयो आषाढ॥ ४॥

सावन मास—

आषाढ अनुक्रमे श्रावण मास रे।
कांई पास रे आस करु हु तम तणी रे॥
आ अनुचरी जांणी आवयो एक बार रे।
आधार रे नेमि जिन धम त्रिभुवन धणी रे॥ ५॥

त्रोटक —

त्रिभुवन धणी तम तणी जांणी आवयो एक बार।
पछे नो हे अवसर अह्म तणो, जोवन नो आगार॥
अवसर चूकी आपणो पछे कस्यो उगे चन्द।
तिम तुझ विना निज नाथ मुझने सोहीये न आनन्द॥
मालती मकरंद चूकी, कस्यु करे करी रे।
मानसर मराल चूकी, किम धरे मन धीर॥
असवर गये सज्जन मिले पछे किम टले दुख देह।

आपोपखे अवसर चूको वरससेरयु मेह,
करुणा कर कृपा करो जी दयावंत दयाल।
आमना मूंको सामला श्रावण करो संभाल ॥ ६ ॥

भाद्रव मास—

भाद्रवडे भरि जलथल महीयल मेघ रे।
मैं वर रे नेमि जिम तुम बिना किम रहु रे ॥
आ हरी अ भूमि परि इंद्र गोप आनन्द रे।
आनन्द रे सोभा तेहनी सी कहुं रे ॥
ज्यम ज्यम जलहार बरसे बहुरंग रे।
अग रे अनग दहे सुणि सहचरी रे ॥
आ दीनवइने वचन बहु भाषे इम।
अपराध पाखें का पीउ परहरी रे ॥ ७ ॥

त्रोटक—

परहरी का अपराध पाखे बचक भाखे इम।
दिवस दोहिले नीगमु रे रयणी जावे किम ॥
आक्रंद करती दुख धरती रडली चकवइ राति।
उदय थाये एकठा तोरानती सी वात ॥
सुणि सखि मझ कांई न सुझे धूजे काम शरीर।
निज नाथ केरो नेह साले नयन टलया नीर ॥
रमे कुरग कुरगीणी तरगीणी ने तीर।
हाव भाव विलास निरखी नयन टलया नीर ॥
अवनीय उपरि अब पूरा पूरया सुरचाप।
भाद्रवे भरतार पाखि सेजलआई ताप ॥ ८ ॥

आश्वनि मास—

आ आसो आसा नेमि जिणंद रे।
काई चद रे उदयो अवनी नीर भलो रे ॥
आ उज्जल तृण जल अबुज आकाश रे।
मास रे सरद सजनी सोह भलो रे ॥
सवया सुत विनवो करु शृंगार रे।
मुगति नो हार हृदय मुझ दहे रे ॥

आ रे मास तास ने की कहे कमलें रे।
नयणें रे काजल सखि मुझ नवि रहे रे ॥ ९ ॥

त्रोटक—

नवि रहे काजल नयण माहरे प्राणवा हरे प्रेम।
उडुपति केरां किरणवाले शरट कालि एम ॥
उह्या भरी किम रहुं हु घरी वली करी तुमस्युं प्रीति।
वाही नै वन मांहि जायें लोक मांसी रीत ॥
सुणि स्वामी सामल तुम बिना नवि रहे माहरुं मन्न।
कठिन थई ने कां रह्यो रे वचन ताहरु धन्न ॥
मंदिरमा मैं नवि लहू जे करयो पशुमा सोर।
ते देखि नीठोर थयोरे भासो नाह निठोर ॥ १० ॥

कार्तिक मास —

आह किम रहे कामिनीं कातीय मास रे।
काई दास रे जाणी देव दया करी रे ॥
आ तुझ बिना नवि गमे तातने मात रे।
आज रे कांई काज रे ए कुन सरे सुणि मह्रि रे ॥ ११ ॥

त्रोटक

सुणि सही सु काज सारे न संभारे नाथ।
मुझ कनक कुंडल किपूर कंकण नहीं भावे हाथ ॥
मुझ राखडीवी झालडी वद कडि कडलां दूरि।
तिलक अग नवि करु न वरु मांग सिंदूर ॥
त्रोटी मोटी मोरलि मोती वहे मुझ अग।
घूघरी झमकार नेउर चूनडी ना रंग ॥
आवरण भूषण अग दूषण एक क्षण नहीं आस।
किम रहे कामिनी एकलीरे आह काती मास ॥ १२ ॥

मंगसिर मास—

आ मागसिरे मन वश विहुल थाये रे।
थाय रे राव नेमी जिन कारणे रे॥
आ जिम मृग मृगी चकित भूली जूझो रे।
लोभसे लोपे रमे कारणे रे॥

आ तुझ विना दीन मुझ दोहिला जाये रे।
काई जाये रे जूवति योवन दोहिलू रें॥
आ पीहर तो दीन पाच नो प्रेम रे।
काई नेम रे सासरडे सहू सोहिलू रे॥ १३॥

त्रोटक—

साहेलू स्वामि राज ताहरु' माहर तो नहीं कर्म।
चीर भव मे आल मेहेल्यां बोला मोसा मर्म॥
कोडहु' तु एक मुझने एटली ता आस।
करस्यु' लीला नाथ साथें कांकरीनी रास॥
आस पूरो माहरी एटली ता खंति।
अति घणूं न ताणिये जी जूयो विमासी चिन्त॥
पाणिग्रहण नही कही पछे ना कहेस्यो धर्म।
काला तेटला कामणी रेए मे जाण्यो मर्म॥
किम भव जास्ये एह माहरो क्षण वरसा सो थाय।
मागशिर गयो मुझ दोहिलो रे जूयो यादव राय॥ १४॥

पौष मास—

आ पोषें पोषन सोरंग सीयाले रे।
ए शीत कालि कांपीउ परिहरो॥
आ शीत बाये उत्तर नो वाय रे।
काये रे कपे प्रभु मुझ परिकरो रे॥
आताथपडे ही मह लिही माले रे।
काई डालें रे तखी जुगल बे सीरहे रे॥
आ किल किले केलि करे सुन्दर शखारे।
काई भाषा रे भावता वचन ते ता कहेरे॥ १५॥

त्रोटक—

भाषा कहे शाखा रहे वलि सहि अंगे शीत।
प्रीत प्रोढी पत्नि पेखी आवयो जी मित मित॥
करयो चित माहरी ताहरी दास ख्याल।
विले वले वचन ता एम कहे किम रहे राजुल बाल॥
आपो पणे नरनारि मंदिर करे सुन्दर राज।
हूं नेमि विन एकली अनुदिन किम सरे मुझ काज॥

मुझ नयन थी निज नाह गयो रे रह्यो अग शोष।
कृपा करी मुझ मन धरी किम रहु पौउडा पोष ॥ १६ ॥

माघ मास —

आ पोष महा मुझ दोहिले किम राति रे।
काई मास रे जीवन यदुपति किम सहे रे॥
आ जिम जिम पडे वन प्रति वन ठाई रे।
आधार रे उभो गिरि मां किम सहेरे॥
आ एरते महीपति चाप चढावी रे।
कांई आवी रे हेमन्त रित उभो रह्यो रे॥
आ तो जीवु जो जइने जादव वालो रे।
हिमालो रे सरस सीयालो वही गयो रे॥ १७॥

त्रोटक—

नेह गयो निज नाथ केरो आ भवे आधार।
सुणि घणी वीनती घणी तह्म तणी राजुल नारि॥
आपणी जाणी प्रेम आणो आवयो एक वार।
पाछा वले यो तेह पगे रे जो ना वे विचार॥
न करुं रे नाथ माहरा प्राणे तमसु प्रीति।
साहीन राखु स्वामी तह्म ने नेह भर हो निश्चित॥
तेह भणी त्रिभुवन धणी वीनती सुणो मुझ सोय।
माहू गासि पीउ पासि पुण्य विना नवि होय॥ १८॥

फागुण मास—

आ पीउ विना आवयो फू फूदने फाग रे।
काई रागरे वसत विरही आल वे रे॥
आ कुकम केसर छाटिया अग रे।
काई रग रे पदमिनी प्रिय चित वाल रे॥
आ केसू फूलिया भूलिया भाग रे।
कांई माथ रे माधव मधुकर रणझणे रे॥
आ मोगरो मन्दार मालती ना छोड रे।
कांई कोड रे कानन दीसे गुण घणे रे॥ १९॥

त्रोटक—

गुण धणे वोलसरी वेलि जाइ मन्दारिय।
पाडल परिमल कमल निर्मल कणेर केतकी सग ॥
सहकार सुन्दर मोरीया बपोरीया ने रंग।
एलची रहया अनेक वन श्रीफल सग ॥
ते वन मा वलीय सवाये गाये गीत सनेह।
फागण मारे पीउ विना होली दहे मुझ देह ॥ २० ॥

चैत्र मास—

आ मुझ देहे दुख दहे चैत्र नो मित्र रे।
काई कंत रे माहंत माहरे परहरी रे ॥
आ कोकिला कूजे सोरवर पालिरे।
काई बोले रे बोल सखी मुझ सूडला रे ॥
आ वली वन वसता सारमडा विख्यात रे
विख्यात रे मात न लागे रूअडला रे ॥ २१ ॥

त्रोटक—

रुडा न लागे वन्न वेरी ह्वाला ने वियोग।
तिलक अजन परहस्या दूरी कर्‌या सहु भोग ॥
चालया चिहु दिसे पंथि प्रेमे ताप तडका कीध।
किम रहु हू एकली तजीनेवश ने दीध ॥
उष्ण कालि ए उन्हाने काम सहे मुझ तन्न।
कठिन थई नेका जाये किम दहे माहरु मन्न ॥
सोह सहसने आठ आगे सारग धरने साथि।
एक का अलखा मणि ए मन कीजे निज नाथ ॥
मास पोस हूं नीगमू वलिनीमगू षट् मास।
जनमारो किम निगमू रे चैत्र मि रहो पासि ॥ २२ ॥

वैशाख मास—

आ वैशाखे शाखा मोरि रसाल रे।
विशाल रे काल उन्हाले जल घणी रे ॥
आ मेडिह मंदिर सुन्दर सोहावे रे।
काई आचेरे गामना पथी घर भणी रे ॥
आ मदिर आव्या स्वामी सोहाव्या रे।
सधाव्या रे पशु तणी करुणा करी रे ॥

आ उनमद मनसिज मान नीवारि रे।
समारी रे मुगति मानिनी करि घरी रे ॥ २३ ॥

त्रोटक—

करि धरि वैराग्य वाहलो चालयो गिरिनारि।
बार मास परीसा सहे किम रहे राजुल नारि॥
निज मन्न ने तां तप सम्बोधी प्रतीबोधी राजुल राज।
मुगति पुरी गयो नाथ नेमि जिन करी आतम काज॥
श्रीअभेचन्द उदार अनुक्रमे अभेनन्दआनन्द।
तस चरण गामी कहे यतिवर रत्नकीर्ति मुणिंद॥
प्रेम आणी एह वाणी गासे द्वादश मास।
तेह तणी श्री नेमि जिनवर बहू पूरे मन आस॥
सायर तट घोघा गुणाले चैन्यालयचन्द।
तिहा रही रचना रची रे बार मास आनन्द॥ २४॥

इति श्री भ रत्नकीर्ति विरचिता बारहमासा समाप्त।

पद एवं गीत

राग मल्हार : (१)

सखी री सावनि घटाई सतावे ॥
रिमिझिमि बूंद बदरिया बरसत, नेमि नेरे नहि आवे ॥ १ ॥
कूंजत कीर कोकिला बोलत, पपीया बचन न भावे ।
दादुर मोर घोर घन गरजत इन्द्रधनुष डरावे ॥ २ ॥
लेख लिखू री गुपति वचन को, जदुपति कु जु सुनावे ।
रतनकीरति प्रभु अब निठोर भयो, अपनो वचन विसरावे ॥ ३ ॥

राग म नाराण : (२)

नेम तुम कैसे चले गिरिनारि ।
कैसे विराग धरयो मन मोहन, प्रीति विसारि हमारी ॥ १ ॥
सारग देखी सिधारे सारगकु, सारग नयनि तिहारी ॥
उनपे तत मत मोहन हे वैसो नेम हमारी ॥ २ ॥
करो रे सभार सावरे सुन्दर, चरण कमल पर वारी ।
रतनकीरति प्रभु तुम विन राजुल, विरहानलहु जारी ॥ ३ ॥

राग कनडो : (३)

कारण कोउ पीया को न जाने ॥ टेक ॥
मन मोहन मडप ते बोहरे पसु पोकार बहाने ॥ १ ॥
मोपै चूक पडी नही पल रति भ्रात तात के ताने ।
अपने हुर की आली बरजी सजन रहे सब छाने ॥ २ ॥
आये बोहोत दीवाजे राजे, सारग मय धूनी ताने ।
रतनकीरति प्रभु छोरी राजुल, मुगति बधू बिरमाने ॥ ३ ॥

राग कनडो (४)

सुदसर्ण नाम के मैं वारि ॥
तुम बिन कैसे रहु दिन रयणी, मदन सतावे भारी ॥ १ ॥
जावो मनावो आनो गृह मेरे यो कहे अभिया रानी ॥ २ ॥
रतनकीरति प्रभु भये जु विरागी, सिष रहे जीया धाई ॥ ३ ॥

राग कल्याण चर्चरी : (५)

राजुल गेहे नेमी आय ।

हरि वदनी के मन भाय, हरि को तिलक हरि सोहाय ॥ १ ॥
कबरी को रंग हरी, ताके आगे सोहे हरी,
ता टंक हरि दोउ श्रवनि ॥ २ ॥
हरि सम दो नयन सोहे, हरिलता रंग अधर सोहे,
हरिसुतासुत राजित द्विज चिबुक भवनि ॥ ३ ॥
हरि सम दो मृनाल राजित इसी राजु बार,
देही को रंग हरि विशार हरी गवनी ॥ ४ ॥
सकर हरि अग करी, हरि निरखती प्रेम भरी,
तत नन नन नीर तत प्रभु भवनी ॥ ५ ॥
हरि के कुहरि कुपेलि, हरिलकी कुं वेषी,
रतनकीरति प्रभु वेगे हरि जवनी ॥ ६ ॥

राग केदारो : (६)

राम । सतावे रे मोहि रावन ॥

दस मुख दरस देखें डरती हूँ, वेगो करो तुम आवन ॥ १ ॥
निमेष पलक छिनु होत वरिषमो कोई सुनावो जावन ।
सारगधर सो इतनो कहीयो, अब तो गयो है श्रावन ॥ २ ॥
करुनासिंधु निशचर लागत, मेरे तन कु डरावन ।
रतनकीरति प्रभु वेगे मिलो किन, मेरे जीया के भावन ॥ ३ ॥

राग केदारो : (७)

अबगरी करज्यो न माने मेरी ।

आ अनीत नीत काहे कुं करतरी,
अति मीन मृग खजन धोरो ॥ १ ॥
कनक कदली हरि कपोत कबु,
अरु कुंभ कमल करी केरो ॥
सारग उरग अनेक संग मिलि,
देत उरानो तेरो ॥ २ ॥
चदगहन होवत राका निशि,
रे हे पिया निज गेह नेरो ॥
रतनकीरति कहेया तुं कलकी,
राहु गहत हे अनेरो ॥ ३ ॥

राग केदारो (८)

नेम तुम आवो धरिय घरे ।

एक रयनि रही प्रात पियारे, बोहोरी चारित धरे ॥ १ ॥ नेम ॥
समुद्र विजयनदन नृप तु ही बिन मनमथ मोही न रे ।
चन्दन चीर चारु इन्दुसे दाहत अग धरे ॥ २ ॥ नेम ॥
बिलखती छारि चले मन मोहन उज्जल गिरि जा चरे ।
रतनकीरति कहे मुगति सिधारें अपनो काज करे ॥ ३ ॥ नेम ॥

राग केदारो (९)

राम कहे अवर जया मोही भारी ॥

दश कमल सु शीतल सीता दाहत देह धारी ॥ १ ॥
नयन कमल युगल कर पदुमिनी गयन के इंदु अपारी ।
रतनकीरति राम पीरं तजु पलक जुग अनुवारी ॥ २ ॥

राग केदारो (१०)

दशानन, बीनती कहत होइ दास ।

तोही बिरहानर जरत या तन, मन मोहु आउ दास ॥ १ ॥
सूर तो सपन दश च्यार निवारे ते तोही अग निवास ।
चन्द वदन कु अधर सुधा कु स्पनदंत केलास ॥ २ ॥
लावनि काम दुधा श्रीकांते रभा रूप के पास ।
गज गमनी जु हर द्रीगन कु धनुध भमे कबु पास ॥ ३ ॥
कठिन री हो कहा करत कठियाई या मोही पूरन आस ।
रतनकीरति कहे सीया कारण काहे नमावत सास ॥ ४ ॥

राग केदारो (११)

वरज्यो न माने नयन निठोर ।

सुमिरि सुमिरी गुन भये सजल घन,
उमगी चले मति फोर ॥ १ ॥ वरज्यो ॥
चचल चपल रहत नहीं रोके,
न मानत जु निहोर ॥
नित उठि चाहत गिरि को मारग,
जेही विधि चन्द्र चको ॥ २ ॥ वरज्यो ॥

तन मन धन यौवन नहीं भावत ।
रजनी न भावत भोर ॥
रतनकीरति प्रभु वेगे मिलो ।
तुम मेरे मन के चोर ॥ ३ ॥

राग केदारो : (१२)

झीलते कहा कर्यो यदुनाथ ।
एही रुकमणि सत्यभामा छीरकत मिली सबु साथ ॥ १ ॥
छिरकतें बदन छपात इतउत, व्याहान को दीयो हाथ ।
रतनकीरति प्रभु कैसे सीधारे मुगति बधू के पाय ॥ २ ॥

राग केदारो : (१३)

सरद की रयनि सुन्दर सोहात ।
राका शशधर जारत या तन, जनक सुता बिन भ्रात ॥ १ ॥
जब याके गुन ग्रावत जीया मे, वारिज बारी बहात ।
दिल बिदर की जानत सीआ, गुपत मते की बात ॥ २ ॥
या बिन या तन सह्यो न जावत, दु सह मदन को घात ।
रतनकीरति कहे बिरह सीता के, रघुपति रह्यो न जात ॥ ३ ॥

राग केदारो · (१४)

सुन्दरी सकल सिंगार करे गोरी ।
कनक बदन कचूकी कसी तनि, पेनीले ग्रादि नर पटोरी ॥ १ ॥
नीरखती नेह भरि नेमनो साहकु रथ बेले ग्रायेंसग हलधर जोरी।
रतनकीरति प्रभु निरखी सारग वेग दे गिरी गये मान मरोरी ॥ २ ॥ सुन्दरी ॥

राग मालणी : (१५)

सारग उपर सारंग सोहे सारग व्यासार जी ।
ते तन पर सारग एक सुन्दर एवी राजुलनार ॥
तरुणी तेजे मोहे जी ॥ १ ॥
सारग सारग हरी मोहे सारग माहे ।
सारंग मुकी सारंग पति ने जोवे ॥ तरु० ॥ २ ॥
सारग करीने सारंग बैठो कोटे सारग समान जी ।
सारग उपर थी सारग उतरी सारग सु करे गन ॥ त० ॥ ३ ॥

सारग श्रवणे शामली बोले नेम दयाल जी ।
सहु सारग केरो ने हीतकर वाल्यो रथ गुणाल ॥ त० ॥ ४ ॥
सारग नी वारी सारग सधाव्यो सारग गज ए रहावे जी ।
अभयनन्द पद पजक प्रणमी रत्नकीरति गुण गावे ॥ ५ ॥

राग मारुणी (१६)

सुण रे नेमि सामलीया साहेब, क्यो बन छोरी जाय ।
कुण काहने रच्यो क्योन जाणो काहे न रथ फेरायरे ॥
जीवन जीवन सुण मेरी अरदास, हु होउगी तोरी दास ।
तू पूरण मोरी आस मोरी आस रे ॥ जी ॥ १ ॥
तात भ्रात अब मात न मोरी, तेरी चेरी होई आउ ।
सेवते देव ते दया न होवे तो सीर लख्या पाउ रे ॥ जी ॥ २ ॥
यु बील बील ते दया न आवे, काहावे क्यो कृपावत ।
रतनकीरति प्रभु परम दयालु, पास छो राजतु रे ॥ जी ॥ ३ ॥

राग सारंग . (१७)

सारग सजी सारग पर आवे ।
सारग बदनी, सारग सदनी, सारग रागनी गावे ॥ १ ॥
सारग सम शीर की बनाई, सारग अपनो लजावो ।
या छबी अधिक आपोरी दुवारो सारग सबद सुनावे ॥ २ ॥
सारग लकी सारग थे, सारग अग न भावे ।
सारग छोरति सारग सग दो रति रतनकीरति गुण गाये ॥ ३ ॥

श्री राग (१८)

श्री राग गावत सुर किनरी ॥
करत थेई थेई नेम कि आगि, सुधाग सुगीत देवत भमरी ॥ १ ॥
ताल पखावज वेणू नीकि बाजत, पृथक पृथक बनावत सुन्दरी ।
सारग आगि सारग नाचत देखत सुन्दरी धवल वरी ॥ २ ॥
रथ बैठो शिवया सुत आवे, बधावे मानिनी मोती भरी ॥
रत्नकीर्ति प्रभु त्रिभुवन वदित सोहे ताकि राम हरी ॥ ३ ॥

राग असाउरी : (१६)

आजू अलि आये नेम तो साउरी ॥
चद्रवदनी मृग नयणी हिलि मिलि ।
या विधि गावत राग असाउरी ॥ १ ॥
मोन मूरत सूरत बनी सुन्दर ।
पुरदर पाछे करत तो छाउरी ॥
जय जय शबद आनन्द चन्द सूर संग ।
या विधि आये चंग हुलधर भाउरी ॥ २ ॥
किरीट कुण्डल छवि रवि ससि सोहन ।
मोहन आये मण्डप पाउरी ॥
रतनकीरति प्रभू पसूय देखी फिरे ।
राजीमती युवती भई बाउरी ॥ ३ ॥

राग असाउरी : (२०)

वली बन्धोका न करज्यो अपनो ॥
चरन परी परी करु री नोछाउरी ।
लघु वय कहा तप जपनो ॥ १ ॥
रह्यो न परत छिनू निमेष पलक धरी ।
सोवत देखत सपनो ॥
वाच साच सम्भारो अपनी ।
रतनकीरति प्रभु चयनो ॥ २ ॥

राग केदारो : (२१)

कहांथे मण्डन करु कंजरा नेन भरु,
होउ रे वेरागन नेम की चेरी ॥
सीस न मजन देउं माग मोती न लेउं ।
अब पोर हूं तेरे गुननी वेरी ॥ १ ॥
काई सु बोल्यो न भावे, जीया मे जु एसी आवे ।
नहीं गमे तात मात न मेरी ।
आली को कह्यो न करे बाबरी सी होई फिरे ।
चकित कुरगिनी यु सर घेरी ॥ २ ॥

नीठर न होई ए लाल, बलिहु नैन विसाल ।
केसेरी तस दयाल भले भलेरी ॥
रतनकीरति प्रभु तुम बिना राजुल ।
यो उदास ग्रहे क्यु रहे री ॥ ३ ॥

राग केदारो

(२२)

सुनो मेरी सयनी धन्य या रयनीरे ।
पीयु घरि आवे तो जीव सुख पावे रे ॥ १ ॥
सुनि रे विधाता चन्द सन्तापी रे,
बिरहिनी बध थे सपेद हुआ पापी रे ॥ २ ॥
सुन रे मनमथ बतिया एक मुझरे,
पथिक बधू बध थे देहे हानि मुझरे ॥ ३ ॥
सुन रे जलधर करत कहा गाजरे.
मे चक भई तुझत न तन्नजू न लाज रे ॥ ४ ॥
सुन रे मेरे मीता गोद बिठाउ रे,
सारग बचन थे दुख गमाउं रे ॥ ५ ॥
सुनो मेरा कंता नही मुझ दोसरे,
मे क्या कीता इतना कहा रोस रे । ६ ॥
शशधर कर सम चन्दन तन लाया रे,
कमर कदरीदर दुख न गमाया रे ॥ ७ ॥
बियोग हुतासन दहे मुझ देहरे,
बीनती चरन परी करु धरी नेहरे ॥ ८ ॥
रे मन बिजोगे भोजन न भावे रे,
उदक हालाहल राग न सुहावे रे ॥ ९ ॥
पीउ आवन की को देवे बधाई रे,
रतन मोतिन का हार देउ भाइ रे ॥ १० ॥
रतनकीरति पीया तोरन जब आया रे,
सजनी सबे मिलि गुन गाया रे ॥ ११ ॥

राग देशाख

(२३)

रयडो नीहालतीरे, पूछति सहे साबन नी बाट ।
कहो रे कंत नेरे, मुझ नेमे हेलं ते स्यामाटि ॥

करु भीरा नेम जीरे, नीठोर न थाईये मां होला नाट।
केमें चलो वाहला वनिता कहे, सो गिरनार नो वाट ॥ १ ॥
सांभलि सामला रे, आमला मे हलो मुझस्यु कंत।
भीलतास्यु कहयू रे महाजना वचन होये महांत ॥
किम परणेवा आवीया रे, किंनर सुर सोहंत।
हवे मेहली वन जातां वाहला, सोभासी अर हंत ॥ २ ॥
सुणि राजमती रे युवती मुझ मन एतां वात।
मुझ जोताव कांरे, जिनधर्म जग माहि वारु विख्यात ॥
एकेका भवने नातर रे अन्तर स्या बाधवा मात तात।
ते माटह ग्रह्यो तह्यो सेवीये रतनकीरति नो नाथ ॥ ३ ॥

(२४)

सखी को मिलाओ नेम नरिंदा।

ता बिन तन मन योवन रजतहे चारु चन्दन अरु चन्दा ॥ १ ॥
कानन भुवन मेरे जीया लागत, दुःसह मदन को फन्दा।
तात मात अरु सजनी रजनी, वे अति दुःख को कदा ॥ २ ॥
तुमतो सकर सुख के दाता करम अति काए मदा।
रतनकीरति प्रभु परम दयालु सेवत अमर वरिंदा ॥ ३ ॥

(२५)

सखी री नेम न जानी पीर ॥
बहोत दिवाजे आये मेरे घरि, सग लेई हलधर बीर ॥ १ ॥
नेम मुख निरखी हरषीयनसू अब तो होइ मनधीर।
तामे पसूय पुकार सुनी करी गयो गिरिवर के तीर ॥ २ ॥
चन्द्र बदनी पोकारती डारती मण्डन हार उर चीर।
रतनकीरति प्रभु भये बैरागी राजुल चित कियो धीर ॥ ३ ॥

राग असाउरी : (२६)

आजो रे सखि सामलियो वाहालो रथ परि रुडो आवे रे।
अनेक इन्द्र अनग अनोपम उपम एहनी न आवेरे ॥ १ ॥
कमल बदन कमलदल लोचन, सुक चंची सम नासारे।
मस्तक मुगट उगट चन्दन तन कोटि सूरजि प्रकाशा रे ॥ २ ॥

कुण्डल अलक तिलक शुभ शोभा, अधर विद्रुम सम सोहे रे।
दंत श्रेणि मुक्ताफल मानू मीठडे बचन मन मोहे रे ॥ ३ ॥

बाहु सकोमल सजनी एहनी, केहनी उपमा दीजे रे।
गज गति वाले मण्डप आवे, भामिनी भामणां लीजे रे ॥ ४ ॥

हरिहर हलधर साथे आवे, भावे रुअडी जान रे।
सारग नयनी सारंग वयनी गाये मनोहर गान रे ॥ ५ ॥

रथ आगलि अप्सरा आणदे छबे नाटिक नाचे रे।
रतनकीरति प्रभु निरखी निरखी त्याहा राजी मन राचे रे ॥ ६ ॥

राग असाउरी (२७)

गोखि चडी जू ए रायुल राणी नेमि कुमर वर आवे।
इन्द्र सुरभ नचावता काइ अपछर मंगल गावे रे ॥ १ ॥

सही मोहासणि सुन्दरी तहने पहरो नव सरु हार रे।
तेह ने उठो नवरग घाट रे रथ बेसीने आवे छे।
माहरो जीवन जगवाधार ॥ २ ॥

काई गाजते ने बाजते माहरो पीउ परणेवा आवे।
राजुल हेडे हरषन्ती काई सखिस्यु रुडु भावे रे ॥ ३ ॥
काई तोरण आव्या नेमि स्वामी, काई दीणे पशुनो पुकार रे।
रथवाली गिरिनारि गयो रतनकीरति नो आधार रे ॥ ४ ॥

राग सारग (२८)

नेमि गीत

ललना समुद्र विजय सुत सामरे, यदुपति नेम कुमार हो।
ललना शिवा देवी तन धन युग केहे अनोपम अवनि उदार हो ॥ १ ॥
ललना मस्तक मुकट कनक जर्‌यो, रवि छवि कुण्डल कान हो।
ललना नव शिख सोभा कहा वरणु,
जब चडियो हे व्याहान रे ॥ २ ॥

ललना इंद नरिंद गयद चरी गावत सर सधमार हो।
ललना नाचत सुखी अगना, नो सत जी सिंगार हो ॥ ३ ॥
ललना पच रग पहेनी पटोरी, गोरी राजुल गात हो।
ललना चन्द वदनी मृग लोचनी; चिपुक बिन्दु सोहात हो ॥ ४ ॥

ललदा मनिता वंक श्रवन दोउ शिर ए खरी श्रमूल हो ।
ललना कबरी शेष लजामणि नाशा शुक स्यु हो रह्यो ॥ ५ ॥
ललना दशन अनार अनोपम अधर अरुन परवार हो ।
ग्रीवा सारग सोहवनी उर बंबि मुगता हार हो ॥ ६ ॥
ललना नाभि मण्डल कटि केसरी गजगति लाज्यो मरार हो ।
ललना जानूकदरी पद बीछये नूपूर कुणि तर सार हो ॥ ७ ॥
ललना अग अंग छवि फबि कहा बरणु राजित राजुल बार हो ।
उग्रसेन के मण्डपे ले रही वर कर मार हो ॥ ८ ॥
ललना आयो नीसान बजावते हरि हलधर सब साथ हो ।
ललना सारग देखे दामरी, तब बोल्यो यदुनाथ हो ॥ ९ ॥
ललना सुणि सारथि कहे सामरो पसू बाधे बुण काज हो ।
ललना एति भोजन राजा करे, तुम कारन ए श्राज हो ॥ १० ॥
ललना जीव दयाः सामरो जान्यो अथिर ससार हो ।
ललना रथ फेरी गिरिनार चरे, धाई राजुल नारि हो ॥ ११ ॥
ललना सुनगो साहु मुझ वीनती, मे दुलनी तुम दास हो ।
ललना करु नो छाउरी साम रे, या मुझ पूरे श्रास रे ॥ १२ ॥
ललना रतनकीरति प्रभु इउ कहे एको ग्रहे श्रयान हो ।
ललना सम्बोधी शिखरी गये हरे जीजौया धरी ध्यान हो ॥ १३ ॥

राग मल्हार : (२९)

सुणि सखि राजुल कहे, हेडे हरष न माय लाल रे ।
रथ बैठो सोहामणो जीवन यादवराय लाल रे ।
मस्तग मुगट सोहामणी श्रवणे कुण्डल सार लाल रे ।
मुख सोभा सोहामणी, काति तणो नही पार लाल रे ॥ १ ॥
गज गमनी मृग लोचनी, रायुल रूप अपार लाल रे ।
रतन जड़ित बाहे वेहृषा, कठि एकाबल हार लाल रे ॥
रथ बैठाने निरखियु, सारिंग ने तो पास लाल रे ।
वचन सूणी रथ चालियो, पूरयो गिरिनारि वास लाल रे ॥
सखि कहे रायुल सुणो, नेम गयो गिरिनारि लाल रे ।
श्री अभयनन्दि पद प्रणमीने, रत्नकीर्ति कहे सार लाल रे ॥

राग रामश्री : (३०)

शशधर बदन सोहमणी रे, गज गामिनी गुण माल रे ॥
हरिलंकी मृग लोचनी रे, सुधा सम बचन रसाल रे ॥
रायुल रति सम वीनवे रे, जीवन जिन यदुराय रे।
सुणि सुणि जिन यदुराय रे, चरि चन्दन चन्द नवि गये रे ॥
नवि गये तात ते माय रे ॥ १ ॥

दशन दाडिम बीज शोभता रे, चम्पक वरण सेहि देह रे।
अधर विद्रुम सम राजता रे, धरती नाथस्युं बहु नेह रे ॥ २ ॥
कीर कोकिल बोल्यो नवि गमेरे, नोव गूथ्यो गमे केश कलाप रे।
नवि गये राग अलाप रे, नवशत करण ते नवि गमे रे ॥ ३ ॥
अन्न उदक निद्रा नोव गये, नवि गमे सजनी निसी खरे।
हास्य विनोद सहू परिहसो रे, अमृत भोजन लागे विष रे ॥ ४ ॥
विरह दवानल हू बली रे, तु तो त्रिभुवन तारण नाथ रे ॥
बलि बलि पाय पडी विनवू रे, मुन्हे राखो तुम्हारे पास रे ॥ ५ ॥
भोग भव भ्रमण कारण बगू रे, सुणि सुणि रायुल नारि रे।
ते किम ज्ञानवत आचर रे, तु तो ताहरे हृदय विचारि रे ॥ ६ ॥
प्रतिबोधी सामलिये सुन्दरी रे, जइ लीधो गिरिनारि वास रे ॥
रतनकीरति प्रभु गुणनिलो रे, पूरो पूरो मुझ मन आस रे ॥ ७ ॥

राग परजाउ गीत . (३१)

नेम जी दयालुडारे, तुं तो यादव कुल सिणगार रे।
जग जीवन जगदाधार रे, तह्मे करो ह्मारी सार रे ॥
स्वामि अड वडिया आधार ॥ १ ॥

हु तो हु ती मदिर राज रे, मैं तो हरिनु न जाण्यु काज रे।
तु तो आको अधिक दिवाज रे, हम जाता तुझने लागु लाज रे ॥ २ ॥
कोणे लायो तुझ मर्म रे, जे परणे बेसे कर्म रे।
ते न जणि ससार नो शर्म रे, हवे कोण क्षत्रिय धर्म ॥ ३ ॥
मन्हे हससे सजनी नो साथ रे, केहेस्ये हनेली गयो किम नाथरे।
हू किम रहू अनाथ रे, तह्मे देयो अन्तर हाथ ॥ ४ ॥
तु तो सकल सालय आनंद रे, तु तो करुणा तरवर कंद रे।
तुझ दीठडे मुज आणंद रे, कहे रत्नकीरति मुणिंद रे ॥ ५ ॥

राग श्री राग : (३२)

वंदेहं जनता शरणं ॥

दशरथ नंदन दुरित निकंदन, राम नाम शिव सुख करन ॥ १ ॥
अकल अनत अनादि अविकल, रहित जनम जरा मरन ।
अलख निरंजन बुध मनरंजन, सेवक जन अघव्रत हुसन ॥ २ ॥
कामरूप करुना रस पूरित, सुर नर नायक नुत चरन ।
रतनकीरति कहे सेवो सुन्दर भव उदधि तारन तरन ॥ ३ ॥

राग श्री राग : (३३)

कमल वदन करुणा निलय ॥

सिव पद दायक नरवर नायक राम नाम रघुकुल तिलय ॥ १ ॥
मधुकर सम शुभ अलक मनोहर, देह दीप्ति अघ तिमिर हर ।
कजदल लोचन भवभय मोचन, सेवक जन सतोष कर ॥ २ ॥
अधर विद्रुम सम रक्त विराजित, द्विजवर पक्ति मौक्तिक कलन ।
सीता मनसिज ताप निवारन दीघु बाहु रिपु मद दलन ॥ ३ ॥
अमर खचर कर नायक सेवित चरण कमल युगल विमल ।
रतनकीरति कहे शिवपदगामी कर्म कलक रहित अमल ॥ ४ ॥

(३४)

आवो सोहासरिण सुन्दरी बृद रे, पूजिये प्रथम जिरणद रे ।
जिम टले जनम मरण दुख दद रे, पामीये परम आनन्द रे ॥ १ ॥
नाभि महीपति कुल सिणगार रे, रुअडला मरेवी मल्हार रे ।
युगला धर्म निवारण ठार रे, करयो बहु प्राणी उपगार रे ॥ २ ॥
त्रण्य भुवन केरो राय रे, सुरनर सेवे जेहना पाय रे ।
सोहे हेम वरण सम काय रे, दरशन दीठे पाप पलाय रे ॥ ३ ॥
एक मतय नीलंजस रूप रे, विघटचू दीठु त्यहारे रूप रे ।
मन धरीयो वेराग अनूपरे, जे तारे भव कूप रे ॥ ४ ॥

श्री राग : (३५)

श्रीराग गावत सारग धरी ॥

नाचती नीलजसा रिषभ के आगे ।

सरीगमपधु–निध-पम-गरी ॥ १ ॥
मूर्छनाता न बधानउ देखाडउ हू मान।
ठेया ठेवन के जू तार मान मृदग करी ॥
धूनीत घघरी बाजे देखत सवर लाजे,
नोसत श्रीराग सोहे सुन्दरी ॥ २ ॥
सगीत रगीत रूप निरखीन चलो भूप,
जय जय जय जिन आनद भरी ॥
नीलजसा विहाटी पेखी करी करुना,
रतनकीरति प्रभु देखी करी ॥ ३ ॥

राग बसंत : (३६)

पार्श्व गीत

वणारसी नगरी नो राजा, अश्वसेन गुणधार।
वामादेवी राणी ए जनम्यो, पार्श्वनाथ भवतार ॥
विमल वसत फूल लेई पूजो, श्री सकट हर जिन पास।
दर्शन दुरितअघ निवारे पहोचे मन नी आस ॥ १ ॥
नव कार उन्नत जिनवर राय, इद्रनील मणि काय।
इद्र नरेन्द्र नित्य नमे पाय, समरे सकट जाय ॥ २ ॥
मदन गहन दहन दावानल, क्रोधसर्प सुपर्ण।
मान मत्त मातग केसरी, भव्य जीव ने सर्ण ॥ ३ ॥
मिथ्यातम नाशन तू सूर्य सम, लोभ दवानल मेह।
दुर्धर कमठ वैरी मद मूकी, पाय नम्यो तुझ तेह ॥ ४ ॥
धरणेन्द्र पद्मावती करे सेव, भव्य कमलवर भान।
ससार आवागमन निवारो, हु तुम्ह मागू मान ॥ ५ ॥
श्री हासोट नगर सोभा कर, सकलसघ जयकार।
रतनकीरति सूरि अनुदिन प्रणमे, श्री जिन पास उदार ॥ ६ ॥

अथ बलभद्र नी वीनति (३७)

प्रणमी नेमी जीनेन्द्र, सारदा गुण गण मडणीये।
गौतम स्वामीय पाय वंदन करु भव खंडणीये ॥
सोरठ देश विशाल इंद्र नरेन्द्र मनोहरु ए।
सोभावत अपार नर नारि तिहा सुदरु ए ॥

नगर द्वारिका राय रुपकला गुण वारिधि ए।
कामिनी रूप विसाल रोहिणी नाम सुसोमीये ए ॥
साली क्षेत्र वर में ` ·· ·· चन्द्र परमोहुतीए।
. . .. ॥ २ ॥

स्वपन दीठा ते नार देव पद्मपरमु गल ए।
अवतरीया बलदेव त्रीभोवन मोहन पर बल ए ॥
देव की पुत्र उदार नारायण मध वसुरणेए।
माहाराज वर तेह, त्रीण खडना सुधर्म ए॥ ३ ॥
पद्मनाम बलभद्र चितवता सुख पामीए।
कीधा राज महत भोगवे पुन्य वरवाणिये ए ॥
थीयो द्वारिका नां सबै बांधव तब विसरए।
कर्म तणी रे नीरखेव ज्ञानवत दुख वीसऱ्या ए॥ ४ ॥
सर्व अचलनो राय तु गो गिरवर सोभतोए।
कोड नवाणु सीध्द ते जे त्रीभोवन मोह तोए ॥
श्री नारायण भग वैराग पामी धीर मन।
चारीत्र लीधू धन्य ध्यान ऐ त वन ॥ ५ ॥
राम नाम गुणवत पू जता भव नासीये ए।
नामे रोग समूह नाग गजेंद्र गु त्रासीवे ॥
भूत पिसाच ··· · ···· शाकनी डाकनी रोग हरे ॥ ६ ॥
लक्ष्मी नारि सुरूप पुत्र धुरधर नादीये ए।
सकल कला गुणवत अभय नदि गुरु वादीये ए ॥
वीनति राम नरेन्द्र रतनकीर्ति भणे भाव धरी।
स्वर्ग मोक्ष नर नारि लहे भणे जे सुभ मन करी ॥ ७ ॥

भट्टारक रत्नकीर्ति

की

कृतियां

श्री भरत-बाहुबली छन्द

मंगलाचरण :

स्तुत्वा श्रीनाभेय सुरनरखचरालि राजितपदकमलं ।
रौद्रोपद्रवशमन वक्ष्ये छंदोति रमणीयक ॥ १ ॥
पणविवि पद आदीश्वर केरा । जेह नामे छूटें भवफेरा ।
ब्रह्मसुता समरु मतिदाता । गुणगणमंडित जग विख्याता ॥ २ ॥
वंदवि गुरु विद्यानंदि सूरि । जेहनी कीर्ति रहीं भरपूरी ।
तस पद कमल दिवाकर जाणु । मल्लिभूषण गुरु गुण वर्खाणु ॥ ३ ॥
तस पट्टें पट्टोधर पण्डित । लक्ष्मीचन्द्र महाजश मण्डित ।
अभयचन्द्र गुरु शीतल वायक । सेहेर वंश मंडन सुखदायक ॥ ४ ॥
अभयनंदि समरु मनमांहि । भयभूला बलगाडे बांहि ।
तेह तणि पट्टे गुणभूषण । वदवि रत्नकीरति गत दूषण ॥ ५ ॥
भरत महीपति कृत महीरक्षण । बाहुबली बलवंत विचक्षण ।
तेह तणो करसु नव छंद । सांभलतां भणतां आणंद ॥ ६ ॥
देश मनोहर कोशल सोहे । निरखता सुरनर मन मोहे ।
ते माहि राजे अति सुन्दर । शाकेतां नगरी नव मन्दिर ॥ ७ ॥

महाराजा ऋषभदेव का शासन :

राज्य करे तिहा वृषभ महाभुज । सुख सुखमा जितहंसि तनबांभुज ।
जुगलाधर्म निवारण स्वामी । भव भय भजन शिवपद गांमी ॥ ८ ॥
अम सुरग अनूपम राजे । रूप सुरूपें रतिपति लाजे ।
कनक कांति सम काय कलाधर । अतुल बलबले उन्नत मनोहर ॥ ९ ॥
ज्ञान त्रण्य शोभे अति जेहनें । कोण कला उपदेशो तेहनें ।
कल्पवृक्ष क्षय जाता जांणी । जेणें सर्व संतोष्या प्राणी ॥ १० ॥
जैनधर्म जेणें उपदेश्यो । जीव जन्तु कोई नवि रेस्यो ।
दीनदयाल दयानो सागर । भावभंजन भूरि गुणाकर ॥ ११ ॥

रानी यशोमति का वर्णन :

गजगामिनी कामिनी कृशांगी । वयन कुरावी बालकुरंगी ।
सारद चारु सुधाकर वदनी । कुंद कुसुमसम उज्ज्वल रदनी ॥ १२ ॥

वजुल वेणी वीणा वाणी। रूपरसें जीती रति राणी।
अधर अनुपम विद्रुम राता। नलवट केसर तिलक विभाता ॥ १३ ॥

नासा सरल सभर कुच सारा। मंजुल रुचि मुक्ताफल हारा।
कदली सार सुकोमल जघा। कटि तट लक लजावित सिंघा ॥ १४ ॥

प्रथम यशोमति अति अभिरामा। बीजी रम्य सुनन्दा भामा।
मात जसोमति जे जाया सुत। भरत आदि सो ब्राह्मी सयुत ॥ १५ ॥
जनम्यो वीर सुनन्दा माये। बाहुबली सुन्दरी तनुजायें।
सहु परियण सु राज्य करता। हास विलास विशेष वहता ॥ १६ ॥

आशी लाष पूरव सवच्छर। विविध बिनोदेव्योलाविस्तर।
एक समय नीलजस रूप। देषी मति चमक्यो वृष भूप ॥ १७ ॥

ऋषभ का वैराग्य

ऊठ्यो अति वैराग्य विचारी। छडी लछि बहु अतिसारी।
राज्य तणु आडबर आप्यु। भरत महीपति नामज थाप्युं ॥ १८ ॥

भरत को राज देना :

पोतनपुरी भुजबली बेंसारया। अवर यथोचित तनुज वधार्या।
च्यार हजार महीपति साथें। लीधो सयम त्रिभुवन नाथें ॥ १९ ॥

पच महाव्रत पच समितिसु। पाले जिनपति त्रण्य गुपति सु।
अति ऊजड अटवी म्हा रहेता। होडे सबल परीसह सेहेता ॥ २० ॥

एक दिवस ते राज्य करतो। बैठो भूप सभा सोहतो।
त्यारें त्रण्य वधामणी आवी। साभलिता सहुने मनें भावी ॥ २१ ॥

वृषभामयनें केवलणाण। प्रगटयु चकरयण जिमभाण।
पुत्र जन्म साभलीयो नरपति। कीधो मंत्र सहु मली शुभमति ॥ २२ ॥
धर्म कर्म कीजे ते पेहेलु। जिम नवंछित सोझे वेहेलुं।
त्यारे भूपति भावधरीनें। केवलबोध कल्याण करीनें ॥ २३ ॥

चरच्यु चक्र कर्यु आडम्बर। पुत्र जन्म उच्छव करी सुन्दर।
मही साधन सचरीयो नायक। मलीया गजरथ तुरग सुपायक ॥ २४ ॥

भरत द्वारा दिग्विजय :

पूछवि पडित ज्योतिष जाणा। वर मगल दिन कर्या पयाणा।
चाल्या चतुर महीपति मोटा। शूर सुभट अति चागण चोटा ॥ २५ ॥

जीत्या जोर छखंड अखंडा। वेरी बहु कीधी बहुरंड्या।
दडूया थड्या मंडपति गाठा। नाठा नाहामजे उपराठा ॥ २६ ॥
गिरि गह्वर जल थल खंखोल्या। व्यंतर विद्याधर झकझोल्या।
साठ हजार वरसधरे आव्यो। लच्छि सुलक्षण ललना लाव्यो ॥ २७ ॥
दिन जोइ नगरी पेसता। चक्र न चल्ले सुर ठेलतां।
त्यारें वचन चवे ते चक्री। बोलाव्या मतिसागर मन्त्री ॥ २८ ॥
कहो किम चक्र न पेसें पोलें। ते मन्त्री बोल्या अब बोलें।
स्वामी साभलि वचन अम्हारा। आण न माने बन्धु तम्हारा ॥ २९ ॥
तेम्हा बाहुबली बल पेषे। कोन्हे नवि मन मांहें लेषे।
धीर वीर गम्भीर महाबल। वेरी गज केसरी अति चंचल ॥ ३० ॥
निज तेजें तरणी पण झप्यो। एह्वा वचन सुणीने कप्यो।
रोष चढयो राजा ते बोले। कोण महीपति म्हारे तोले ॥ ३१ ॥
मारु मान उतारु तेहनु। रणरमलावु बहुदल एहनुं।
त्यारे ते मन्त्री सुविचारी। बोल्या भूपति नें हितकारी ॥ ३२ ॥
रहो रहो स्वामी रीश न कीजे। तेहनु पेहेलो लेख लखीजे।
ते लेई विचारु चर जाये। वाटें कही खोटि नवि थाये ॥ ३३ ॥
जेम तिहाजईनें देहेलो आवे। जोईये साज पडूतर लावे।
एह विचार सभी मनें भाव्यो। आप्यो लेख सुदूत चलाव्यो ॥ ३४ ॥

बाहुबली के पास दूत भेजना :

चाल्यो दूत गयो ते तत्क्षण। भेट्या राजकुमार सुलक्षण।
आप्यो लेख सभा सहु बेठा। वाची वचन चवें ते रूठा ॥ ३५ ॥
कहे रे चर तें किम पग धार्यो। त्यारें बोले बोल विचार्यो।
मानो आण महीपति केरी। आपें भूमि वसो अधिकेरी ॥ ३६ ॥
त्यारें दूत वचनें कलमलीया। बलता वचन चवे ते बलीया।
आण अम्हे तेहनी शिर वहीये। जेह थी भवसागर ऊतरीये ॥ ३७ ॥
एहवुं कहि चढीया कैलाशे। लीधो संयम स्वामी पासे।
त्यारे ते चर पाछो बलीयो। आवीनें राजा विनवीयो ॥ ३८ ॥
स्वामी तेणें सहु ऋद्धि छंडी। सेवा आदि जिनेश्वर मंडी।
एहवु बचन सुणी तंह सीयो। मनमांहे वेराग न वसीयो ॥ ३९ ॥

आर्या

कोऽहं केयं वसुधा, बभूवुरस्यां कियंत ईशगणाः ।
तैः साक न गता सा, यास्यति कथ मयेति सह ॥ १ ॥ ४० ॥

बोल्यो वचन वली वसुधापति । बाहुबलीनी सीज मनोमति ।
चारु सो एक दूत चलावो । तेहनो आशय वेगे अणावो ॥ ४१ ॥
त्यारे ताणें मंत्र विचारी । दूत चलाव्यो बहुमति धारी ।
चाल्यो दूत पयाणे रेहेतो । थोडे दिन पोयणपुरी पोहोतो ॥ ४२ ॥

पोयणपुर का वैभव :

दीठी सीम सघन कण साजित । वापी कूप तडाग विराजित ।
कलकारजो नव जल कुंडी । निर्मल नीर नदी अति ऊंडी ॥ ४३ ॥
विकसित कमल अमल दल पती । कोमल कुमुद समुज्जल कती ।
वन वाडी आराम सुरंगा । अब कदब उदबर तुंगा ॥ ४४ ॥
करणा केतकी कमरख केली । नवनारंगी नागर वेली ।
अगर तगर तरु तिंदुक ताला । सरल सोपारी तरल तमाला ॥ ४५ ॥
बदरी बकुल मदाफ बीजोरी । जाई जूही जंबु जभीरी ।
चदन चंपक चाउर ऊंली । वर वासती वटवर सोली ॥ ४६ ॥
रायणरा बबू सुविशाला । दाडिम दमणो द्राख रसाला ।
फूल सुगुल्ल अभूल्ल गुलाबा । नीपनी वाली निंबुक निंबा ॥ ४७ ॥
कणयर कांमल लत सुरगी । नालीयरी दीशे अति चगी ।
पाडल पनश पलाश महाघन । लवली लीन लवगलता घन ॥ ४८ ॥
बोलें कोयल मोर कीगरा । होला हंस करें रवसारा ।
सारस सूडा चकू उतगा । लावां तीतर चारु विहंगा ॥ ४९ ॥
कोक चकोर कपोत सरावा । भ्रमरा गुंजारव रस भावा ।
कुसुम सुगन्ध सुवासित दिग्मुख । मद महत उत्पादित अतिसुख ॥ ५० ॥
दूत चल्यो वन वन निरखतो । पेठो पोल विषय हरषंतो ।
दिठी ऊंची पोल पगारा । अति ऊंडी खाई जल फारा ॥ ५१ ॥
कोशीसें मंडित बहुमारा । गोला तालन लागें पारा ।
नगर मझार चल्यो निरखतो । मन सु देवनगर लेखतो ॥ ५२ ॥
शिखर बद्ध जिन मंदिर दीठां । जाणें लोचन अमीय पइठां ।
सुन्दर सलखणा आवासा । मृगनयणी मंडित सुविलासा ॥ ५३ ॥

मेडी मण्डप बहुमत बारण । घरे घरे लेहेके मंगल तोरण ।। ५४ ।।
ते जोतो मनें थयो अचंभित । चाल्यो चर चहुवे अविलम्बित ।
दीठो माणिक चोक मनोहर । च्यारे पासें विराजित गोपुर ।। ५५ ।।
मणिमोती हीरा पर वाला । काली बेले अगर अतिकाला ।
चोराशी चहुटां हटशाला । चित्र-विचित्र न झाक झमाला ।। ५६ ।।
कुंकुम कस्तूरी कपूरा । चूआ चन्दन चमर सु चीरा ।
मखमल लालम सज्ज रसेसरु । बहु शकलात दुरंगीटशरु ।। ५७ ।।
ते सहु नगर तमासा जोतो । राज दुआर जइ चर पोहोतो ।
पूछवि पोल घणी गयगलीने । अबर जइ मनीयो रतिपतिनें ।। ५८ ।।

बाहुबली की राज सभा

त्यारे भूपति आप्यु आसन । कुशल प्रश्न कीधुं तभासन ।
बोल्यो दूत वचन ते वलतु । स्वामी सामलीये कहु चर तु ।। ५९ ।।
आज कुशल सविशषे तेहनें । तम्ह सरखा बाधव छे जेहनें ।
तो पण तेहनें मलवा जईये । जेम जगमाहें मोटा थईये ।। ६० ।।
तम्ह थी ते बांधव पण मोटो । ते सु मान धरो ते खोटो ।
ते माटे सु फोकट ताणो । ते छे त्रण्य दुखडह राणो ।। ६१ ।।
साभलि सर्व कहु ते माडी । मुको रोष हईयानो छाडी ।
साध्यो विजयारध अतिसुन्दर । भ्रजाव्या विद्याधर किंतर ।। ६२ ।।
म्लेच्छराय मारी वश कीधा । तेह तणे शिर दण्ड जदीधा ।
नेमि विनेमि नमाव्या चरणे । मागध वर्तुन आव्या शरणें ।। ६३ ।।
तरल तरग पयोनिधि तरीयो बांणें भूरि प्रभासविडरीयो ।
गंगासिंधु नदी अति डोहोली । आपी भेट अनूपम बोहोली ।। ६४ ।।
इठ चढीयो हिमवहहराव्यो । नट्टमालि निज सेव कराव्यो ।
पुण रमतो वृषभाचल आव्यो । जुगति करी तिहा नाम लिखाव्यो ।। ६५ ।।
लाट मोट कर्णाट कस्या बस । भेदपाठ भाट लीधा घस ।
मानी मरहट्ठा ऊजाड्या । सोगल सोर घणगे पाड्या ।। ६६ ।।
मालव मागधनें मुलतान । कन्नड द्राविड मोड्या लान ।
जाहल मलबार सवराड । कामरूप नेपाल सलाड ।। ६७ ।।
अंग बंग कंबोज तिलंगा । कुंकण केरल कीर कलिंगा ।
पंचाला बंगाला बब्बर । जालधर गंधार सुगंअर ।। ६८ ।।

पारस कुरुजांगल श्राहीर । कोशील काशी सकां तीरं ।
रूम सूम हर मजहद कीधा । कच्छ वच्छ वर मुद्रा दीधा ॥ ६६ ॥
भक्खर देश पड्या भगाणा । हलफलीया हेलाहीदुश्राणा ।
एवनादि बत्तीश हजार । देश मनावी श्राण श्रपार ॥ ७० ॥
बमणा सोल हजार मुगटधर । गाजे लक्ष चोराशी गयवर ।
तत्समान रथ गाचक चल्ले । पाद प्रहारे मेदिनी हल्ले ॥ ७१ ॥
छुन्नु सेहेसर मालसिभगी । कोड श्रठार तुरग सुरगी ।
बें श्रडतालीश कोडि सुगाम । सुन्दरसर शोभित बरचाम ॥ ७२ ॥
कर्बट खेट मटबक राजे । पत्तन द्रोण मुखादिक छाजे ।
नवनिधान मनवछित पूरे । चउद रयण दालिद्दवि चूरे ॥ ७३ ॥
जीणे लच्छि करी घरे दासी । कीर्ति कलाक कुबतनि दासी ।
चक्रपति सु बक न थइये । तेसु मानथरी नवि रहीये ॥ ७४ ॥
मान त्यजी तस श्राणज वहीये । भरत महीपति पद श्रनुसरीये ।
नही तर तस कोपानल चढरये । ताहारु भुजबल दल मलस्ये ॥ ७५ ॥
देशे विषय भगाणु पडस्ये । सुन्दर पोयणपुर उजडस्यें ।
त्रिते भीत पडि श्रायडस्ये । गढ पाडी मे दानज करस्ये ॥ ७६ ॥
मणिमोती हाटक लू टास्ये । बंदि पडचू माणस विघटास्ये ।
नाशी नर देशातर जास्ये । तीहारु लोकह सारथ थास्ये ॥ ७७ ॥
ते माटे डब-डब सहु मूको । भरतपतिनी सेवम चूको ।
एहवा दूत बचन बह बोल्यो । तो पण मन माहि नवि डोल्यो ।
रोम चढयो बोले रतिनायक । खोटु दूत भवेसु वायक ॥ ७८ ॥

श्रार्या

पूज्योग्रजोत्रभुवने रीत्यापि न मान्यते मयेति नृप ।
बाहुबलीत्यभिरुपै सज्ञा मकथ्यते हि वृथा ॥ २ ॥ ७६ ॥

बाहुबली का उत्तर

जे जनपद मुझ श्राप्यो जिनवर । ते लीधो किम जाये नरवर ।
त्रण्यलोक माहारे दशर्वात । एहने खण्ड छखण्डज धरती ॥ ८० ॥
तो एहनी किम श्राणज मानु । साहा मुहु वेसारु कानु ।
इन्द्र चन्द्र नागेन्द्र नमावु । दानव देव दिनेश भमावु ॥ ८१ ॥

मद झरता मय गय सबारु । धसमसता झटपट हठ दारु ।
हणहणता हयवर झकझोलु । रणसायर कल्लोले रेलु ॥ ८२ ॥
भूतपिशाच परेत हकारु । व्यंतर विद्याधर चक्कारु ।
लडथडता भडबड़ मच्चाडु । सुत्तो यमराणो जगाडु ॥ ८३ ॥
भूख्या राक्षस नें संतोष । क्षेतल्लो खेडे बल पोषु ।
रोस चढयो रण अगणे भाडु । गडगडता गिरि चरते पाडु ॥ ८४ ॥
मुकटबद्ध राजाने मारु । छत्रभग करी माद उतारु ।
शाकेता नगरी उज्जाडु । म्हारे को नवि आवे आडु ॥ ८५ ॥
विद्याधर बाजीगर माया । व्यतर अन्तर चचल छाया ।
ए जीते किम शूर वखाणु । मुझसु आणि भडे तो जाणु ॥ ८६ ॥
चक्रे करी कुम्भारज कहीये । दण्ड धरे दरवानज लहीये ।
यमवाहन गजवेसर बाजी । बाल रमति सरषी रथ राजी ॥ ८७ ॥
पायक पूतलडा समभासे । ते सारु किम मझने त्रासे ।
आण वहु हु तेहनी माथे । जे सुरगिरि अच्यो हरि हाथे ॥ ८८ ॥
ते विण आण वहै जे केहनी । तो लाजे जननी जग तेहनी ।
जा जा दूत जबानी करतो । एके बोल न बोले नर तो ॥ ८९ ॥
धातो जाय धणी नें केहेजे । मुझ पहलो रण आवी रहेजे ।
नही तर हु आबु छु वहेलो । चापी भूमि पडु तझ पहिलो ॥ ९० ॥
वीर वचन साचु हु भाषू । युद्ध करी जगे नाम उ राखु ।
त्यारे दूत गयो शाकेता । जाइ वीनवीयो भरत विनेता ॥ ९१ ॥

दूत का वापिस भरत के पास आकर निवेदन करना

बाहुबली तझ आण न माने । तेहना बोल न पोबे पानें ।
जो बली आतो दहेला जाऊ । नही तर बैठा गीत जगाऊ ॥ ९२ ॥
ते सामलो नें राजा रूठो । हावु ढील कसी ते ऊठो ।
साजो कटक झटक सु चालो । बाहुबलीनी धडभड टालो ॥ ९३ ॥
त्यारे सैन्य-सजाई कीधी । रण आवाने फेरी दीधी ।
मदमाता मयगलमलयता । तिजतरल नेजा झलकता ॥ ९४ ॥

सेना की तैयारी

घम-घम घुघर वाला । गुम-गुम गुजताल भगराला ।
घण्टा टका रव रणकन्ता । लकती ढाल धजा लेहे कता ॥ ९५ ॥

मग मगता मद जल मेहेकता । उत्त गा अंजनगिरि बन्ता ।
हस्त खडग गहि कर कर भाला ।
दतूशल मूशल सम चाला ॥ ९६ ॥

गुलगुलत मद गलता चाला । सादूरे कुम्भस्थल राता ।
चचल चमरालाशु डाला । उद्‌ डा चडा ऊडाला ॥ ९७ ॥

हिलि-हिलि कलित-कलित हे पारा ।
जलथलगामिकछी सारा ।

नीला पीला धवल तुरगा । काला कविला शबल सुरगा ॥ ९८ ॥

रणझणता गल कदल चगा । रग विरग मनोरम मत्त गा ।
आकुड वाकुड आकडी आला ।
कसम सभाकी तलर ढीम्राला ॥ ९९ ॥

ते उपरे चढी आठ कराला । मारु मरह ढाडढी आला ।
टाकचदेलाने चहुआण । सोलंकी राठौड़ सुराण ॥ १०० ॥

दहिआडा भीनेबोडाण । परमारा मोरी मकठाण ।
रोमो मुगल मल्या मुलताना । चान मलिक साथे सुलताना ॥ १०१ ॥

हबशी हूड फरगी फलका । चपल बलोच पलठाण सुठलका ।
चाल्या कटक विकट अति केहरी । अगा टोप शिल्हे सहु पेहरी ॥ १०२ ॥

भार्स्या षचरषजीने पेटी । भरी आभार बईल्ल झपेटी ।
ऊँट कस्या अरडाता वापर । तम्बू वाड तबेला पाषर ॥ १०३ ॥

भेसा भार भर्या अति भारी । शलकी शाढकजावेफारी ।
चाल्या चित्तभृतारहवर । ताणे तरल तुरगम रवभर ॥ १०४ ॥

देता डोट झपेटा पाला । छूटा भट छोटा छोगाला ।
दडेवडता दोगा ठयेटाला । मारे गाल फटाकाठाला ॥ १०५ ॥

कडछ्या कु छाला मु छाला । झगझगता झाल्या ते भाला ।
षेडा खड्ग गदा फरशी धर । चक्र चाप तोमर मुद्‌गर कर ॥ १०६ ।

खपूआ छूरी कटारी मूशल । डीगा डाग च आडे चचल ।
होका नाल हवाइ हाथे । वहु बन्धूक चलावी साथे ॥ १०७ ॥

विद्याघर निर्ज्जर मनोहारा । रचित विमान विनोद विहारा ।
देखी सैन्य षडगाडबर । हरख्यो भरत धराटमणीवर ॥ १०८ ॥

चढीयो छत्रपति सुविलास । चोषा चमर ढले ते पास ।
कीधू कूज दमामा वाजे । नादे गड़गड अम्बर गाजे ॥ १०९ ॥

ढम-ढम जंगी ढोल धसूके। साभलतां कायर मुख सूकें।
दो-दों मद्दल तबल नफेरी। भं भं झल्लरी भम्भा भेरी ॥ ११० ॥
बाजे काहल ताल कशाल। पूरे शंख सुबश विशाल।
बोले भाट भटाइ गाढे। खाखरीआ आगल थी काढे ॥ १११ ॥
एहवि अधिक दिवाजे जाये। वोहोला दल पोहोवी नवि माये।
रुनकटीआ आगल थी बाधर। कापी झाड करेते पाधर ॥ ११२ ॥
ऊड अडारा मोटा पाडी। वाकी वाट समारेखाडी।
अति अलगार करे ते मोटी। वाटे कहीयाये नवि खोटी ॥ ११३ ॥
चोप करी चाल्या चक्रीबल। वेगे जई पोहोता अतुली बल।
ते पहेलो आव्यो बाहुबली। दीवो चापि खड्यो रणभूतल ॥ ११४ ॥
करयु मुकाम रह्या ते रजनी। उग्यो दिनकर चाली धजिनी।
त्यारे रणवाजित्र ज वागा। साभलता कायर मन भांगां ॥ ११५ ॥
शूर सुभट रहवट खलभलीआ। वेहेलारण अगणे जइमलीआ।
माडयु युद्ध महीपति चढीआ। धीर वीर आगल थी बढीया ॥ ११६ ॥
छूटेशरधोरणी रण साथे। काढि कटारी झीसे हाथे।
थामे धनुष चढावी पाला। अहमहमिकया न दीये टाला ॥ ११७ ॥
झग झगता भाला भल भोके। भक भकता लोदी मुखे ऊके।
छूटे नाल हवाई हेका। बन्धूके मारे बहु लोका ॥ ११८ ॥
मोडे मुगर शिल्हे सह फोडे। चचल छत्र चमर वर त्रोडे।
नाचे धड बाजे रण तूरा। मुग्दर मारि करे चकचूरा। ॥ ११९ ॥
मदगेहे लागज शंकल शूडे। पाछल थी हाला पग गूडे।
धसता धड नाखेते कटकी। झटकेशटकक ते कटकी ॥ १२० ॥
नाशा धाय पड्यो बहु प्राणी। बलबलता वह मागे पाणी।
हरष्या भूत पिशाच निशाचर। व्यंतर वेताला शकाकुलर ॥ १२१ ॥
रुंडमुंड रण भूमि कराला। रुधिर नदी दीशे विकराला।
नेजा तेज करता मारे। तो पण नवि को जीते हारे ॥ १२२ ॥

आर्या

सदयै. समर घोरं, कृतवंतो वर्जिता भटाः सचिवैः।
कार्यं नृपतिनियोग, विनापि कर्तुं युक्तमिति किंचित् ॥ ३ ॥ १२३ ॥

त्यारें महिमति मन्त्री मलीश्रा ।
मन्त्रविचार विषय श्रतिकलीश्रा ।
ते सहु मन्त्र विचारो मोटा। जेहना बोल न थाये खोटा ॥ १२४ ॥
त्यान्हे क्षत्रिय भट सहारो। चारु एक विचार विचारो ।
ए बेहु चरम शरीरी राजे।एहने नवि काटो पण लाजे ॥ १२५ ॥
ए सुन्दर नर संयम पामी। कर्महणीने शिवपद गामी ।
ते थी बात विचारो वेहेली। जेम भाजे सघलीए जे हेली ॥ १२६ ॥

परस्पर मे तीन प्रकार के युद्ध करने का निर्णय .

त्रण्य युद्ध त्यारे सहु बेठा। नीर नेत्र मल्लाहव परठ्या ।
जे जीने ते राजा कहीये। तेहनी श्राण विनय सु वहीये ॥ १२७ ॥
एह विचार करीने नरवर। शल्या सहु साथे मच्छर भर ।
दीठु चारु सरोवर विमल। भरीऊ नीरह सित सित कमल ॥ १२८ ॥

जलयुद्ध

अति गम्भीर तरल तरले हरि। पेठा भूप अपर पट पेहेरी ।
झीले भूप भर्या बहु आँटे। माहो माहे रमे जल छाटे ॥ १२९ ॥
रमता भरत तणायो रेले। हारयो सहु जोता जल बेले ।
त्यारे बाहुबली दल हर्ख्यु। भरत कटक मन मठ अनिनिरख्यु ॥ १३० ॥

नेत्र युद्ध

नेत्र युद्ध करता पण हार्यो। बाहुबली महाबल जयकारयो ॥ १३१ ॥
चाल्या मल्ल अखाडे बलीश्रा। सुरनर किन्नर जोवा मलीश्रा ।
काछ्या काछ कशीकड ताणी। बोले बागड बोली वाणी ॥ १३२ ॥

मल्ल युद्ध

भुजा दण्ड मन मुड समाना। ताडता बर्णरे नाना ।
हो हो कार करि ते धाया। बच्छोबच्छ पड्या ते राया ॥ १३३ ॥
हक्कारे पक्कारे पाडे। वलगा वलग करी ते त्राडे ।
पग पडघा पोहो वीतल बाजे। कडकडता तरुवर ते भाजे ॥ १३४ ॥
नाठा वनचर नाठा कायर। छूटा मय गल फूटा सायर ।
गडगडता गिरिवर ते पडीश्रा। फूतकरता फणिपति डरीश्रा ॥ १३५ ॥

गढ गढ़ गड़ीग्रा मंदिर पडीग्रा।
दिगदन्तीव मक्या चलचलीग्रा।
जन खल भलीग्रा बालक छलीग्रा।
भय भीरु ग्रबला कलमलीग्रा ॥ १३६ ॥

तो पण ते धरणी धवढू के। लडथडता पडता नवि चूके।

भरत द्वारा चक्र फेंकना

त्यारें बाहुबली नवि डोल्यो। हलवेंसे चक्री हीदोल्यो ॥ १३७ ॥
देखी बाहुबली भट हसीग्रो।
भरत तरणा भट ग्रति कणमशीग्रा।
वलते रीश करी ने मुक्यु। चक्र बाहुबली करे ढुक्यु ॥ १३८ ॥
मान भग दीठो नृप रागे। बाहुबली चढीयो बेरागे
धिग धिग यह ससार ग्रसार। कदली गर्भ समान विचार ॥ १३९ ॥

बाहुबली का वैराग्य

विषय तरणा सुख विष सम भासे।
तन धन यौवन दिन-दिन नासे।
सज्जन सहु मलीग्रा निज कामे। सु कीजे हय गय वर धामे ॥ १४० ॥
घर धधे पडीयो ने प्राणी। पाप ग्रनन्त करे ते जाणी।
मेते मूढ पणु सु कीधु। ज्येठा बधवने दुख दीधु ॥ १४१ ॥
पहवो मनि वेराग धरीने। भरतपती सु ग्ररज करीनें।
निज राजे महाबल वेसारयो।
क्रोध लोभ मद मदन निवार्यो ॥ १४२ ॥
छडी ऋद्धि गयो जिन पासे। लीधी सयम भव भय त्रासें।
बरस एक मरयादा कीधी। ग्रन्न उदकनी बाधा लीधी ॥ १४३ ॥

बाहुबली की तपस्या

प्रतिमा योग धर्यो मनमाहे। उभा रही ग्रालंबित बाहे।
ध्यान धरे बहु जीव दया पर।
नवि बोले नवि चाले मुनिवर ॥ १४४ ॥
ग्रांख न फरके रोम न हरखे। वनसावज ग्रावीने निरखे।
वनचर तनुऊ घसता दीसे। तो पण मुनि न चळे ते रीसे ॥ १४५ ॥

नख कुं भिल्ल घसे ते भल्ली । देह चढी नाना विध बल्ली ।
विष विकराल भुजग भयकर । लबित गल कदल अति सुन्दर ॥ १४६ ॥
कान विषय माला ते कीधा । पषीयडे बहुपरे दुख दीधा ।
वरसाले बहु बीज झबूके । तो पण ध्यान थकी नवि चूके ॥ १४७ ॥
सघन घनाघन अम्बर गाजे । झझावात असेहेलो वाजे ।
लाबी झड माडीने दरषे । दादुर जल देषीने हरषे ॥ १४८ ॥
माता मोर करे रगरोल । बापीयडो बोले पीउ बोल ।
खलखल नीर बहेते कोतर । भरीया वारि सरोवर दुस्तर ॥ १४९ ॥
झर-झर बरसे रात अधारी । झूरे विरही नर नवनारी ।
जे रे हेतो वर चित्र प्रवासें । ते ऊभो बाहेर चोमासे ॥ १५० ।-
धूजे वनचर जाभी टाढे । नीलु वन न रहे हिम साढे ।
नवि सूये बेसे दृढ सवर । नवि ऊढ नवि पेहेरे अम्बर ॥ १५१ ॥
जे सूतो निशि ललना सगे । त शीयाले सहे हिम अगे ।
जे षड रस नव भोजन करतो । ते वनवासी अनशन धरतो ॥ १५२ ॥
अति उन्हाले लू बहु वाजे । तरस थकी नवि पाछो भाजे ।
दाझे देह तपे रवि मस्तक । तो पण न चले बोल्यु पुस्तक ॥ १५३ ॥
त्रण्य काल कीधु तप दुर्द्धर । तो पण मान न थाये जर्ज्जर ।
बरस दिवस पूगाते जे हूं । आवी भरत नम्यो पदतेहूं ॥ १५४ ॥
जपे भरत विनय मने आणी । मू को मान हईयासु जाणी ।
मुझ सखा पोहोवीतल केता । हवा हमे नेछे अण देता ॥ १५५ ॥
तु मुनि मण्डन मझ मद खण्डन ।
जनमनरजन भव भय भजन ।
कर करुणा करुणामय सागर ।
मुझ अपराध क्षमो गुण आगर ॥ १५६ ॥
मन थी शल्य तजो मुनिनायक । जिम प्रगटे केवल सुखदायक ।
इम क्षमावी चोल्यो नरवर । जग वेगे पोहोतो कोशलपुर ॥ १५७ ॥

बाहुबली को केवल ज्ञान होना

धरयु ध्यान हवे मुनि ज्यारे । केवल प्रकट थयु ते त्यारे ।
भाव धरी भवियण सम्बोधे । कर्म कलक कला न दिऊधे ॥ १५८ ॥

जय-जय भुजबलि नमित नरामर।
सकल कलाधर मुगति वधूवर।

रचना काल

संवत सोलसमें सतसहे। ज्येष्ट शुकल पक्षें तिथि छहे ॥ १५९ ॥
कविवर वारें घोघा नयरें। प्रति उत्तग मनोहर सुघरें।
अष्टम जिनवर तें प्रासादे। सामलीये जिन गान सुसादे।
रतनकीरति पदवी गुण पूरे। रचिया छद कुमुद शशि सूरे ॥ १६० ॥

कलश

उत्कट विकट कठोर रोर गिरि भजन सत्पवि।
विहत कोह सदोह मोहतम अघ हरण रवि।
विजित रूप रति भए चारु गुण रूप विनुत कवि।
धनुष पाचसै पचवीश वर उन्च तनुछवि ॥ १६१ ॥
ससार सरित्पति पार गत,
विबुध वृन्द वन्दित चरण।
कहे कुमुदचन्द्र भुजबली जयो,
सकल सघ मगल करण ॥ १६२ ॥

इति श्री बाहुबली छद बेअक्षरी समाप्त

ऋषभ विवाहलो

समरवी सरसति घो मुझ शुभमति,
करो वर वाणी पसाउ लोए।
प्रथम तीर्थंकर आदि जिनेश्वर वरणवू तास विवाहलोए ॥
जे नर नारिए भासए मारिए,
साभलसे मन नीरमलीए।
पामसे सुख घणा बाछित मनतणा,
भवि भवि नवल वलीए ॥ १ ॥

उलाबो—

वलीय घणुसु बखाणीए जाणीए भूतले नामए।
मरस सींम मोहमणि धन वन अनुपम गामए ॥
झलहले नीर भर्या सरोवर, कमल परिमल महे महे।
हस सारस रमे रगे, नदी नीरमल जलवहे ॥ २ ॥

चाल

नाभिराजा एव मरुदेवी राणी

देश कोशल वर तिहा सुरपति पुर,
सम सोहे नगर रलीया मणुंए।
कोशला सुन्दर मनखणा मन्दिर,
सुरे वरवाणु करु गढ तणुंए ॥ ३ ॥
माणिक चोकए चतुर सुलोकए,
चहु टा चोराणी जिहा नव नवाए ॥
भोग पुरदर नर रूपे रतिवर,
कामिनि कठे कोयलपिय ॥ ४ ॥
राज रगे करे महिपति नाभि राजा नय भलो।
चउदमो कुलकर सकल सुखकर जगत जाणे गुण निलो।
तस पटरा णी कविवर-वाणी चतुर मरुदेवी भली।
अति मधुरवाणी रूपखाणी रति हरावि रसकली ॥ ५ चाल ॥

स्वप्न दर्शन :

एके समे सुन्दरी पाछली सखी भरवरी,
सोलसपन रूडा नीरखती ए।
पहिलोए गजवर मदझर गिरिवर,
सरखो देवीनें मनि हरखतीए ॥ ६ ॥
बीजे धुरधर सबल चपलतर धवल नवल ते मनोहरए।
सहज सोहामणो पामीए त्रीजले हरी बरए ॥ ७ ॥
हसित पदमासने जेठी हस्त पदमे सोहए।
सपन चौथे लाछि दीठी जगत जन मन मोहए ॥
लहिकति लाबी फूल माला झबर गुंजारव करें।
पाचमे परियल मनमगाटमे नाशिकाने सुख करे ॥ ८ ॥
छवेस रजनीकर श्रमीझर सुखकर सोल कलाकरी छाजतोय।
कुमुद विकासए दश दिशा भासए, छट्ठे य रजनो राजतोय ॥
उगतो दिनकर सकल तमोहर कमल सोहाकर सातमेए।
मछ युगल जलमाहि रमे झल झलते अवलोकिनु आठमोए ॥ ९ ॥
अम पुरण कलश नवमे सरोवर दशमे भरयू ।
लहे लहे लहेरि नीर निरमल, कमल केशर पीजरयुं ॥
लोल जल कल्लोल गाजे, बारि राशी अग्यारमे।
वर हेम घडीउ रयणजीडनु सिंहासण ते बारमे ॥ १० ॥
देव विमानए चित्र नियानए,
रचना मनोरम तेरमेए।
नाग भुवन जन जोता हरे तनु मन,
समणे सोहामणे चउदमेए ॥ ११ ॥
राशी रतन तणी पच वरण गणी,
जगमग करतीए पनरमेए।
अनल अधूमए तेजे घग धूमए,
ऊंच शिखायें दीसे सोलमेए ॥ १२ ॥
मरुदेवी जागी प्रिय कह्युं गइ सपन फल पूछ्छ बली।
नरपति कहे तव पुत्र जिनवर हसे मनमणे होती रली ॥
सामली राणी सफल जाणी मलयती घारकि गइ।
नाना विनोदे दिवस जाता न जाणे हरषित थइ ॥ १३ ॥

हवि मास आषाढ तणो बीजो वदि पक्ष।
तिथि बीज मनोहर वार विराजित कक्ष ॥ १४ ॥
चवियो ग्रहमंदिर अवतरीयो जिनराज, ।
मरुदेवी कुखि धन्न सफल दिन आज ॥ १५ ॥

देवियों द्वारा माता की सेवा—

इन्द्रादिक आव्या कीधू गर्भ कल्याण।
मति थोडी सारु सु करीये रे ते वखाण ॥ १६ ॥
गया हरि निज थानकी मू की छपन कुमारी।
जिन माय तणी सेवा करवा मनोहारी ॥ १७ ॥
एक नित नहरावे, एक पखाले पाय।
एक बीजणडे चटकावे सटके नाखे वाय ॥ १८ ॥
एक वेणी समारे, नयणे काजल सारे।
एक पीयल काढे एक अमरी सणगारे ॥ १६ ॥
एक चोसर गूंथे, एक आपे तबोल।
एक पगते पीले, कुकम सुरग रोल ॥ २० ॥
एक आछा अबर पहरावे सुरनारी।
एक नलवटि केशर तिलक करे ते समारी ॥ २१ ॥
एक रयण भरी सो देखाडे जिनमाय।
एक वेणवजोडे एक सुकठि गाय ॥ २२ ॥
एक नवरस नाटक नाचे ने नव रगे।
एक बात कथारस कहे सकल सहेली सगे ॥ २३ ॥
इम हसता रमता पूगाते नवमास।
मधूमासे जनम्या पहोती सहुनी आस ॥ २४ ॥

ढाल बो

इन्द्र एव देवताओ द्वारा जन्माभिषेक

आसन कंपीया इन्द्रनाए, जाणीयो जिन तणो जनम ।
नमो नमो जय जिणेंद ॥ १ ॥
इन्द्र एरावण गजि चढ्या ए ॥ साथि चाल्या सुरवृंद ॥ नमो० ॥ २ ॥
मरुदेवि मदिर प्रागणेए, आवीया सकल सुरेन्द्र । नमो० ॥ ३ ॥
इन्द्र आदेश लेई सचीइए, गई जिन मातनें पास । नमो० ॥ ४ ॥

आवीया जिन जी इन्द्राणीइए, आपीवा इन्द्र ने हाथि । नमो० ॥ ५ ॥
इन्द्र उछगे बैसारीयए, चामर छत्र सोहत । नमो० ॥ ६ ॥
आवीले अमर बिलासनीय, नाचती करीय आणंद । नमो० ॥ ७ ॥
धवल मंगल बहु मंगल गावतीय, वाजता वाजिंत्र कोडि । नमो० ॥ ८ ॥
मेरु शिखरे पधरावीयाए, कीधलु' जनम विधान । नमो० ॥ ९ ॥
क्षीर सागर तणे जले भरयाए, कनक कलश सुविसाल । नमो० ॥ १० ॥
जिन प्रभु उपरि ढालीयाए, नहवण करयु' मनरंगी ॥ नमो० ॥ ११ ॥
जय जयकार अमर करे ए, दीधलु' वृषभ जी नाम ॥ नमो० ॥ १२ ॥
अमल अबर मणि मण्डनेए, शचीये करो शणगार ॥ नमो० ॥ १३ ॥
रूप अनूपम पेखतीए, नयण तृपति नवि थाय ॥ नमो० ॥ १४ ॥
जन्म महोछव हरी करीए, हयडले हरष न माय ॥ नमो० ॥ १५ ॥
मेरु थकी ते पाछा वल्याए, आविया जिनपुरी चन्द्र ॥ नमो० ॥ १६ ॥
जिन प्रभु जननी ने आपीयाए, स्तुति करी गया सुरराय ॥ नमो० ॥ १७ ॥
जनम महोछव जिन तणोए, हरखीया सूरि कुमुदचन्द्र ॥ नमो० ॥ १८ ॥

ढाल तीन

बाल क्रीडा—

आवो रे जोवा जइये, सखि मरुदेवी मल्हारे रे ।
गुण सागर रलिआमणो, ए त्रिभुवन तारणहार रे ॥ १ ॥

सो सूरज सो चादलो, स्यो रतिराणी भरतारे रे ।
सुर नर किन्नर मोही रह्या,
काई रूप अनोपम सार रे ॥ २ ॥

सोहासणि सुर सुन्दरी, जिन हरखधरी कुलरावे रे ।
आमण्डलि भामिनी, कांई गीत मनोहर गावे रे ॥ सो० ॥ ३ ॥

रमत करावें रगस्युं, सुरनारि के सिणगारे रे ।
दे आशीस ते रुयडी, तुं जय जय जगदाधारे रे ॥ सो० ॥ ४ ॥

दिन दिन रूपे दीपतो, कांई बीज तणो जिम चन्दरे ।
सुर बालक साथे रमें, सहु सज्जन मनि आणंदरे ॥ सो० ॥ ५ ॥

सुन्दर वचन सोहामणां, बोले बादुबडो बाल रे ।
रिम झिमवाजे घूघरडी, पगे चाले बाल मरालरे ॥ सो० ॥ ६ ॥

जीम सेहेजे विद्या सीखीयी,
काई सकल कला गुण जाणोरे ।
योवन वेस विराजता, काई तेजे जीत्यो भाण रे ॥ सो० ॥ ७ ॥
एक समे सुत देखीने, नाभि राजा करे विचार रे ।
रिषभ कुंवर परणावीयो,
जिन सफल थाये अवतार रे ॥ सो० ॥ ८ ॥
त्यारि बोल्या नाभि नरेन्द्ररे, तेडीय मन्त्री आणदरे ।
मझ मनें एह्नो उमाहरे, कीजे रिषभ विवाहरे ॥ ९ ॥
जो जो कन्या सुगुण सुहपरे, इम कही रह्या भूप रे ।
वचन वदे परधान रे, साभलो चतुर सुजाण रे ॥ १० ॥
कछ महाकछ रायरे, जेहनू जग जस गायरे ।

यशोमति सुनन्दा की सुन्दरता

तस कुअरी रूपे सोहेरे, जोता जन मन मोहेरे ॥ ११ ॥
सुन्दर वेणी विशाल रे, अधर शशि सम भाल रे ।
नयन कमल दल छाजेरे, मुख पूरण चन्द्र राजे रे ॥ १२ ॥
नाक सोहे तिलकु फूल रे, अधर सुरग तणू नही मूल रे ।
थन कन कनक कलश उतग, उदरे राजे त्रीबली भग रे ॥ १३ ॥
बाहूलता लाजी लेह केरे, हाथे रातडि रुडी भ्रल केरे ।
कुरु कदली सरखी चगरे, पगपानी अलतानो रग रे ॥ १४ ॥
रूपे रम्भ हरांवी रे, जेहने तोले रति पणनावे रे ।
प्रथम यशोमति नाम रे, बीजी सुनंदा गुण अभिराम रे ॥ १५ ॥
तेहने रिषभ कुअर परणावोरे, मोकली माणस नरत करावो रे ।
एह विचार सभा मन भाव्योरे, ततक्षण वाह दूत चलावो रे ॥ १६ ॥
तेणें जइ विनवीया राय रे, वात साभलता हरख न माय रे ।
हरख्या अतेउर परिवार रे, सज्जन कीधो जय जय जयकार रे ॥ १७ ॥
कीधूं बिवाह वचन प्रमाण रे, घरों आप्युं कुलट दान रे ।
वेहेलो दूत जइने आव्योरे, पाणी प्रहण वधामणी लाव्योरे ॥
जय जय रत्न कीरति मुनिन्द्ररे, पाठ कमल रवि कुमुदचन्द्र रे ॥ १८ ॥

पांचवीं ढाल

हवि साजन सहू नहोंतरीआ आव्या परवारे परवरीया ।
इन्द्र आव्या तेथ सप्त सता, सूर गुरुजें साथे हसता ॥ १ ॥

विवाह मण्डप :

आवी इन्द्राणी सूरनारी, करे हास विनोद ते भारी ।
चारु मण्डप जन मन मोहे, बहू मूल चन्दु वा सोहे ॥ २ ॥
टोडे तलीआ तोरण ते लहे के, हेम थभ तेजें बहु झलके ।
वेदी चारु करीने समारी, चोरी चित्र महा मनोहारी ॥ ३ ॥
दीसे चारु मोतिनि माला नाना रयणनो झाक झमाला ।
रभा रोपि मण्डपने आगलि, पवने फरके ध्वज आवलि ॥ ४ ॥
हवे जमणवार सामल ज्यो,
चित देइ उरमा लोमा करज्यो ।
पील्या चोखा कचोले भरीया सकट बासहु नोहु बरीआ ॥ ५ ॥
आगणे मण्डप सुविशाल, चोरि च्यार पासे पटशाल ।
तिहा चतुर सोहासणी नारी, माड्या बेसणा ते सहु हारी ॥ ६ ॥
मोटा पाटला नही डम डगता, सोहेते कीया बेपासे लगता ।
मांडी आडणी रूपा केरी, थाली बावन पलनीधुनेरी ॥ ७ ॥
मूक्या रजत कचोला आणी, सोहे मलर सुनानी चलाणी ।
चारु विनय करि तेडावीजे, चालो चालो असूरन कीजे ॥ ८ ॥
देव पूजीया प्रथम अघोली, आव्यु साजनु सहुमली टोली ।
वर चित्र पीताम्बर पेहेरी, हाथे झारी सोहे रूपेरी ॥ ९ ॥
पग धोई करीनि लगते, बेटु साजनु ते यथा युगतें ।
च्यार पीज भली परि बेठी, श्रीसवामि पदमनि पेठी ॥ १० ॥

विविध प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजन :

आप्यां हाथ परवालवा नीर, आसे नारी नवल पेहेरी चीर ।
सांजा यांजा ताजा घी गलतां,
झीणो फीणी डोठा परिमलता ॥ ११ ॥
देखीहे समीहे इट्टु हीसे, वेसणीये जलेबी आसे ।
रढि लागे घेवरनें दीठा, कोलहापाक पतासा मीठा ॥ १२ ॥

दूध पाक घणा साकरीया, सारा सकरपारा कर करीया ।
कोटा मोति अमोदक लावें, दलीया कसमसीआ भावे ॥ १३ ॥

अति सुरवर से बरुआ सुन्दर, आरोगे भोग पुरन्दर ।
प्रीमे पापड़ मोटा तलीया, मुरी आला अति उजलिया ॥ १४ ॥

सीरे सरसीये राई दीधी, मेल्हे केरी अथाणे कीधो ।
आप्या केर काकड स्वाद लागें,
लिंबू जमता जीभ रस जागे ॥ १५ ॥

नीलू आतीला छम काव्या, मू की तेल मरी झम काव्या ।
घी सोड़ा घणू करी छोल्या, लाबी चीरी करीने मोल्या ॥ १६ ॥

रूडो राइये वघारते दीधो, रसनाइ भल्यो रसलीधो ।
भगी आदाल्हो लवघरी, जमता फली लागे सारी ॥ १७ ॥

वृताकनुं शाक समार्‌यू, राइ तुम धरे हहि वास्यू ।
लावे सेवनु गाई सटके, खांड खोबा भरि मूके लेखे ॥ १८ ॥

मामा करता नामे घी खलके, भर्‌या डाबरिया ते झलके ।
माडा मोटी मोठि क्षीर पोली,
अमे रसिया झबोली झबोली ॥ १९ ॥

तली वेढ़मीये वांकटाल्यो, मन गमते बडे आक वाल्यो ।
लापसीये मन ललचाये, घारी पूरीये नृपति न धायो ॥ २० ॥

राजभोग कमोदनो कूर, जीरा साल सुगधनो पूर ।
चोखी दाल तूब परिनी सोहे, टून सरषी पीली मनमोहे ॥ २१ ॥

वाह बाट राईत मतमता, कढी मांहि मरीचमचमता ।
पांका कूट जीरा सु वघारया,
बीजा शाक ते आगलू हास्या ॥ २२ ॥

सथरा दही कातली आला, घोलुआ मोहि लवण जीराला ।
दुध कढी आचलाणी भरीया, गले घट घट ते ऊतरीया ॥ २३ ॥

चलु लीधा पछे सहु साथे, मुख शुद्ध करी सली हाथे ।
आव्या माडवे साजनु हसता, वारे बारे वधाण ते करता ॥ २४ ॥

खेर सार सोपारी ते रग, पानएलची सखर लविंग ।
मांहि मुंक्यूं कपूरब रास, जिन आवे मोटे रूडो बास ॥
पछे आह अनूपम कीधी, नाभि राजायें आग्यना दीधी ॥ ढा ॥ २५ ॥

छठवीं ढाल

जिन इन्द्राणीये नह्वारावीया, पछे कीधोरे वरनें सिणगारके
वर वारु सोभतो ॥ १ ॥

आदिनाथ का शृंगार

माथे रेषूव भर्यो भलो, रुडु नलवटेरें सोहे तिलक अपार के ॥ २ ॥
आंखिरे काजल सारीआ, गाले कीधलु रे रक्षानु इंधाण के ॥ ३ ॥
कान रे कुडल झलकता, तेजे जितीआरे पूरण शशि भाण के ॥ ४ ॥
बाजु-प्रबंध विराजता, हृदये लहेक तोरे मणि मोतीनो हार के ॥ ५ ॥
हाथें बाधी रुडी राखडी, आगलीये रे घाल्या वेढले थ्यार के ॥ ६ ॥
केडें कणीदोरो वेसतो, पगे झाझरे करे रण झणकार के ॥ ७ ॥
सेहे जे रुप सोहामणू, वलीये हुस्यारे बहु भूषण सार के ॥ ८ ॥
रूपेरे त्रिभुवन मोहीउ, हवे करीयेरे वली वणु सु बखाण के ॥ ९ ॥
इद्र भ्रमरी मलु साजनु, आडि चादलोरे करे सजन सुजाण के ॥ १० ॥
केशरना कर्या छाटणा, वली छाटेरे ते गुलाबना नीर के ॥ ११ ॥
फोफल पान आये घणा, मरदनी वारे नाखे शीतल समीर के ॥ १२ ॥

सातवीं ढाल

इन्द्र अणाव्योरे घोडली सोहे ।
पचवरण वारु अग ॥ रिषभ घोडे चढ़े ॥ १ ॥

विवाह के लिए घोडी पर चढ़ना

जोवा मलीया छे भासुर नर वृन्द । रिषभ घोड़े चढ़े ॥ २ ॥
कनक पलाण विराजतु , जेर बन्ध अनोपम तग ॥ रिषभ ॥ ३ ॥
चोकड ले चित चोरीयु, गेले रण झणकतो वग ॥ ४ ॥
रग विरग सोली घणी, जग मोहे ते वाग अमूल ॥ ५ ॥
रत्न जडयुं मषीघा रडयु वचे झलके सु नाना फूल ॥ ६ ॥
शीस भरीरे सोहामणि, सोहे सुन्दर श्रीफल हाथ ॥ ७ ॥
इन्द्र प्रभूकरि लीधला, घोड़े सटक चढ़्या जगनाथ ॥ ८ ॥
माथेरे छत्र विराजतु, हरि ढाले चमर बेहु पास ॥ ९ ॥
लु ण उतारति वेहेनडी, सहु विघन गया ते नासि ॥ १० ॥

एरावण सणगारियो, चाल्यो आगल झाक झमाल ॥ ११ ॥
कोटेरे घटारण कति बाजे, घम घम घूघर माल ॥ १२ ॥
भ्रमर भ्रमरी नाचे रगसु, माहो माहि करे घणी केलि ॥ १३ ॥
गध्रव राग करे घणा, वाजे ताल-परवालज मृदग ॥ १४ ॥
बाशलि वेण मनोहर वाजे नाना छन्द सुरंग ॥ १५ ॥
ढोल दमा मारे गड गड़े, रुडा सारणाइ नासाद ॥ १६ ॥
वाजे पच सबद ते सोहामणा, आहे तबलन फेरीना नाद ॥ १७ ॥
भूगल भेरी मदन भेर, ते साभलता सुख थाय ॥ १८ ॥
भाट भणे वीरदावली, त्यारि दान अनेक देवाये ॥ १६ ॥
रग विरग वे साजनु, तीहु सावे लानो पार ॥ २० ॥
इम उछव करतातं घणो, वर आवीयो तोरण बार ॥ २१ ॥
दोखी उलट मन मो धरे, बहु भव्य कुमुदचन्द्र राय ॥ २२ ॥

आठवीं ढाल

विवाह

मोड इन्द्राणीए बाधीयोए, नीमालीरे पोकीआ अरधीया देव।
साहेलीयेपो कीया आरधीया देव,
नाक साही वर निरखीयोए ॥ १ ॥
घाट चाल्यो तत क्षेव, माहि दामाहि वेसारीए ॥ २ ॥
अन्तर पडधरु जाम, कन्या बेसारिए बीजटिए ॥ ३ ॥
लगन वेला थइ नाम, सकल आचार गुरुयें करयोए ॥ ४ ॥
काली गाँठी सावधान हस्ते मेला वहवोए ॥ ५ ॥
कीधलां अवर विधान, देव वाजिअ ते वाजीआए।
फुलनी वृष्टि अपार गीत गाये सुन्दरी ए ॥ ६ ॥
सुर करे जय जयकार, चोरीये रीति सहु कीधलीए।
वरतीआ मगल च्यार, विनम वारु कस्यो जुगतिसु ए ॥ ७ ॥
आपीयाँ अढलिक दान, लोक व्यवहार ते सहु कर्यो ए ॥ ८ ॥
सज्जन दीधला मान, अधिक आडम्बर आवीआ ए ॥ ६ ॥
बहुयर आपणे घेरि, मनना मनोरथ सहु फल्याए ॥ १० ॥
उछव थयो भलिपेरि, इन्द्र उछव करि घरि गयाए ॥ ११ ॥
मन मांहि हरष न माय हास विनोद करे घणाए ॥ १२ ॥
राज्य करे जिन राय, ताहेलोये कीया, अरधीया देव ॥ १३ ॥

नवीं ढाल

ऋषभनाथ का परिवार

पाले अनूपम न्यायरे ओम्हा सेवे सुरनर पाय।
त्रिण भुवन जस गायके, अभिनवो राजीयोरे ॥ १ ॥
भोगवे मनोहर भोगरे, नाना विध सुख संयोग।
धन धन कहे छे सहु लोग के, जगे जश गाजियोरे ॥ २ ॥
यसोमतीये जाया पुत्ररे भरतादिक सौ सुचित्र।
ब्राह्मी तनया पवीत्र के, जगमाहि जाणीयेरे ॥ ३ ॥
बाहुबली बलवन्त रे, सुन्दरी बेहनें सोहत।
जनम्यो सुनन्दाये सतके, रूप वरवाणीयेरे ॥ ४ ॥
सेवे त्रिभुवन सर्व रे मन माहि न धरे गर्व।
ज्याशी लाख पूरव के, व्येल्या भोगसु ए॥ ५ ॥

चिन्तन एवं वैराग्य

एक समयते भूपरे, दीठी नीलजश रूप।
जाणी अथिर सरूप के, मन धर्यु योग स्यु रे जी ॥ ६ ॥
धिग धिग एह संसार रे, बहु दुख तणो भण्डार।
जुठो मल्यो सहु परिवार के, को केहु नही रे ॥ ७ ॥
राज्ये नहिं मुझ काज रे, सु कीजे सेना साज।
भोगे त्रपति न आज के, लग णेवली सहीरे ॥ ८ ॥
क्षण क्षण छूटे आयरे, योवन राख्यु नवि जाय।
स्यु कीजे महीराय के, तणी पदवी भलीरे ॥ ९ ॥
काले पडसे कायरे, नहि रासे बापने माय।
न थसे कोइ सहाय के, नरक जता बली ॥ १० ॥
नाना योनि मझार रे, भमीयो भव घणी एक बार।
न लह्यो धर्म विचार के, लोभ न पर हर्यो रे ॥ ११ ॥
नही पालो व्रत आचार रे, जीव कीधा पाप अपार।
विषय वलुधो गमार के, हा हुतो फर्यो रे ॥ १२ ॥
इम धरी मन वेराग रे, कर्यो मोह तणो परित्याग।
कोसु लाग न भाग उदासी जिन थयो रे ॥ १३ ॥
भरत ने आप्यू राजरे, महिपतिनु मुक्यु साज।
चरित्र लेवाले काज के, अक्षय बड़े गयारे ॥ १४ ॥

दसवीं ढाल

तपस्या

च्यार हजार राजस्युं ए, माल्हतडे लीधलो समभार ।
सुणों सुन्दर, लीधलो समभार ॥ १ ॥
राज मुक्युं त्रण लोकनुए ॥ मा ॥ सफल कीधो अवतार ॥ सु ॥ २ ॥
आवीआ इन्द्र आणद सु ए ॥ मा ॥ सुर करे जय जयकार ॥ सु ॥ ३ ॥
जय जग जीवन जग धणीए ॥ मा ॥ जय भय सागर तार ॥ सु ॥ ४ ॥
त्रीजु कल्याणक तपत तणु ए ॥ मा ॥
करि गया हरि सुरलोग ॥ सु ॥ ५ ॥
सयम लेइ छद्मासनोए ॥ मा ॥ लीधलो स्वामीये योग ॥ सु ॥ ६ ॥
पारणें आमरे उतार्‌याए ॥ मा ॥ कोइ न जाणें आचार ॥ सु ॥ ७ ॥
इम करता छह महीना गयाए ॥ मा ॥ नही मले शुद्ध आहार ॥ सु ॥ ८ ॥
एकदा ढेचरी ने गयाए ॥ मा ॥ श्रेयास रावने धामि ॥ सु ॥ ९ ॥
आहारनी प्रगति दीठी भली ए, तिहा रह्या त्रिभुवन स्वामि ।
एक बरसे कर्‌यूं पारणु ए, ईक्षुरस अमीय समान ॥ १० ॥

आहार

लेइ आहार जिनवरे कर्‌युं ए ॥ मा ॥ रुयडलु अक्षयदान ॥ सु ॥११॥
श्री जिनवर पछे वने गया ए ॥ मा ॥ योग लीयो त्रणकाल ॥ सु ॥१२॥
बार प्रकारे तप करे ए ॥ मा ॥ जिम आहारनु यू गति दीठी ॥ १३ ॥
तिहा रह्या त्रिभुवन स्वामी सू टल कर्म जजाल ॥ १४ ॥
ध्यान धरे अति नीर्मलुए ॥ मा ॥ अचलमन मेरु समान ॥ सु ॥ १५ ॥

कैवल्य प्राप्ति

घातीया कर्मनो क्षय करीए ॥ मा ॥ अपनु केवल ज्ञान ॥ सु ॥१६॥
समोसरण अमरें रच्युं ए ॥ मा ॥ बार सभाने सोहत ।
धर्म उपदेश दे उजलोए ॥ मा ॥ सुरनर चित मोहत ॥ सु ॥१७॥

निर्वाण

विहार करीनें सबोधीयाए ॥ मा ॥ भव्य प्राणी तणा वृंद ॥ सु ॥१८॥
अचल अष्टापदे जाइ चढ्‌याए ॥ मा ॥ केवली आदि जिनेंद्र ॥ सु ॥१९॥
तिहा जई स्वामीयें टालीयु ए ॥ थाकता कर्म नु नाम ॥ सु ॥२०॥
निर्वाण कल्याणक सुर करंए ॥ मा ॥ पामीया मुगति वर ठाम ॥ सु ॥२१॥

रचनाकाल एवं रचना स्थान :

संवत सोल अठ्योतरे ए ॥ मा ॥ मास आषाढ़ घनसार ॥२२॥
उजली बीजरलीयां मणीए ॥ मा ॥ मतिभलोते शशिवार ॥ सु ॥२३॥
लक्ष्मीचन्द्र पाटें निरमलाए ॥ मा ॥ अभयचन्द्र मुनिराय ॥ सु ॥२४॥
तस पदे अभयनन्दि गुरुए ॥ मा ॥ रत्नकीरति सुभकाय ॥ सु ॥२५॥
कुमुदचन्द्रे मन उजलेए ॥ घोघा नगर मझारि ॥ सु ॥२६॥
रिषभ विवाहलो कीधलोए ॥ मा ॥ सीखसेजे नर नारि ॥ सु ॥२७॥
तेहने घरें आणंदह स्येए ॥ मा ॥ पोहोचसे मनतणी आस ॥२८॥
स्वर्ग तणा सुख भोगविए ॥ मा ॥ पामसे मुगति विलास ॥ सु ॥२८॥

इति ऋषभ विवाहलो समाप्त ।

नेमिनाथ का द्वादश मासा

(३)

आषाढ मास

मास आसाढ सोहामणो जी घन बरसे घोर अंधकार जी ।
नीदये नीर वहे घणा वारु मोर करे किंगार जी ।। १ ।।
मंदिर आवो मोहन मुझ उपरि धरिय सनेह जी
एकलडी धरि किम रहु माहरी पल पल छीजे देहजी ।। २ ।।

सावन मास :

श्रावण नाळे सरवडा त्यारि थर थर धूजे शरीर जी ।
राति अंधारि झूरता किम करी मनि धरी धीर जी ।
मंदिर ।। ३ ।।

भाद्रपद मास :

भाद्रवडो भरि गाजियो लवे बीजली वारो वार जी ।
त्यारि साभरे वारो वार जी त्यारि साभरे प्राण आधार जी ।। ४ ।।

आसोज मास

आसो दिवस सोहामणो, नही कादवनो लवलेश जी ।
वाटलडी रलिया मणी, किम नाविया नेम नरेश जी ।। ५ ।।

कार्तिक मास

कातिय दिन दिवालिना सखि घरि-घरि लील विलास जी ।
किम करु कत न आवियो ह्वेस्यु करिये घरि वासि जी ।। ६ ।।

मंगसिर मास

मागशिरे मन नवि रहे, किमकरि मोकलू संदेस जी ।
मनि जाणू जे जई मिलू, धरि योगण करो वेस जी ।। ७ ।।

पोष मास

पोसिउ सपडे घणी पीउडे माग्यो तप सोस जी ।
कोणस्यु रोम धरी रहु, करमने दीजे दोस जी ।। ८ ।।

माघ मास ·

माहि न आणी मोहनी, किम निठोर थया यदुराय जी ।
प्रेमे पधारो परुहणा, हू लागु हु लालन पाय जी ।। ९ ।।

फागुण मास :

फागुण केसू फूलियो नरनारी रमे वर फाग जी।
हास विनोद करे घणा, किम नाहें धर्यो वेराग जी ॥ १० ॥

चैत्र मास :

कोयलडी टहूका करे, फल लहे अम्बा डाल जी।
चैत्रे चतुर चित चालिये, किम तजीइ अबला काल जी ॥ ११ ॥

वैशाख मास :

वैशाखें तड़को पडे लयु, दाझे कोमल काय जी।
ते माटियाउ धारिये एह योवन्या दिन जाय जी ॥ १२ ॥

जेठ मास :

नीट जेठोडी नवि रहे, धरि पथियडा सहु आवे जी।
नेमि न आव्या किम करु, मुन्हे घरियण न सुहावे जी ॥ १३ ॥

उजल जिन जर चड्या, रह्या ध्यान विषय वितलावजी।
जय जय रत्नकीर्ति प्रभु, सूरी कुमुदचन्द्र वलि जाय जी ॥ १४ ॥

(४) नेमिश्वर हमची

श्री जिनवाणि मनि धरु रे, आपो वचन विलास।
नेमिकुमर गुण गायस्यु तो, हैडे धरी उल्हास ॥ हमचडी ॥

हमचडी हलि हेलि रे, धरि करिये नवरग केलि।
राजमती वर नेमिकुमरते, गाता मनि रग रेलि रे ॥ १ ॥

हमची हमची सहिय साहेली, आवो करि सिणगार।
समुद्र विजय सुत रगे गाइये, जिम तरीये ससार रे ॥ २ ॥

सोरठ देश सोहामणो रे, वन वाडी आराम।
गोधन कलि करता दीसे, रधिया रुडा गाम रे ॥ ३ ॥

निरमल नीर भर्या ते सरोवर, फूल्या कमल अपार।
परिमल ना लीधा ते भमरा, उपरि करे गुजार रे ॥ ४ ॥

सुन्दर सोहे सारडा रे, बगला बेठा टोले।
हंसा हसी केलि करता, चकवा चकवी बोले रे ॥ ५ ॥

वाटलडी रलिया मणी रे, पथियडा पथि चाले।
सबल सीस सोहामणी तो, अणगमतु नही चाले रे ॥ ६ ॥

ते माहि नवरगी नगरी द्वारवती वर ठाम।
गढ मढ मदिर मालियडा, तो निरखता अभिराम रे ॥ ७ ॥

जेहने पासे सागर राजे, गाजे कुल कल्लोल।
मरिए मोती पर वाली भरीयो जल चरना झक झोल रे ।। ८ ।।
राज करे तिहा राजीयो रे, रूपे रति भरतार।
साभलियो बलियो अति, कलियो पातलियो सकुमाल रे ।। ६ ।।
अर्ध खण्ड नो राणो जाणो, नारायण तस नाम।
बलभद्र बन्धव मन्त्री सोहे, सोभागी गुण धाम रे ।। १० ।।
नेमि कुवर स्यु प्रेम धरता, करता क्रीडा हासु।
अह निसि गीत विनोद वहंता, घडियन मुके पासु रे ।। ११ ।।

जलक्रीडा के लिए जाना

तेह तणी रमणी सुर रमणी सारखी सोलह हजार।
तेहस्यु हास विलास करता, सफल करे अवतार रे ।। १२ ।।
एहेवे शरद समे ते आव्यो, खेले अवला बाल।
निरमल कमल-कमल बन सोहे, बोले बाल मराल रे ।। १३ ।।
त्यारि नेमि कुअर कान्हुयडो, बलग हलधर हाथि।
सत्यभामा रा हीने रुखमणी, अंतेउर सहू साथे रे ।। १४ ।।
वन क्रीडा करवाने चाल्या, वाटे रमता रहेता।
मनरगे मनोहर नामे, कमला कर जई पुहता रे ।। १५ ।।
झटकेस्युं झीलीनि कलिया नेमिकुवर ने पहेला।
मोतियडु नाखी ने पहेर्या बीजा अबर हेलारे ।। १६ ।।
हसता हसता टोलि करता नेमिकुअर महाराजे।
पोतीयडुनी चोवा आप्पु सत्य भामा ने काजेरे ।। १७ ।।
ते तो रीस करनी बोली, सत्यभाभा अति गहेली।
एवहूं हांसू न कीजे मझस्यु हूं पटराणी पहेली रे। १८ ।।
जेणे सारिंग धनुष चढाव्यु, हेला शख बजाइयो।
नागतणी सेजडिये सूतो, नागिनही बीहाव्यो रे ।। १९ ।।
तेहनू पोतीयडु नीचौऊं अवर न जाणू कोई।
मोटा सरिसू मान न कीजे, मनस्यु विमासी जोई रे ।। २० ।।
नेमिकुमारे साभलीयू रे, तेहनू वचन अटारू।
मनस्यु एह विचार कर्यो जी, एहनु मान उतारो रे ।। २१ ।।
तिहाँ थकी ते पाछा वलिया आव्या नगर मझारि।
नेमिकुअर आयुधशालाई पेठा मच्छर भारि रे ।। २२ ।।

नेमिनाथ द्वारा शस्त्र बल दिखाना

सटकें धनुष चडाव्यु सटके, नाग शय्याइं सूता ।
पूर्‌यो शंख निशंक करीने, लोग करया भ्रम भूता रे ॥ २३ ॥
तरु कटू कडीया गोपुर पडिया गढ मोटा गड गडिया ।
भट भड भडिया भय लड़ थड़िया, दो गति दड बडिया रे ॥ २४ ॥
गिरि थर हरिया फरिण सल सलिया कायर ते करिण करिणया ।
सुर खल भलिया ससि रवि चलिया, सायर ते झल हलियारे ॥ २५ ॥
फूटा मान सरोवर मोटा, वचचर सघला नाठा ।
हए हएता हयवर ते छुटा माता मयगल त्राठा रे ॥ २६ ॥
राज सभाई बैठो राजा, सांभलि ने कल मलियो ।
नगर विषै कोलाहल करीयो कोरण महीपति बलियोरे ॥ २७ ॥
तेहनू वचन सूणी बलभद्रं बल तो उत्तर दीधो ।
सत्यभामा ना वचन थकी ए, नेमिकुमारे कीधु ॥ २८ ॥
त्याहारि ते मन माहि संक्यो कीधो मनस्यु विचारे ।
राजा ग्रहमारु लेस्ये बलियो, करस्ये मान उतार रे ॥ २९ ॥
बलता हलधर बधव बोल्या ए राजेस्यु करस्ये ।
वर वेराग तणू ए कारण, पामीय सयम लेस्ये रे ॥ ३० ॥
ते सामलीने मनस्यु रवीयो सयम लेरणा सच ।
उग्रसेन कु मरिस्यु कीधो, तस झीझा परपंचारे ॥ ३१ ॥
घरि आवीने मण्डप रचियो सज्जन सादर करीया ।
छप्पन कोडि यादव नो हतरिया परिवारि परिवारिया रे ॥ ३२ ॥
जमरणवार कीधी ते युग ते, संतोख्या नरनारी ।
जान जवाने काजि केहवी, नांदरणी सिरणगारि रे ॥ ३३ ॥

राजमती का सौन्दर्य

रुपे फूटडी मिने जूठडी, बोले मीठडी वांणी ।
विद्रुम उठडी पल्लव गोठडी, रसनी कोटडी वरवाणी रे ॥ ३४ ॥
सारग वयरणी सारग नयरणी, सारग मनी श्यामा हरी ।
लकी कटि भमरी बकी, गकी हरिनी मारिरे ॥ ३५ ॥
सिथडलो सिंदूरे भरियो, केसर टीला करिया ।
पानतरणी बीडीयें मुखडा, भरिया ते रग बग्या ॥ ३६ ॥
झग मग कानि झालि झबूके, उगनिया नग जडिया ।
अबला अबला नाग बलाया, सु दर सुनें घडियां रे ॥ ३७ ॥

सार पचकडी कबु कोठडी, मोटडी फूली फावे ।
सेस फूलनू मूल न थापे, सिषडलो सोहावेरे ।। ३८ ।।

भूमकडु झमके ते झांझु, जोता मनडु मोहे ।
बारु वीटी मिली ग्रगूठी नख वट टीली सोहेरे ।। ३६ ।।

चंपकली पीला रतलिया मादलिया मचकाला ।
मोती केरो हार मनोहर भूमकडा लटका लारें ।। ४० ।।

राखडली रढियाली जालि जोता हैडे हरखी ।
खीटलडी मीटलडीराखी, खते, जोवा सरीखी रे ।। ४१ ।।

हाथे चूडी रगे रुडी, काकण चागण चोटा ।
बाहोडली सरीखा बेहरखडा, मलिया वलिया मोटा रे ।। ४२ ।।
कर करि वालिका रेली रे, मोरली मोहन गारी ।
माणिक मोती जडी मनोहर बेसरनी बलिहारी रे ।। ४३ ।।
धम धम धम के घुघरडारे, बीछीयडा ते वाजे ।
रमझम रमझम झाझर झमके, का बीषल के राजे ।। ४४ ।।
किसके पहेरण पीत पटोली नारी कुअर चीर ।
किसके ग्राछा छापल छाजे सालू पालव हीर रे ।। ४५ ।।
किसके ग्रमरी रग सुरगी किसके नीला कमखा ।
किसके चूनडियाला चमके किसके राता सरिषा रे ।। ४६ ।।
किसके पहिरण जाद रचायो किसके चोली चटकी ।
किसकी ग्रतलस उची उपे, रग तणो ते कटको रे ।। ४७ ।।
किसका चरणा घुघरियाला, किसका ते वषीयाला ।
किसका कमल बना कनियाला, किसका ते मतियालारे ।। ४८ ।।
मयगल जिम मलयती वाले, कोयल सादे गाये ।
धवल मगल दीये मनरगे, मुनि जनवि चलावे रे ।। ४६ ।।

बारात का प्रस्थान

हयवर गयवर रथ सिणगार्या, पायक दल नही पार ।
बाकी बहेले हरि जोतरिया, चग तणो झणकार रे ।। ५० ।।
पालखडी चकडोल सुखासण बेठा भोग पुरन्दुर ।
चाली जांन कर्यो ग्राडबर, मलिया सुरनर किन्नर रे ।। ५१ ।।
समुद्रविजय सिव देवी राणी, हरि हलधर सहु मांहे ।
नेमिकुमर ने परणावामां भरिया ते उछाहे रे ।। ५२ ।।

नेमिकुंयर हाथीयडे चढिया, माथे खुंप बिराजे।
कांने मणि कुंडल देखीने, वीर जनीकर लाजे रे ।। ५३ ।।
बेनडली बेठि ते पासें भामणडा उतारे ।
रूप कला देखी ने जेहनी, रतिपति हैडे हारे रे ।। ५४ ।।
गाये गीत सोहामणि रे, दीये वर प्राशीस ।
जय जगजीवन वर जय जग नायक, जीवो कोडि वरीस रे ।। ५५ ।।
धन धन मात पिता से धन धन, धन धन यादव वंश ।
जिहां जग मंडण भव भय खंडन, अवतरिया जिन हस रे ।। ५६ ।।
ढमके ढोल दमामा मद्दल, सरणाई बाजत ।
पंच शब्द भेरी न फेरी, नादि नभ गाजत रे ।। ५७ ।।
वाटिं हास विनोद करता, चाल्या यादव वृंद ।
वहेला जई जूनेगढ पहोता, सज्जन मन प्राणंद रे ।। ५८ ।।
उग्रसेन प्रादरस्यु साहमू कीधे ते मल भासे ।
लाजते वाजते वारू पहोता ने जनवासे रे ।। ५९ ।।
धसम सती धाई ते त्याहारिं साथे सहीयर वाल्ही ।
गोखि चढी ते वन जोवाने, राजामतीमनि ह्माल्ही रे ।। ६० ।।

बरात देखने की उत्सुकता

राजमती बोली ते त्याहारि, साभलि सहीयर मोरी रे ।
जो तु नेमिकुंग्ररि देखाडे, हू बलिहारि तोरी रे ।। ६१ ।।
चामर छत्र टलेबे पासे रूपे मोहन गारो ।
हाथिडा उपरि जे बैठो उपेलो वर ताहरो रे ।। ६२ ।।
राजीमती ने वचन सुणीने, साहमू जोवा लागी ।
नेमिकुयर वर देखि हरषि प्रेमे मनस्यु जागी रे ।। ६३ ।।
त्यारिं ते तेडावी माये राजीमती न्हवरावी ।
सणगारी सहूने मन गमती, रूपे रंभ हरावी रे ।। ६४ ।।
तेहवे तेज मणी प्राखडलली बहेल कदेता मटकी ।
राजीमतीना मन माहे ते वारे वारे खटकी रे ।। ६५ ।।
जेहवे लगन समय थयो जाणी, हरखे सहू हल फलिया ।
नेमिकुग्रर परणवा चढिया, साहमासोनी मलिया रे ।। ६६ ।।
ते देखी सका ता चाल्या, मन माहि बल बलिया ।
प्रागलि थी गाढेगां गरता, रडता पशुप्रां सांभलिया रे ।। ६७ ।।

बाडि भरी राख्या ए स्याहने, पुछ्यु ते जग दीशों।
तह्या गोखने कारणि स्वामी, ते सघाला मारीसेरे ॥ ६८ ॥
तेहनूं वचन सूणी ने स्वामि, मन माहि कल मलिया।
धिन धिग परणे व ने माथे नेमिजी पाछा वलिया रे ॥ ६९ ॥

नेमिनाथ का वैराग्य

मन माँहि वेराग धरीने, मूक्यो सहु ससार।
नेमिकुयर सयम लेवाने, जई चढिया गिरनारि रे ॥ ७० ॥
सहसा वन मा सयम लीधू, कीधू आतम काज।
त्यारि तप कल्याणक कीधु आव्या ते सुरराज रे ॥ ७१ ॥
कोलाहल बाहिर साभलिने, सुंसु करती उठी।
पूछी सजनी वल तुं बोली, नेमि गया गिरि रूठी रे ॥ ७२ ॥
तेडे वचने पुहवीतलि, लोटे जग अछाडे।
हैडुताडे चोली फाडे, रडती गढि आडेरे ॥ ७३ ॥

राजुल का विलाप

रोसें हार एकावल ओडे, चटकें चूडी फोडे।
ककण मोडे मन मचकोडे, आपण पू व खोडेरे ॥ ७४ ॥
केमे अणगल पाणी नाल्या, के तरु चोडी डाल।
साधु तणी निंदा मे कीधी, जूठा दीधा आल रे ॥ ७५ ॥
के में रजनी भोजन कीधा, के मे उबर खाधा।
के मे जीव दया नही पाली, वन माहि दव दीधा रे ॥ ७६ ॥
के मे बहुयर बाल विछोह्या, के मे परधन हरिया।
कद मूलना' खल्यण करिया कि मे व्रत नही धरिया ॥ ७७ ॥
के में कूडा लेखा कीधा, खोटी मया माडी।
छाना पाप करया ते माटे, नेमि गया मझ छाडी रे ॥ ७८ ॥
इम कहेती लडथडती पडती, अडबलती वल वलती।
अ ग वलू रे मनस्यु झूरे, आखि आसू ढलती रे ॥ ७९ ॥
लावी नही बोले बाला रातिपण नवि सूये।
मनुस्यु भूख तरस नही वेदे, जिन जिन जपति रोवे ॥ ८० ॥
किम करी दिननि गमस्यु पीउडा तुम पाखि कम करस्यु।
जिम जल पाखे माछलडी तिम विलखी थइने मरस्युं रे ॥ ८१ ॥
वाडि बिना जिम वेलि न सोहे, अर्थ विना जिम वाणी।
पंडित बिन जिम सभा न सोहे, कमल बिना जिम पाणी रे ॥ ८२ ॥

राजा विरण जिम भूमि न सोहे, चन्द्र विना जिम रजनी ।
प्रीउडा विन जिम अबला न सोहे, सांभलि मोरी सजनी ॥ ८३ ॥

ते त्याहिरि सजनी ते बोली शोक न कीजे गहेली ।
एह थी रुडो वर परणावू उठिखूसी था वहेली रे ॥ ८४ ॥

राजीमती बल तोते बोली, फटि मुंडीस्यु बोली ।
नेमि विना नर सघला बीजा, माहरे बधव तोले रे ॥ ८५ ॥

सहीयर सहू समझावी थाकी ते मनमा नवि आवे ।
उजल गिरि जई सयम लीधु, ते सघलो जगि जारणे रे ॥ ८६ ॥

राजीमति ते व्रत पाली ने, पहोती स्वर्ग दुवारि ।
नेमि जिनेश्वर मुगति गया ते, कुमुदचद्र जयकारे रे ॥ ८७ ॥

भट्टारक श्री कुमुदचंद्र कृत श्री नेमिश्वर हमची गीत समाप्त

राग मावणी गीत : (५)

गीत

नेमजी ने वालो रे भाई, जादव जीने वालो रे भाई ॥
हु तो योवन भरि किम रहेस्यु रे, बलि विरह तरणा दुख सहेस्यु रे ।
घरि कोरण थकी सुख लहेस्यु रे, हसी बात कोह्ने जइ कहेस्यु रे ॥ १ ॥
तह्मे जूउ जूउ मनस्यु विचारी रे कोई नारि तर्जे निरधारी रे ।
पूछो वाटे जता नर नारी रे, कोई कहेस्ये ए बात न सारी रे ॥ २ ॥
तुं तो त्रण्य भुवन केरो रांणो रे, रखेरी सहूंयामा आणो रे ।
मह्मस्यु एवडु तह्मे ताणो रे, अह्मे दासी तह्मारडी जाणो रे ॥ ३ ॥
जूउ आवे छे यादव राय रे, बली रोवे शिवा देवी माय रे ।
बिलखी थई पूठई धाय रे, वछ तुझ विना मे न रहे वाय रे ॥ ४ ॥
तह्मे मोहन दीनदयाल रे, तह्मे जीवन दया प्रतिपाल रे ।
किम छाडों छो अवला बाल रे, हरिण बाले देसे सहुगाल रे ॥ ५ ॥
तह्मे जग जीवन आधार रे, तह्मे मन बाछित दातार रे ।
ताहरा गुंणनो न लाभे पार रे, ताहरा वचन सुधारस सार रे ॥ ६ ॥
ताहरा सुरनर प्रणमें पाय रे, ताहरु नाम योगीश्वर ध्याय रे ।
ताहरा गुण इन्द्रादिक गाय रे, सूरी कुमुदचन्द्र बलि जाये रे ॥ ७ ॥

राग सारंग : (६)

सखी री अब तो रह्यो नहिं जात ॥
प्राणनाथ की प्रीत न विसरत, क्षुनु क्षुनु क्षीजत गात ॥ सखी री० ॥१॥
नाहि न भूख नही तिसु लागत, घरहि घरहि मुरझात ।
मन तो उरझ रह्यो मोहन सु सोबन ही सुरझात ॥ सखी री० ॥२॥
नाहि ने नीद परती निशिवासर होत बीसुरत प्रात ।
चन्दन चन्द्र सजल नलिनीदल मद मरुत न सोहात ॥ सखी री० ॥३॥
गृह आगन नु देख्यो नही भावत दीन भई बिललात ।
विरही वाउरी फिरति गिरि, गिरि लोकन ते न लजात ॥ सखी री०॥४॥
पीउ बिन पलक कल नही जीसकू न रुचत रसिक जु बात ।
कुमुदचन्द्र प्रभु सरसदरस कु नयन चपल ललचात ॥ सखी री० ॥५॥

राग सारंग (७)

किम करी राखु माहारु मन्न ।
जिन तजी गयो रे सेसा वन्न ॥
मयरण वृथा मुन्हे अन्न न भावे, सामलिया वीरण झूरू ।
आसडली मुन्हे नेम मलानी कोण जुगति करु पुरु ॥ किम० ॥ १ ॥
भूषणभार करे अति अगे, काम कथा न सुहावे ।
कुमुदचन्द्र कहे तेम करो जेम, नेमि नवल घर आवे ॥ किम० ॥ २ ॥

राग मलार (८)

आलीरी आ वरखा रित आजु आई ।
आवत जात सखी तुम की तह्न, पीउ आव न सुध पाई ॥आ०॥ १ ॥
देखीत तम भर दादुर दरकारे, बसत हे झरलाई ।
बोलत मोर पपईया दादुर, नेमि रहे कत छाई ।आ०॥ २ ॥
गरजत मेह कुदीत अरु दामिनि, मोपे रह्यो नही जाई ।
कुमुदचन्द्र प्रभु सुगति बधुसु, नेमि रहे वीरमाई ।आ०॥ ३ ॥

राग नट नारायण : (९)

आजु मे देखे पास जिनेन्द्रा ॥ टेक ॥
सावरे गात सोहामनी मूरत सोभित सीस फणेंदा ॥आजु०॥ १ ॥

२/कमठ माहामद भजन रजन, भविक चकोर सुचन्दा ।
१/पाप तमोपह भुवन प्रकाशक उदित अनूप दिनेंदा ॥प्राजु०॥ २ ॥
बुधिज दीडिजपति दिनुज दिनेसर सेवित पद अरवेंदा ।
कहत कुमुदचन्द्र होत सबे सुख, देखत वामानन्दा ॥प्राजु०॥ ३ ॥

राग भैरव : (१०)

जय जय आदि जिनेश्वर राय, जेहनें नामे नव निधि थाय ।
मन मोहन मरुदेवी मल्हार, भवसागर उतारे पार ॥जय०॥ १ ॥
हेमवरण अति सुन्दर काय, दरसण दीठे पाप पलाय ॥जय०॥ २ ॥
युगला धरम निवारण देव, सुरनर किंनर सारे सेव ॥जय०॥ ३ ॥
दीनदयाल करे दुख दद, कुमुदचन्द्र वादे आणद ॥जय०॥ ४ ॥

राग भैरव : (११)

चन्द्र वरण वादो चन्द्रप्रभ स्वामी रे ।
चन्द्रवरण पंचम गति पामी रे ॥ १ ॥
मोह महाभट मद दल्यो हे लारे ।
काम कटक माहि कीधा जेणे भेला रे ॥ २ ॥
विघन हरण मन वाछित पूरे रे ।
समर्या सार करे अघ चूरे रे ॥ ३ ॥
घोघा मण्डन चन्द्रप्रभ राजे रे ।
जेहनो जस जग माँहि वारु गाजेरे ॥ ४ ॥
परम निरजन सुर नमे पाय रे ।
कुमुदचन्द्र सूरी जिन गुण गाय रे ॥ ५ ॥

राग कल्याण : (१२)

जन्म सफल भयो, भयो सुकाज रे ।
तन की तपत टरी सब मेरी, देखत लोडण पास प्राजरे ॥जन्म०॥ १ ॥
संकट हर श्रीपास जिनेसर, वदन विनिर्जिते रजनी राज रे ।
अंक अनोपम अहिपति राजित, श्याम वरन भव जलधियान रे ॥ २ ॥
नरक निवारण शिवसुख कारण सब देवनी को हे शिरताज रे ।
कुमुदचन्द्र कहे वांछित पूरन, दुख चूरन तुंही गरीबनिवाज रे ॥ ३ ॥

राग कल्याण · (१३)

चेतन चेतत किउं बावरे ।

विषय विषे लपटाय रह्यो, कहा दिन दिन छीजत जात बावरे ।। १ ।।

तन धन योवन चपल सपन को, योग मिल्यो जेस्यो नदी नाउ रे ।।

काहे रे मूढ न समझत अजहु, कुमुदचन्द्र प्रभु पद यश गाउ रे ।। २ ।।

राग कल्याण चर्चरी (१४)

थेई थेई थेई नृत्यति अमरी, घुघरी सु घमकार ।
भमरी अमर गण नचावे ।।

स ग म धुनि सुसप्त स्वर बिराज राग रग ।
तान मान मिलित वेणु बसरी बजावे ।।थेई।। १ ।।

धुंधुमि धुधुमि ध्वनी मृदग चग तालवर उपाग ।
श्रवण अति सोहावे ।।

जय जिनेश नत नरेश शची सुरचित चारु वेश ।
देश देश कुमुदचन्द्र, वीर ना गुण गावे ।।थेई।। २ ।।

राग कल्याण चर्चरी (१५)

वनज वदन रुचिर रदन काम कोटिरूप कदन ।
श्रृगु सुवचो रटति राज नन्दनी ।। वनज ।। १ ।।
स्वीकृत यदि तज्यते यद्भवति किं कुल धर्म एष इति ।
मुदा निधान तदनु मन्द स्कदीनी ।
कृपा कूप विनत भूप प्रिया धुनानु गृह्यता ।
कुमुदचन्द्र स्वामी मुदा सुधा स्कदनी ।। २।।

राग कल्याण चर्चरी : (१६)

श्याम वरण सुगति करण सर्व सौख्यकारी ।।
इन्द्र चन्द्र मानवेन्द्र वृन्द चारु चचरीक।
चुंबित चरणारविंद पाप ताप हारी ।।श्याम।। १ ।।
सकल विकट संकट हरन हस तट ।
सुहर्ष कारण शेष भ्रक धारी ।।
दास परम आस पूरी कुमुदचन्द्रसूरी ।
जय जय जिनराज तुं भववारि राशि तारी ।।श्याम।। २ ।।

राग देशाख : (१७)

आस्युरे इम कीधु' माहरा नेमजी मरा समझे किम जाय ।
तोरण बहीने पाछा वलतां लोक हसारत थाय ॥आंचली॥ १ ॥

म्ह्याने आस हती अतिमोटी, नेमिकुमार परणीस्ये ।
मास प्रधमास इहा राखीने, मन गमतु' ते करीस्ये ॥आ०॥ २ ॥

आपासे अति उची मेडी, पाछलि छे हाट श्रेणी ।
ते उपरि थी नगर तमासो, जो इस्ये आलिये हेरी ॥आ०॥ ३ ॥

बोली टोली टोल करता गीत साहेली गाये ।
हास विनोद कथा रस कहेता, दिन जातो न जणाइ ॥आ०॥ ४ ॥

आवो आवो रे मोहन मदिर माहरे, रीझइ मन माहरु ।
बालेक आखडली मचकावत सूजाये छे ताहरु ॥आ०॥ ५ ॥

तह्मनेंसू वलि वलि वीनवीइ तम्हे छो अन्तरयामी ।
रहो रहो रसिक वलो तुह्म पाछा, कुमुदचन्द्र ना स्वामी ॥आ०॥ ६ ॥

राग धन्यासी (३८)

मे तो नरभव बाधि गमायो ।

न कीयो तप जप व्रत विधि सुन्दर ।
काम भलो न कमायो । मैं०॥ १ ॥

विकट लोभ ते कपट कूट करी ।
निपट विषै लपटायो ॥

विटल कुटिल शठ सगति बेठो ।
साधु निकट विघटायो ॥मैं तो०॥ २ ॥

कृपण भयो कछु दान न दीनो ।
दिन दिन दाम मिलायो ॥

जब जोवन जजाल पड्यो तब ।
पर त्रिया तनु चित लायो ॥मैं तो०॥ ३ ॥

अन्त समे कोउ सग न आवत ।
झूठिहि पाप लगायो ॥

कुमुदचन्द्र कहे चूक परी मोहि ।
प्रभु पद जस नही गायो ॥मैं तो०॥ ४ ॥

राग धन्यासी : (१६)

प्रभु मेरे तुम कुं एसी न चहीये ॥
सघन विघन घेरत सेवक कु ।
मौन धरी किउ रहीये ॥प्रभु०॥ १ ॥
विघन हरन सुख करन सबनिकु ।
चित चिन्तामनि कहीये ॥
अशरण शरण अबन्धु बन्धु ।
कृपासिंधु को बिरद निवहीये ॥प्रभु०॥ २ ॥
हम तो हाथ बिकाने प्रभु के ।
अब जो करो सोई सहिये ॥
तो फुनि कुमुदचन्द्र कहे शरणागति की ।
प्रभु सरम जु गहीये ॥प्रभु०॥ ३ ॥

राग धन्यासी : (२०)

आजु सबनी मिं हू बडभागी ।
लोडण पास पाय परसन कु, मन मेरो अनुरागी ॥आजु०॥ १ ॥
वामा नन्दन वृजिनि विहडन, जगदानन्दन जिनवर ।
जनम जरा मरणादि निवारण, कारण सुख को सुन्दर ॥आजु०॥ २ ॥
नीलवरण सुर नर मन रंजन भव भंजन भगवन्त ।
कुमुदचन्द्र कहे देव देवनीको, पास भजहु सब संत ॥आजु०॥ ३ ॥

राग श्री राग (२१)

वन्दे हं शीतल चरण ॥
सुरनर किन्नर गीत गुणावली, अतुल रूवं भव भयहरण ॥वन्दे०॥ १ ॥
निज नख सुखमा चित द्विजपति चय, मुदित मुनि निश्चित शरण ।
जन्म जरा मरणादि निवारण,
नत कुमुदचन्द्र श्री सुख करण ॥वन्दे०॥ २ ॥

राग असाउरी : (२२)

अवसर आजू हे रे हवेदान पुण्य काई कीजे ।
मानव भव लाहो लीजे ॥अव०॥ १ ॥

भव सागरना भमता भमता, नर भव वोहिलो मलियो रे।
संपति मति रुडुं कुल पाम्यौ, तो धर्म विषय थी रलियो रे ।।भव।। २ ।।
यौवन जाय जरा नितु व्यापे, क्षण क्षण ग्रायुस थावे रे।
रोग शोग नाना दुख देखी, तोस्ये नहीं सान न ग्रावे रे ।।भव०।। ३ ।।
क्रोध मान माया सहु मूंको, परधन परस्त्री वर जोरे।
चरचो चरण कमल प्रभु केरा, जिम संसार न सरजो रे ।।भव०।। ४ ।।
वृद्ध पणे तप जप नही थाये, जीवन वय जालविये रे।
घर लागे कूउ खोदीने तो कहो किम घर उल्हविये रे ।।भव०।। ५ ।।
बहु परिवार घणी हु मोटो, मूरिख मोटि समझो रे।
स्वारथ बीते कोई नवि दीसे, तो जिम तरुवर ना पखी रे ।।भव०।। ६ ।।
मे मे रत्तोरा माए तो, वृद्या तिजनिवारो रे।
मन मरकट नो हठ वशि ग्राणो तो, नरभव फोकम हारो र ।।भव०।। ७ ।।
पर उपगार करी जस लीजे, पर निंदा नवि करीये रे।
कुमुदचद कहे जिम लीलाई, तो भवसागर उतरीये रे ।।भव०।। ८ ।।

राग गोडी (२३)

लालाद्यो मुझ चारित्र चूनडी, वेराग करारी रग रे।
व्रत भात भली घणी सोभती, वारु समकित पोत सुचगरे ।। १ ।।
रुडी सोहे माहि तप फूदडी, छबियालि दयानि वेलि रे।
दशलक्षण डालि दीपती, शिल पत्र तणी रगरेलि रे ।। २ ।।
मूल गुणनी विराजे मजरी, पंच समिति पाखडी सोहत रे।
उंची त्रण्य गुपति रेखा भजे, जेह्ने जोता मन मोहत रे ।। ३ ।।
वर सवरनी तिहा चोकडी, वे ध्यान पालव सोहाय रे।
रटियालि रत्नत्रय कोर रे जोता मनुस्युं तृपति न थाय रे ।। ४ ।।
एह उढी राजीमती साचरी, तेणे मोह्या सुरनर राय रे।
मोही मुगति साहेली रूपनें, सूरो कुमुदचन्द बलि जाय रे ।। ५ ।।

इतिगीतः (२४)

ए ससार भमतडारे न लह्यो धर्म विचार ।।
मे पाप कर्म की बाधणी ते थी पाम्यो दुख ग्रपार रे।
मन मोहन स्वामी मोरा ग्रतरयामी, नमु मस्तक नामी देवरे ।। १ ।।

ए तो कष्ट करीने पामीयोरे, मानव भव अवतार।
ते निष्फल मे नीगम्यो कहु सामली तेहनी बात रे॥ २॥
में कपट कीधा अति पाडूआं रे, रचियो अति परपच।
मर्म मो सावलि बोलिया, बलि पोस्या इद्रिय पाच रे॥ ३॥
क्रोध पिशाचि हु नम्यो रे, डसियो काम भुजु ग।
लहेरबाजी महा मोहनी, हु तो राच्यो पर त्रिय सगरे॥ ४॥
लोभ लपट थयो अति घणु रे, धन परियण ने काजि।
जोवन मद मातो थयो, तिणे प्राण्यो घणु एक बाजिरे॥ ५॥
आप वखाणु अति घणु रे, कोधी परनी ताति।
कूडा आलि चढावियो, थयो उन्मत्त दिनराति रे॥ ६॥
मन वाछित सुख कारणे रे, कीधा पाप अधीर।
अति उज्जलता कारणे, धोयो कादव माहि चीर रे॥ ७॥
कर्म कीधा अण जाणता रे, ते के कहेता थाय ते लाज।
ए मन मादा भे घणू कहु ते कोहने जई आजार॥ ८॥
हवे तु जग गुरु मभने मल्योरे जगजीवन जगनाथ।
सूरी कुमुदचन्द करे वीनती, निज सेवक कीजे सनाथ रे॥ ९॥

राग परजीऊ. (२५)

बालि बाल्हि तु वालिम सजनी, विण अवगुण किम छडी नारि।
तोरण थी पाछो जे वलियो, जइ चढियो गिरि गढ गिरिनारि॥ १॥
लीधो सयम श्री जिनराजि सुन्दर सहेसावन्न मभारि।
सुरनर किनर कर्यो महोछव, जिम वलता नावे ससार॥ २॥
रोस हवेस्यु करियो पोफट, ते यदुनदन नावे बार।
कुमुदचन्द्र स्वामी सामलियो, उतारे भव सागर पार॥ ३॥

राग परजीयो: (२६)

लाल लाल लाल लाल तु माजासरे।
तोरण थी पाछो वल्यो ताहरी लोक करस्ये हास।
यदुनद रे, सुखकदरे, नेम एक सापलो माहरी बीनती।
जिम वाधे ताहरी माम।
लीधा बोलज मूकता स्यु रहस्ये ताहरू नाम॥यदु०॥ १॥

एक बार तु जो पाछो वले तो किजे हास विलास ।
सखी सहुनें भूमखे रमता, फूलडा रुडा गास्य ।। २ ।।

कर जोडी ने वीनवू, वाल्हारथ पाछो वालि ।
जो माम मुन्हे वाडी जसे, ताहरे माथे चडस्ये गालि ।। ३ ।।

रहे रहे रे यादवा जो डग भरे तो नेम ।
योवन वेशें एकली, वेर तुझ बिना रहु किम ।। ४ ।।

रहे उभो जो पाछु वली, तु सांभलि सुन्दर वाणि ।
ग्रावे यादव मंडली तेहनी, जाण हइयास्यु काण ।। ५ ।।

हवे प्रेम करी पाछावलो, हठ मुको नेम नरेन्द्र ।
दीन दयाल दया करो, इम बोले कुमुदचन्द ।। ६ ।।

राग धन्यासी . (२७)

सगति कीजे रे साधु तणी वली, लीजे ते अरि रत नाम ।
जेह थी सीझे रे मन तू चींतव्यु, जिम लहो अविचल ठाम ।। १ ।।

जीवडा तुम करे सि माहरु, माहरु मनस्यु विमासी रे जोय ।
स्वारथ जांणी रे सहु ग्रावी मल्यु, अंत समे नहीं कोय ।। २ ।।

लक्ष चोरासी रे जोनि भमतडा, माणस जनम दुर्लभ ।
इम जाणी रे तप जप की जोई, घडियन करिये विलब ।। ३ ।।

तन धन यौवन जीवन थिर नाही, विघटी जास्ये सुजांण ।
ते माटइ करी सीख ग्रह्मारडी पाल तो जिनवर ग्राण ।। ४ ।।

पापज कीधा ते अति पाडुआ, रड वडिया संसार ।
धर्म ज पाम्यो रे कष्ट घणू करी, मूरख फोकम हार ।। ५ ।।

जे दुखदीठा ते अति दोहिली, ते जाणे जिन चद ।
हवै है यास्यु रे धर्मज कीजीये, जिम छूटो भव फद ।। ६ ।।

रामा रामा रे धन धन झखतो, पडियो तु मोहनी जाल ।
विषय विलूधो रे जिन गुण विसर्यो दिन दिन ग्रावे छे काल ।। ७ ।।

सगा सहू नेरे सग पण कारिमू, सगो ते सही जिनराज ।
तेह नामइ थी रे शिवसुख पामीइ सरे ते जीवनू काज ।। ८ ।।

जोता जोता रे जग गुरु पीमीयो तेहथी मरहेसि दूरि ।
जनम मरण ना जिम दुख सहुटले, कहे कुमुदचन्द सूरि ।। ९ ।।

राग गुज्जरी : (२८)

म करीस परनारी नो मग ।। टेको ।।
हाव भाव करे ते खोटो जेह वो रग पतग ।। म० करीस ।। १ ।।
पेहेलु मन सताप चटपटी, सोक सताप ते ग्रावे ।
जेम लागो होये भूत भमता, ते मने चित भमावे ।। म० ।। २ ।।
भूवत रम नवि लागे तेहाथी, ग्रन्न उदक नवि भावे ।
न रुचे वात विनोद कथा रस, नहि निसि निद्रा ग्रावे ।। म० ।। ३ ।।
लपट लोक कही बोलावे, सहु सज्जन रिसावे ।
माथे ग्राल चढे पतजाय, लोकह सारथ थाते ।। म० ३ ।।
राज दण्ड धन हाण विगुचरणा, नरक माहे दुख कारी ।
कुमुदचन्द्र कहे करी वीमासरण, तजो चतुर परनारी ।। मकरीस ।। ५ ।।

राग सारंग (२९)

नाथ ग्रनाथनी कु कछु दीजे ।
विरद सभारी छारीहउ मन ति, काहे न जग जस लीजे ।। नाथ ।। १ ।।
तुम तो दीनदयाल ही निवाज, कीयो हू मानुष गुण ग्रव न गणीजे ।।
व्याल बाल प्रतिपाल सविषतरु, सो नही ग्राप हणीजे ।। नाथ० ।। २ ।।
मैं तो सोई जोता दीन हूंतो जा दिन को न छूई जे ।
जो तुम जानत उरु भयो हे, वाधि वाजार बेचीजे ।। ३ ।।
मेरे तो जीवन धन सबहु महि, नाम तिहारे जीजे ।
कहत कुमुदचन्द्र चरण सरण मोहि जे भावे सो कीजे ।। ४ ।।

राग सारग : (३०)

जो तुम्ह दीन दयाल कहावत ।।
हमसी ग्रनाथनि हीन दीन कु काहे न नाथ नीवाजन ।। जो० ।। १ ।।
सुर नर किंनर ग्रमुर विद्याधर, सब मुनि जन जस गावत ।
देव महीरुह कामधेनु ते, ग्रधिक जपत सब पावत ।। जो ।। २ ।।
चन्द चकोर जलद ज्यु सारग मीन सलिलज ध्यावत ।
कहित कुमुदपति पावन तुहि, न हिरिदे मोहि भावत ।। जो० ।। ३ ।।

(३१) मुनिसुव्रत गीत

मुरत मोहन वेलडी रे, दर्सण पाप पलाय ।
मुख दीठे दुख विसरे रे, सेवे छे मेवे सुरासुर पाय ।।

गज गामि आवो कामिनी ए; पुजेवा पुजेवा सुव्रत पाय ।।गज।।
तात सुमीत्र मनोहर रे, जेहनी पोमादेवी माय।
मुख सोहे जेहवो चांद लो, रे, स्यामल स्यामल वर्ण सुकाय ।। २ ।।
उचपण प्रति जेहनुरे, वीश धनुष परमाण।
मोह माहाभट निर्दल्योरे, मयण मयण मनाव्यो माण ।।गज०।।३।।
नयर राजगृह उपना रे, जग गुरु जगदानद।
ध्यान करे नित जेहनु रे, मुनिवर मुनिवर केव वृ द ।।गज०।। ४ ।।
प्रगट्यु तीर्थ जेणे वीसमु रे, मनवांछित दातार।
गुणसागर प्रति रुवडारे, जेहना वचन प्रतिसार ।।गज०।। ५ ।।
दीनदयाल सोहमणी रे, सुंदर करुणा सीधु।
जगजीवन जग राजीयोरे कारण कारण वीणए बंधु ।।गज०।। ६ ।।
रोग सोग नामे टले रे सहान वीघन हरे दूर।
सेवो भविक तम्हे भावसु रे, विनवे विनवे कुमुदचद सूर ।।गज०।। ७ ।।

।। इति मुनिसुव्रत गीत समाप्त ।।

(३२) हिन्दोलना गीत

विनय करीने वीनवू हीदोली डारे, भगवति भारति माय।
जेह नामि मति पामीये हिन्दोलीडारे वलि रे विमलमति थाये ।।
एक समय सू हिन्दोलडारे हीवती सखिय वे च्यार।
चन्द्र किरण सम उजलो ।।
हैडले झलके तोहार रातिरुडी अजूवालडी ।। हि० ।। २ ।।
घरि घरि उछव रास ।।
गाय ते गीत सोहामणी कामिनी करे रे विलास ।। ३ ।।
त्यारि राजुल कहे हे सखी, सामलो एक सन्देश।
जाउ सखी जइ वीनवो, सुन्दर नेमि नरेश ।। ४ ।।
माहरी वती करो वीनती, प्रणमीय तेहनां पाय।
तुझ बिना पल एक मुझने घडीय बराबरि थाय ।। ५ ।।
घड़ी एक पहोर समानडी, पहोर दिवस दिन मास।
मास बरस दिन जेवडो वरस युगांतर तास ।। ६ ।।
राति दिवस राजीमती समरे छे तम तणो नेह।
जिम सरोवर हसलो, बापियडा मन मेह ।। ७ ।।

धर्मिनू मन जिम धर्मसु, गुरिणनी सगति गुरणवत ।
जिम चक्रवाक मनि रवि वसे, कोयल जिम रे बसत ।। ८ ।।

याचक जिम समरे दातार ने, दातार पात्र उदार ।
जिम निज घरि समरे पथियो, सती समरे भरतार ।। ९ ।।

जिम तृषातुर नीरने, तिम तुह्य रायुल नारि ।
क्षरिण-क्षरिण वाट नीहालती, निज घर अगरण बार ।। १० ।।

पूछे पोपटने पाज रे, बोलो ने पोपट राज ।
कहो क्यारि नेम जी आवस्यो, जम सरे अह्य तरणा काज ।। ११ ।।

वलिय पारेवाने वीनवे, साभल्यो तु तो सुजारण ।
ताहरि गगन गति रूअडि, करि पिउ आव्यानु जारण ।। १२ ।।

सकुन बवावो जोवती, पूछति पथि ने बात ।
जे कहे नेमनी आवता, ते मोरो बाधवा वात ।। १३ ।।

घर वन जाल सगू सहू, विरह दवानल झाल ।
हु हिरणी तिहा एकली, केसरि काम कराल ।। १४ ।।

मात पिता सहू वीसर्या, नहीं गये परिजन नाम ।
वाहलो मने एक नेम जी, जेहो हमारो आतम राम ।। १५ ।।

हेविहिरणा मागु तुझ कह्रे, अह्मने तुमा सर जेस ।
जो सरजे अह्मने वली, मारणस जनम म देशि ।। १६ ।।

जो भव दे मानव तरणो, तोम करेस सयोग ।
सजोग जो सर जे लेई, तोम करे सवियोग ।। १७ ।।

इष्ट वियोग दुख दोहिला, ते दुख मुखे न कहवाय ।
थोडा माहि समझो घरणू तम विना मे न रहे वाय ।। १८ ।।

भोजन तो भावे नही, भूषरण करे रे सताप ।
जोहु मरिस्य विलखि थई, तो तह्य लागस्ये पाप ।। १९ ।।

पशु देखी पाछा वल्या, मनस्यु थयारे दयाल ।
मुझ उपरि माया नही, ते तह्य स्या रे कृपाल ।। २० ।।

तह्य सयम लेवा साचर्या, जाण्यो पम्यो हवे मर्म ।
एकस्यु रुसो एकस्यु तुसो, अवलो तुम्हारो धर्म ।। २१ ।।

हिन्दोलना गीत का परिचय ··· पृष्ट पर देखिये ।

राज रहु अण्य लोकनू, रहो हमारो योवन वेश।
जो सरगें अस्यो तप करी, तिहा तो एहवू न लेहसि ॥ २२ ॥
हवे प्रभु पाछा वलो, करिये छे विनय अनेक।
प्रति ताण्यु भूटे नेम जी, मन मांहि करो रे विवेक ॥ २३ ॥
त्यारि दिवस हुइ पाधरा, त्यारि सगू सहु कोय।
ज्यारि वाका थाये दीहडा, त्याहारि सज्जन वेरी होय ॥ २४ ॥
अथवा करम फर्‌यु अह्म तणूं, तो तह्मस्युं कर्‌यो रोस।
जेहवू दीघू तेहवू पामीये, कोहे दीजे नही दोस ॥ २५ ॥
रायुल अमीने इम कहीउ वलि-वलि जोडिने हाथ।
प्रीछवो जो पाछा वले, जिम अह्मे थाउ सनाथ ॥ २६ ॥
लेई सदेसो चालो सहु सखी जइ चढी गिरिवर शृंग।
घणीय जुगति करी प्रीछव्या, मन दीठु तेहनू अभग ॥ २७ ॥
आवी ते सखि पाछी वली, वात कही तिणिवर।
ते तो बोले-चालें नही, मनस्यु निठोर अपार ॥ २८ ॥
त्यारि राजुल उठी सचरी, तजिय सपति ततकाल।
सयम लेई तप आचर्‌यो जिम न पड़े मोह जाल ॥ २९ ॥
व्रत रडा पाली करी पामी ते अमर विमान।
कर्म तजी केवल लही, नेमि पाम्या निरवाण ॥ ३० ॥
ए भणता सुख पामीइ, विधन जाये सहु दूरि।
रतनकीरति पट मडणो, बोले कुमुदचन्द्र सूरि ॥ ३१ ॥

(३३) त्रण्य रति गीत

दश दिशा बादल उनया दम्पति मनि उल्हास।
दीसे ते दिन रलिया मणा, घन बरसे रे लवे बीज आकाश के ॥

वर्षा ऋतु :

वरषा रति आदि आवी, आवि बरषा रति वाधे बहु रतिराज।
न आव्यो रे पीउडो घरि आज, न आणी रे मनि निज कुल लाज ॥
स्यु कीजे रे नही पीउ सुख साज के, वरषा रति आज आवी ॥ १ ॥
पवीयडा कूरे घणू साभली दादुर सोर।
वापीयडो पिउ-पीउ लवे पापीयडोरे बोले कलरव मोर के ॥ २ ॥

पखीयडें माला कस्या मनि धरी पावस प्रेम ।
'काली ते मेहुण रातडी, बालूयडा विण सुने घरि रहीये केम के ॥ ३ ॥
गगन प्रति गडगडे बाजते झंझावात ।
कुंज बिहगम मडली गीरि कन्दर रे, गुंजे हरि कपि जात के ॥ ४ ॥
गाजे ते अम्बर छाहिउ, झड बादल बहु भाति ।
अगियो अधार ते तग तगें बोले तिमिरा रे भरिमा झिम राति के ॥ ५ ॥
सुख समे प्रीउडो नावियो मनि थयो अतिहि नीठोर ।
कोई भाभिनीह भोलव्यो, करि कामण रे मार चितडानो चोर के ॥ ६ ॥

शीत ऋतु ·

सोहमणा दिन शीतना गाये ते गोरी गीत ।
शीतनो भय मनिधरी हवे मानिनि रे मुके मन तणा मान के ॥ ७ ॥
हिम रित रे बीजी आवी बीजी हिम रति रे सखि हरष निधान ।
ना होलियो रे वसे गिरि गुहरान, वियोगे रे वणसे देह वान ॥ ८ ॥
योवन जाये रे प्रीउने नही सान के ॥
हिमरतें हिम पडे हे सखी दाझे ते धन वन राय ।
तुझ बिना ए दिन दोहिला ह्यारी दाझेरे अति कोमल कायरे ॥ ९ ॥
वाजे ते शीतन वायरो, बाझे ते वाहिर ठार ।
घूजे ते बनना पखिया, किम रहस्ये ते वनि प्रियसुकुमार के ॥ १० ॥
बन छाडि दव भय कमलिनी, जले रहे मनि धरीनातेष ।
तिहा थकी पणि हीमे दही नही, छुटियेरे वह्नि रातिरा लेख के ॥ ११ ॥
तेल तापन तुला तरुणी ताम्र पट तबोल ।
तप्ततोयते सातमू सुखिया नेरे हिम रति सुख मल के ॥ १२ ॥
शीयालो सघलो गयो, पणि नावियो यदुराय ।
तेह बिना मुझने झूरता एह दीहडारे वरसा सो थाय के ॥ १३ ॥
कोयल करे रे टहुकडा लहे केते अबा डाल ।
बेलि ते पोपट पाढुउ तेह साभली रे स्ये न आव्या लाल के ॥ १४ ॥

ग्रीष्म ऋतु

ग्रीसम रितु त्रीजी आवी, त्रीजी ग्रीसम रति किम जास्ये एह ॥
घरे नाव्योरे नाहोलो धरी नेह, सामलिया रे मनि समरो गेह ॥ १५ ॥

नहीं तर रे प्राणत जस्ये देह के ग्रीसम रति ।।
फूल्या ते चपक केवडा फूल्यु ले वन सहु कोय ।
पानडा परिण नही केरने, पुण्य पाखि किम रुडी सम्पति होय के ।। १६ ।।
तडको पडे अति दोहिलो, रवि तपे पर्वत शृंग ।
अति झाल लागे लु तणी हवे आवो रे मुझ कज भृगाक ।। १७ ।।
कर्पूर वासित वारिस्यु चन्दने चरचु अग ।
केसर घसी करु छ'टणा,
जो तु राखे रे हमारा मन तणो रग के ।। १८ ।।
कामिनी करि शृंगार, सरसी करे वन जल केलि ।
सामला मूको आयला मुझ सरिसोरे प्रिय मनडू मेलिके ।। १६ ।।
इम झूरती राजीमती, जई चढी गिरिनारि ।
सूरी कुमुदचन्द्र प्रभु नेमि ने वन्यामी रे आयो हु' बलिहार के ।। २० ।।

(३४) वणजारा गीत

वण जारा रे एह ससार विदेस भयीय भमीवु उसनो ।
तेरी घणी घणी वार ज्यारे गीत पुर जोइया ।। १ ।।
लक्ष्य चोराशी योनि गाम माहि तु' रडवम्यो ।
मनस्यु विमासी जोय खोटे वणजें रणियो थयो ।। २ ।।
मूल गयु' तिणि वार खोटि आवी दुखियो थयो ।।
जीव तु चतुर सुजाण मोह ठगा रे भोलव्यो ।। ३ ।।
कीधा कुसगति प्रीति सात व्यसन ते सेवीया ।।
पाप कर्या ते अनन्त जीव दया पाली नही ।। ४ ।।
साचो न बोलियो बोल मरम मोसाबहु बोलिया ।।
पर निंदा परतीति ते करी अण जाणते वणजारा रे ।। ५ ।।
आप बखाण्यु अपार, अवगुण ते सहु उलव्या ।।
कुड कपटनी खाणि, परधन ते चोरी लिया ।। ६ ।।
उलवी विसरी वस्तु, थापिज मूकी उलवी ।।
विषय विलूधो गमार, परनारी रमे रम्यो ।। ७ ।।
योवन मद थयो अध, हु हु हु करतो फिरयो ।।
रीस करी अण काज, गुण नवि जाण्यो क्षमा तणो ।। ८ ।।
इंद्रिया पोस्या पाच, पाप विचार कर्यो नही ।।
पुत्र कलत्र ने काजि, हा हा हु तो हीडीयो ।। ९ ।।

सजन कुटंब ने मित्र ग्राप सवारथ सहु मल्यु ॥
कीधा कुकर्म ग्रनंत, धन धन रामा भंख तो ॥ १० ॥
घर परियण ने लोभ, वणज घणा ते के लव्या ।
तेह्लो न लाधो लाभ, जेणे लाभे सुख पामीये ॥ ११ ॥
मरवु छे निरधार, तो फोकट फूले कस्यु ॥
कोई न ग्रावेस्ये साथि हाथि दीधू साथें ग्रावस्ये ॥ १२ ॥
ते माटेस्यो रे जजाल, करतो हीडेतुकारिमु ॥
सांभल ये तु सीख, ममना मनोरथ जिम फले ॥ १३ ॥

साज तु सुन्दर साध, मन रूपी रुडो पोठियो ॥
वारु बेराग पल्हाण, मुगति पटी तु भीडजे ॥ १४ ॥
समकित रासडि बांधिजे, उवट जिम जाये नही ॥
सयम गुण पह्लाण धर्म वसाणे तु भरेव ॥ १५ ॥

लीजे दया व्रत सार, शील तणो सग्रह करे ॥
ग्रनुप्रेक्षा ते सभालि, त्रण्य रतन नु जतन करे ॥ १६ ॥
पंच महाव्रत भार, समित गुपति ते राख जे ॥
साधु तणो गुणवीर, जीव तणी परिजालवे ॥ १७ ॥

सभारये नवकार, जिन जी तणा गुण मनिधरे ॥
ग्रन्थ पुराण विचार, धर्म शुकल ध्यान चिन्तवे ॥ १८ ॥
सहे गोरनो उपदेश, एक घडी नवि विसरे ॥
तपनी तुम करेसि काणि, जेणे कर्ममल सहु टले ॥ १९ ॥

मधुर मोदक उपवास, गांठि सुखडली बाध जे ॥
निर्मल शीतल नीर ज्ञान घूटडला तु भरे ॥ २० ॥
सत्य वचन पच खाण, ते सुखवास तु बावरे ॥
म करेसि तु परमाद, बाटे जालव तो जजे ॥ २१ ॥

खडग क्षमा करे हाथ, चोर परिग्रह नास से ॥
सार्वमि ने साथ, मुगति तुरी वहेलो पुहचर्‌यो ॥ २२ ॥
सिद्ध तणा गुण ग्राठ, मुगति वधू तेंणे राचस्ये ॥
जन्म जराना त्रास, मरण वली-वली नही न डे ॥ २३ ॥

काल ग्रनतानत सौख्य सरोवरि भीलस्यो ॥
ए वणजारा नू गीत, जे गास्ये हरखे सही ॥ २४ ॥
ते तरस्ये ससार ग्रजर ग्रमर थई महा लमे ॥
रतनकीरति पद धार, कुमुदचन्द्र सूरी इम कहे ॥ २५ ॥

(३५) शील गीत

सुणो सुणो कंता रे सीख सोहामणी ।
प्रीति न कीजे रे परनारी तणी ॥

त्रोटक :

परनारि साथि प्रीतडी, प्रीउडा कहो किम कीजिये ।
उंघ आपी आपणी उजागरो किम लीजीइ ॥
कालकी छुटो कहे, लंपट लोक माहि लीजीइ ।
कुल विषय खंपण न लार लागे, सगामा किम गाजिये ॥ १ ॥

ढाल :

प्रीति करता रे पहिलूं बीभीये ।
रखे कोई जाणे रे मन मा बुजिये ॥

त्रोटक :

ध्रुजीये मनस्यु कृरिये पण जोग मिल बोले नहीं ।
ए राति दिन पलपतां जाये, आवटी मरवु सही ॥
निज नारी थी संतोष न वल्यो, परनारी थी तोस्युं हस्ये ।
जो भरे भाणे नृपति न बली, एठ चाटेस्युं थस्ये ॥ २ ॥

ढाल :

मृग तृष्णा थी तरस्य नही टले ।
बालू केसू पीले रे तेल न नीसरे ॥

त्रोटक :

नवि नीकले पाणी विलोवता लेस माखण नो बली ।
छूडता वाचक भरा फाणे, तस्या बात न सामली ॥
ते म नारी रमता पर तणी, सतोष तो न बले घडी ।
चटपटी ने उचाट ळागे, आँखि नावे निन्दडी ॥ ३ ॥

ढाल :

जेहवो खोटो रे रग पतग नो ।
तेहवो चटको रे पर त्रिय सग नो ॥

त्रोटक :

परत्रिया केरो प्रेम प्रिउडा रखे को जांणो खरो ।
दिन च्यार रग सुरग रूअडों, पछे न रहे निरधरो ॥
जे घणा सासे नहे माडे, छाडि तेहस्यु वातडी ।
इम जाणी मम करि नाहला, परनारि सार्थे प्रीतडा ॥ ४ ॥

ढाल :

जे पतिवाह तोरे बचे पापिणा ।
परस्यु प्रीते रे राचे सापिणी ॥

त्रोटक :

सापिणी सरखी वेणि निरखी, रखे शील थकी चले ।
आखिने म'टके अगि लटके देव दानवने छले ॥
माडकालि अति रसाली, वाणि मीठी सेलडी ।
साभली भोला रखे भूले जाण जे विष वेलडी ॥ ५ ॥

ढाल :

सग निवारो रे पर रामा तणो ।
शोक न कीजे रे मन मलवा घणो ॥

त्रोटक

शोक स्याह ने करो फोकट, देखा छू पणि दोहिलू ।
क्षण सेरीइ क्षण मेडी ह, भमता न लागे सोहिलो ॥
उसास नइ नीसास आवे, अग भाजे मन भमे ।
वलि काम तापे देह दाझे अन्न दीठु नवि गमे ॥ ६ ॥

ढाल ·

जाय कलामी रे मनस्यु कल मले ।
उदमादो थइ रे अलल फसल लवे ॥

त्रोटक .

तेलवे अलल फलल अजाणो मोह गहेलो मनि डरे ।
महा मदन वेदन कठिन जाणी मरण वारु अेवडे ॥
ए दश अवस्था काम केरडी कत काया ने दहे ।
इम चित जाणी तजो राणी पारकी जिम सुख लहे ॥ ७ ॥

ढाल :

परनारी ना पर भय साभलो ।
कता कीजे रे भाव ते निरमलो ॥

त्रोटक .

निरमले भावे नोइ समझो, परवधू रस परिहारो ।
चापियो कीचक भमिसेने, शिला हेठलि साभलो ॥
रण पड्या रावण दशे मस्तक रड वड्या ग्रन्थे कहु ।
ते मु जपति दुख पु ज पाम्यो, अजस जग मांहि रह्यो ॥ ८ ॥

ढाल :

शील समूणांरे मांणस सोहिये ।
विण आभरणें रे मन मोहीये ॥

त्रोटक

मोहिये सुरवर करे सेवा, विष अमीसायर थल ।
केसरीसिंह सोयाल थाये अनल अति शीतल जल ॥
सापथ ये फूलमाला लच्छि घरि पाणी भरे ।
परनारि परिहरि शील मनि धरि मुगति बहु हेलावरे ॥ ६ ॥

ढाल ।

ते माटइ हुरे वालि भवीनवू ।
पागि लागी नेरे मधुर वचने थवू ।

त्रोटक :

वचन माहरु मानिये परिनारी थी रहो वेगला ।
अपवाद माथे चढे मोटा, रक थइये दोहिला ॥
धन धान्य ते नर नारि जे दृढ शील पाले जगतिलो ।
ते पामसे जस जगत माहि, कुमुदचन्द्र समुज्जलो ॥ १० ॥

गीत राग धन्यासी (३६)

आरती गीत

करो जिन तणी आरती, अण सुख बारती ।
विघन उसारती भविक तणा ॥ १ ॥
थाल वर सोहती, सकल मन मोहती ।
प्रभु भव्य मोहती, तेज पूजा करो ॥ २ ॥
पुण्य अजू आलती, पापतिमर टालती ।
अमर पद आलती, अण प्रयासे ॥ ३ ॥
भव भव भंजती, भाव हिंगजती ।
सुरमन रंजती, राज्य मानती ॥ ४ ॥

वाजित्र वाजता, अंबर गाजता ।
नरवधू नाचता, मनह रंगे ।। ५ ।।
जिन गुण गावतां, शुभ मन भावता ।
सुगति फल पावता, चतुर चंगि ।। ६ ।।
सुगन्ध सारंग दहे, पाप ते नवि रहे ।
मनह वाछित लह, कुमुदचन्द्र करो जिन आरती ।। ७ ।।

(३७) चिन्तामणि पार्श्वनाथ गीत

वालो चन्द्रमुखी सखी टोली, पहेरो पटोलि चोलि रे ।
पूजिये पावन पास जिणसर, पीमीये सपति बहोली रे ।। १ ।।
सन्दर वासव रास कपूरे, वासित जले जिन पूजीई ।
जनम जराने जापन कीजे, मरण थकी नवि बीहीजीए ।। २ ।।
चन्दन केशर ने रसि चरचो, त्रण्य भुवन केरो राय रे ।
पाप तणो संताप टले सहू, जिम मनि वछित थायेरे ।। ३ ।।
अक्षत पूज करो प्रभु आगलि, पंच परम गुरु नामि रे ।
नव निधि चउदह रतन अति रुवड़ा, जिम लहीइ निजधामे रे ।। ४ ।।
जाई जूइ सरवर सेवत्रे, कुंद कमल मचकुंदे रे ।
चम्पक तरणी चम्पक लिइ, चरचो चरण आनद रे ।। ५ ।।
कूरदालि बडावर व्यंजन, पोलिय घीइ झबोली रे ।
पातलडी पकवान चढावो, रची रचना वर उली रे ।। ६ ।।
दीवडलो अजू वालो रे आली, आरतडी उतारो रे ।
आरतडी भाजे जिम मननी, पाप तिमिर सहु वारो रे ।। ७ ।।
सुन्दरी ससिवदनी प्रभु चरणे, कृष्णागरउ खेवोरे ।
पावन धूम शिखा परिमलना छूटिये करमनि खेवोरे ।। ८ ।।
कमरख कदली फल सोपारी, सखिय चढावो सारी रे ।
रायण करमदा बदाम बीजोरा दाडिम अति मनोहारी रे ।। ९ ।।
जल चन्दन अक्षत वर कुसुमे, चरु दीवडली धूपे रे ।
फल रचना सूं अरघ करो सखी जिम न पडो भव कूपे रे ।। १० ।।
इस अनूपम भाव धरीने, पूजता पास जिणेद रे ।
रोग शोग नवि ते अगे, न हुई कोइस्यु देव रे ।। ११ ।।

भूत प्रेत पिशाचर पीडा, वाघ वरु नवि अडकेरे ।
पास प्रभु तणू नाम जपंता, नवि हुवे दुख छडके रे ॥ १२ ॥
सघन विघन वेगलडां जाये, नवि ताणे बहु पाणी रे ।
कुमुदचन्द्र कहे पास पसाइं, राचे मुगति महाराणी रे ॥ १३ ॥

(३८) दीपावली गीत

आज दीवालि रे बाई दीवाली, तह्मे पहेरो नव रंग फालि ।
धन-धन रगल तेरसि नो दिन, पूज्य धारया चाली रे ॥ १ ॥
थाऊंगी तब धावो गोरने, मोतीयडे भरी थाली ।
चरचो अंग चतुर सोहामणी, चरण कमल सु पखाली रे ॥ २ ॥
बुद्धि सिद्धि आपी प्रति रुग्रडी, कालि चउदसि काली ।
प प हरण लीजे ते पोसो मननामल सहुं टालि रे ॥ ३ ॥
चउदशिनी पाछलडी राति, कर्म तणा मद गाली ।
महावीर पहोता निर्वाणे, अजरामर सुख शाली रे ॥ ४ ॥
गोतम गुरु केवल दीवडलो, लोकालोक निहालि ।
सुरनर किंनर कर्यो महोछव, जय-जय रव देना ताली रे ॥ ५ ॥
तेज अमास परव दीवाली, परठी झाक झमाली ।
घरि-घरि दीवडला ते झलके, राति दीसे अजुवाली रे ॥ ६ ॥
पडवे राति जुहार पटोला, तिरुकी मम चाली ।
श्री सदगुरुना चरण जुहारो, पामो रधि रढि आली रे ॥ ७ ॥
बीजे हेजे करे ते भाविज वेहुडली अति ह्वाली ।
ए पाचे दीहा जपन्होता, आवो आवो हरखे चालि रे ॥ ८ ॥
हास विनोद करे मृग नयणी, शशि वयणी रूपाली ।
कुमुदचन्द्र नी वाणि मनोहर, मीठा अमिय रसाली रे ॥
आज दीवाली बाई दीवाली ॥ ९ ॥

राग धन्यासी गीत (३९)

म करस्यो प्रीति ज एक रूखि ।
एक कठिन वेदन नवि जाणे, एक मरे विलखी ॥ १ ॥
जल विन मीन मरे टल वलि ने, जलनें काई नहीं ।
बापियडां ने प्रिउ प्रिउ रटता, जलधर जाय वही ॥ २ ॥

तरस्यो ते मन जल जल झखे, जल जड थईज रहे ।
दीवे पडेय पतंग मरे पण दीवो ते न लहे ।। ३ ।
प्रेम भरी जोतां चन्दनि हरखे मनस्यु चकोर ।
ते चादलडो चिंतन जाणे, घिग–घिग नेहू निठोर ।। ४ ।।
विकसे कमल दिवाकर देखी, ते तो मने न धरे ।
मोर करे अतिसोर सनेहे मेहू न नेह करे ।। ५ ।।
काया मन माया प्राणी ने, जीवे रही वलगी ।
जीव जतें सटके झटकीने, ते नाखी अलगी ।। ६ ।।
नाद निमित्त मरे मृग गहेलो, नाद निगुण निगरोल ।
ए माटह मन राखो रुयडा, कुमुदचन्द्र ना बोल ।। ७ ।।

राग धन्यासी गीत : (४०)

सखि किम करिये मन धीर रे,
नेमि उज्जल गिरि जई रह्या हां रे हा ।। १ ।।
जूउ नाथ नीउरनी पेर रे,
विण वाके किम परहरी हा रे हा ।। २ ।।
मन हु ती मोटी आस रे, नाथ निरास करी गयो ।। ३ ।।
सखि कहे ज्यो साची वात रे, मोह राखयु मा बोलस्यो ।। ४ ।।
कुणे कीधू एह बू काम रे, तोरण जई पाछा वल्या ।। ५ ।।
इणें किम न करी मन लाज रे, छोकर वादी सीकरी ।। ६ ।।
जेणें रडती मू की मात रे, वचन न मान्यु तात नु ।। ७ ।।
तो कुण अहमारी पात रे, फोकट झाझू झूरीये ।। ८ ।।
हवे धरीये सयम भार रे, जिम मन वांछित पामीये ।। ९ ।।
जय जिनवर तु आसीस रे, कुमुदचन्द्र ना नाथ हा रे हा ।। १० ।।

(४१) नेमि जिन गीत

वचन विवेक वीनवे वर राजुल राणी ।
सामलिये प्रिय प्रेमस्यु कहु मधुरी वाणी ।। १ ।।
किम परणेवा आवीया सहु यादव मेली ।
तोरण थी किम चालियो रथ पाछो वेली ।। २ ।।

विण वाके किम छांडियो, अबला निरधारी।
बोल्या बोल न चूकीए, जिन जी मनोहारी ॥ ३ ॥

पशु अवाडि देखी फर्या ए मसि सहु खोटु।
विगर संभारे आपणु ये अगमा मोटु ॥ ४ ॥

दीन दयाल दया करो, रथ पाछो वालो।
समुद्रविजयनी आंण तले जो आधा चालो ॥ ५ ॥

मन मोहन पाछा चलो गृह पावन कीजे।
योवन वय अति रुयडू तेहनो रस लीजे ॥ ६ ॥

हास विलास करो घणा, रमणीस्यु रमतां।
सुख भोगवीइ सामला सुन्दर मनि रमतां ॥ ७ ॥

प्रिय पाखि दुर्जन हसे घरि किम करी रहीये।
बिरह तणा दुख दोहिला कहु किम सहीये ॥ ८ ॥

अन्न उदक भावे नहीं, विष सरिखु लागे।
मडन मनि-मनि नही, कामानल जागे ॥ ९ ॥

इम कहेनी रडति थकी राजुल ते थाकी।
नेम निठुर माने नहीं गयो गिरिरथ हाकी ॥ १० ॥

कुमुदचन्द्र प्रभु शामलो जेणे संयम धरीयो।
मुगति वधू अति रुवडी तेहने जई वरियो ॥ ११ ॥

गीत · (४२)

करो तम्हे जीव दया मनोहारी, हिंसा नो मत जोरे प्राणी।
जिम पामो भव पार ॥ १ ॥

पिष्ट शिखडिक नीहि साथी, लागु पाय अपार।
जूउ यशोधर चन्द्रमति बेहु, भमीयां भवत्रण च्यार ॥ २ ॥
भव पहेले भुपति के कीमा, स्वान तणो अवतार।
बीजें भवे बन माहि सेहलो, श्याम भुजगम स्फार ॥ ३ ॥
मीन थयो त्रीजे चवल, सिन्धू विषय शिशुमार।
जाल बन्ध अति छेदन भेदन दुक्खा तणो भण्डार ॥ ४ ॥
भव चोथे अज अजा पणें न हुउ सुक्ख लगार।
जनम पांच मे अज भेंसो थई, वह्यो अलेख भार ॥ ५ ॥
भव छट्ठे चरणायुध पक्षि बेहुने जीव अहार।
सातमें भवें कुसुमावलि गर्भे, युगल हवा ते उदार ॥ ७ ॥

एह ससार जाहि रड वडतां, दोहिलो कर्म विचार।
जेहवा दुख लहे छे प्राणी ते जाणे कीरतार॥ ७॥
कृत्रीम जीव तणी हिंसा की लागु पाप अपार।
हिंसा नवि कीजे रे, प्राणी कुमुदचन्द्र कहे सार॥ ८॥

(४३) गुरु गीत

सकल सजन मली रे, पूजो कुमुदचद ना पाय रे।
पाट उद्योत कर्यो रे, जाणे ऋषिवर केरो राय॥
गरुउ गोर अवतर्यो रे, दीठे दालिद्र पातिक जाय।
उपदेशें उछवे रे सघ प्रतिष्ठा बहु विध पाय॥
मत्र जपे रे यतीयचार पंचाचार॥ १॥
सुमति गुपति आदि ए पाले चारित्र तेर प्रकार।
क्रोध कषाय तजी रे वेगे, जीत्यो रति भरतार।
शील शृंगार सोहे रे, बुद्धि उदयो अभय कुमार॥ २॥
सखी में दीठडो रे, मीठडो सोल कला जस्यो चद।
जीव रख्या करे रे, अनोपम दया तरुवर कंद॥
विद्याबलि करी रे, आण मनाव्या वादि वृ द।
जस बहु विस्तरयो रे, चरण कमल सेवे नरेन्द्र॥ ३॥
आखडी कज पाखडी रे, अधर रग रह्यो परवाल।
वाणी सामली रे, लाजी गई कोयल वन अतराल॥
शरीर सोहामणु रे, गमने जीव्यो गज गुणमाल।
को कहे गुरु अवतारे देउ, दांन मान मोती माल॥ ४॥
गोपुर गाय भलू रे, वसूधा मध्ये छे विख्यात।
मोढ वशमा रे, साह सदाफल गोरवो तात॥
शील सोभागवती रे, सु दरी पदमाबाई जेहनी मात।
पुत्रम .... योरे लक्षण सहित पवित्र सुजात॥ ५॥
सघपति कहांन जी रे सघ वेण जीवादे नो कंत।
सहेसकरण सोहे रे तरुणी तेजल दे जयवत॥
मलदास मनहरु रे मारी मोहन दे अति संत।
रमा दे वीर भाई रे गोपाल वेजलदे मन मोहत॥ ६॥

बारडोली मध्ये रे, पाट प्रतिष्ठा कीध मनोहार।
एक शत आठ कुंभ रे ढाल्या निर्मल जल अतिसार॥
सूर मंत्र आपयो रे सकल संघ सानिध्य जयकार।
कुमुदचन्द्र नाम कहूं रे, सघवि कुटंब प्रतपो उदार॥ ७॥

गीत : (४४)

चालि—मोटो मुनि जी मोहन रुपे आणिए।
.... ॥
मुखमंडल जी पूरण शशि सोहामणो।
रूप रंग जी करुणावंत कोडामणो॥

त्रोटक--कोडामणो ए रूप रंगि रतनकीरत सूरीराय जी।
एकें ते चिते अनुभव्यो, पूजो ते ए गोर पाय जी॥
पाय पूजो गुरु तणा जिम पामो सुख भंडार जी।
सूंदर-दीसे सोभतो भवियण नो आधार जी॥

चालि—क्रीया ... ... पतिपाले भलो।
अभिनवह जी पाटि, उदयो गुण निलो॥
विद्यावंत जी शास्त्र सिद्धान्त सहू लह्यूं।
संगीत सार जी पिंगल सहु पाठे कहे॥

त्रोटक—पिंगल सहू पाठइं कहेने वाणी विबुध विशाल जी।
पर उपकारी पुण्यवंत भलो जीव दया प्रतिपाल जी॥
जीव दया प्रतिपाल सुणिए गोर गच्छपति सार जी।
मूलसंघ माहि महिमा घणो सरस्वती गच्छ सिणगार जी॥

चालि—गिरुउ गोर जी क्षमावंत माधुणु जाणीए।
माया मोह जी मच्छर मनमानाणीए॥
एहवो गोर जी तप तेजे सो जीपतो।
अवनि माहि जी दिन दिन दीसे दीपतो॥

त्रोटक—दिन दिन दीसे दीपतो ने हुंबड वंशे आज जी।
सिंहासण सोहे भलो लीला लावन्य लाज जी॥
लील लावण्य लाज कहीइ रतनकीरति सूरीराज जी।
कर जोडी नै कुमुदचन्द सेवक सार्या काज जी॥

(४५) दशलक्षणि धर्म व्रत गीत

धर्म करो ते चित उजले रे, जे दस लक्षण सार।
स्वर्गतणा ते सुख पामीइ, जिम तरीये ससार ॥ १ ॥
क्रोध न कीजे प्राणिया रे, क्रोध करें दुख थाय।
वारु क्षमा गुण भ्राणिया रे, जग सचलो जस गाय ॥ २ ॥
कोमलता ते गुण भ्राणिए रे, कठिन तजो परिणाम।
तप जप सयम सहू फले रे, पामो अविचल ठांम ॥ ३ ॥
सरल पणा थी सुख उपजे रे, मूंको मन नो मान।
मन नो मेल न रखीइ रे, पामीय केवल ज्ञान ॥ ४ ॥
जूठुं वचन नवि बोलिये रे, बोलियो साचो बोल।
मुख मडन रुअडू रे, सु करिये तबोल ॥ ५ ॥
शोच पणू ते वली पामीए रे, बाह्य अभ्यतर भेद।
भ्रष्ट पणा थी दुख पामीइ रे, जीणे धर्म उछेद ॥ ६ ॥
सुन्दर सयम पालीइ रे, टालिये सर्व विकार।
इद्रीय ग्राम उजाडिये रे, ताडिये दुर्धर मार ॥ ६ ॥
बार प्रकारे तप कीजीइ रे, निर्मल थये रे देह।
मुगति तणा ते सुख पामीइ रे, जेह तणो नही छेह ॥ ८ ॥
दांन मनोहर दीजीये रे, कीजिये निर्मल चित।
जन्म जरा ना दुख सहु टले रे, पामीय सौख्य अनत ॥ ६ ॥
ममता मोह न कीजीये रे, चितवीइ वेराग।
साथे कोई न ग्रावसरे, मूंकीये मन नो राग ॥ १० ॥
प्रेम करीने पालीये रे, ब्रहमचर्य गुण खाणि।
साभलता सुख पामीइरे, कुमुदचन्द्रनी वाणि ॥ ११ ॥

(४६) व्यसन सातनूं गीत

साते व्यसने बाधो प्राणी, कीधा कर्म कुकर्म।
लक्ष चोरासी योनि भमता, न लह्यो धर्म नो मर्म रे ॥
जीव मूके व्यसन असार, जीव छुटे तू ससार ॥जीव७। ग्राचली ॥
व्यसन पहेलू जू वटु रमता, धन सचलू हारी जे।
नाम जुग्रारी कहि बोलावे, लोक माहिलाजी जे ॥जीव०॥ २ ॥

बीजे व्यसनें जीव हणी ने, मांस भक्षन थई खायो।
तेहनें नरक मांहि रड बडतां, दुख घणी परिथाये ॥जीव०॥ ३ ॥
त्रीजे व्यसनें सुरा जे पीये, तेहनी मति सहु जाये।
फले माल पखाल असुद्ध, जाति माहि न समाये ॥जीव०॥ ४ ॥
वेश्या व्यसन तजो सहु चोथु, जे छे दुख भण्डार।
धन जाये लपट कहवाये, नासे कुल आचार ॥जीव०॥ ५ ॥
व्यसन पांचमूं जीव आखेटक, रमता जीव सताये।
मारे जीव अनाथ अबाधक, ते बूडे भव पाये ॥जीव०॥ ६ ॥
सांभलि सीख अह्मारडी छट्ठें म करिस्य केहनी चोरी।
ते सघला मलीने खासे, पडसे तुझ उपरि जमवोरी ॥जीव०॥ ७ ॥
म करिस्य मूरख व्यसन सातमे परनारी नो सग।
हाव भाव करस्ये ते खोटो, जे हवो रग पतग ॥जीव०॥ ८ ॥
जूआ रमता पांडव सीदाये सास थकी बक भूप।
मद्यपान थी यादव खीज्या, वणस्या तेहना काज ॥जीव०॥ ९ ॥
चारुदत्त दुख अति घणु पाम्यो, राज्यो वेश्या रूप।
ब्रह्मदत्त चक्री आहेडे, ते पडियो भव कूप ॥जीव०॥ १० ॥
चोरी थकी शिवभूति विडम्यो, जी शीके चढी रहे तो।
परनारी रस लपट रावण, ते जग माहि विगूतो ॥जीव०॥ ११ ॥
व्यसन एक ने कारण प्राणी, पाम्या दुक्ख समूह।
जे नर सघला व्यसन विलूधा, टेहनी सी कहू बात ॥ जीव०॥ १२ ॥
इम जाणी जे विसर्जे, मनि धरी सार विचार।
श्री कुमुदचंद्र गुरु ने उपदेशे ते पामे भव पार॥
जीव मू के व्यसन असार, जेम छूटे तु ससार ॥जीव०॥ १३ ॥

(४७) अठाई गीत

गौतम गणधर पाय नमीने, कहेस्यु मुझ मति सारुणी।
सांभलियो भवियण ते भावी, अष्टाह्निका विधि वारु जी ॥ १ ॥
मास अषाढ मनोहर सोहे, कार्तिक फागुण मासि जी।
आठमी थरी उपवास जी कीजे, मनुस्यु अति उल्लास जी ॥ २ ॥
नाम भलूं नदीश्वर तेहनू, टाले भवना फद जी।
एक लक्ष उपवास तणू फल, बोले वीर जिणेंद जी ॥ ३ ॥

नवमी दिन पकासन कीजे महा विभव तप नाम जी ।
दश हजार उव्वास तणूं, फल पांमे शिव पद ठाम जी ॥ ४ ॥
दशमीने दीहाडे ते कीजइ, काजि कनो ग्रहार जी ।
त्रैलोक्य सार शुभ नाम मनोहर, ग्रापे त्रैलोक्य सार जी ॥ ५ ॥
साठि हजार उपवास फलेते, टाले मन ना दोष जी ।
एकादशीइं एकल ठाणू चोमुखे तप सतोष जी ॥ ६ ॥
पांच लक्ष दश गुण उपवासह जे छे पुण्य भण्डार जी ।
बारसिनें दिवसे ते कीजे, ग्रणागार सुखकार जी ॥ ७ ॥
पाच लाख तप नाम चोरासी, लाख उपवास सफल कहीइ जी ।
तेरसि षट्रस ग्रशन करी जे, स्वर्ग सोपाने रहीये जी ॥ ८ ॥
च्यालिस लक्ष उपवास तणू फल, ग्रापे ग्रति ग्रभिराम जी ।
एक ग्रन्न त्रिण व्यजन जमीइ, चउदिश दिन सुख धाम जी ॥ ९ ॥
सर्व सम्पदा नाम महातप, कह्निये कलिमल नासे जी ।
एक लक्ष उपवास तणू फल, गौतम गणधर भासे जी ॥ १० ॥
पूनिम नो उपवास ज करिये इ द्रकेतु तप भणीइ जी ।
त्रिण्य कोडि शिर लाख प्रमाणे, उपवासह फल गणिइ जी ॥ ११ ॥
सर्व मिलीने पाच कोडि एकतालिस, लक्ष दश सहस्र जी ।
वर उपवास तणू फल तहीये, ग्रष्टाह्निका व्रत करेसि जी ॥ १२ ॥
मदन सुन्दरीइ मनने रगे, श्रीपाले व्रत कीधू जी ।
मन माहि ग्रति भाव धरीने, मन बाछित तस सीधू जी ॥ १३ ॥
जे नरनारी व्रत करीस्य, तेहने घरि ग्राणद जी ।
रत्नकीरति गोर पाट पटोधर, कुमुदचद्र सुरिद्र जी ॥ १४ ॥

(४८) भरतेश्वर गीत

श्री भरतेश्वर रायस्या शुभ कीधला रे ।
कोण पुण्य कीधला रे ।
जिणे तात ग्रादीश्वर पाम्या ।
सुरनर सेवित पाय ॥ १ ॥

समोसरणजी रचना जेहने, त्रण्य शालि तिहा भासइ ।
मानस्तभ च्यारे निसि सुन्दर, जेहथी मन उल्हासे ॥

वृक्ष अशोक अनोपम पुष्पित, शोभे श्री जिन पासे।
जन्म जन्मना रोग शोक दुख, जे दीठे सहू नासे ॥ २ ॥
परिमल भार अपार गगन थी, कुसुम वृष्टि महिंबाये।
उहरि भ्रमर करे गुंजारव, जाणे जिन गुण गाये।
सर्व जीवनी भासा मांहि, सशय सघला जाये।
साभलता दिव्य ध्वनि, जिनमी मन मा हर्ष न माये ॥ ३ ॥
चंचच्चन्द्र मरीचि मनोहर, उपरि चमर ढलाये।
जे नर नमें जिनेश्वर चरणे, तेहना पाप पुलाये॥
हेम सिंहासन उपरि बेठा, जिन शोभा न कलाये।
च्यारे पासेइ चतुर्मुख दीसे, जोता तृप्ति न पाये ॥ ४ ॥
दीन दयाल प्रभु नी पाछलि, भामंडल अति राजे।
तेज पुंज देखीने जेहनूं, रवि रजनीकर लाजे॥
अतिगम्भीर तार तरलस्वन देव दुंदभि बाजे।
जाणे मोह विजय वाजित्रज. नादे अबर गाजे ॥ ५ ॥
मजुल मुक्ता जाल विराजित, छाजे छत्र अनूप।
जेहनो इंद्रादिक जस गावे. त्रण्य जगत नो भूप॥
प्रातिहार्य वसु सख्य विभूषित, राजे रम्य स्वरूप।
केवलज्ञान कलित भुवनत्रिक ते तारे भव कूप ॥ ६ ॥
भव्य जीव ने जे सबोधे, चोत्रीस अतिशयवत।
युगला धर्म निवारण स्वामी महिमंडल विचरंत॥
शेष कर्म ने जीते जिनवर थया मुक्ति श्रीवंत।
कुमुदचन्द्र कहे श्री जिन गाता, लहिये सुक्ख अनत ॥ ७ ॥

(५०) पार्श्वनाथ गीत

हासोट नगर मोहामणो जिन सुन्दर वामानद।
गर्भ महोछव जेहनें सहू, आव्या इंद्र आणद॥
पासजी सपति पूहोजी, सकटहर सकट चूरो जी ॥ १ ॥
बादल नही वरसा नही, नही गाजनें बीज प्रचण्ड।
अउठ कोडि वररत्ननी, नित वरसे धार अखण्ड ॥ २ ॥
नयणदीठो नही सांभल्यो, कहो रयण तणो वलि मेह।
ते शुभ मात गृह आगणे, दठो दिन दिन अतिशय येह ॥ ३ ॥

जन्म जाण्यो जिन जी तणो, त्यारि मिलिया अमर सु जाण ।
मेरु शिखर लेई जाई तिहा, कीधू जनम विधान ॥ ४ ॥
सजल धनाधन सामली, अतिकाय कला मनोहर ।
रूप अनोपम जोवता, काम कोटि कीजे बलिहार ॥ ५ ॥
मन वेराग धरी करी, तह्यों मूक्यु महीपति साज ।
बाल तप आदर्यो, तह्यों कीधू आतम काज ॥ ६ ॥
पछे योग जुगुति तीणे करी, धारी निर्मल आतम ध्यान ।
धाति कर्मनो क्षय करी, उपनू वर केवल ज्ञान ॥ ७ ॥
लोक अलोक विषय करी, हरे पाप तिमिर जिनराज ।
रवि छवि नवि शोभा लहे, चालि चन्द्र कला करी लाज ॥ ८ ॥
जीतिय धातिय चोकडी, तहमे पाम्या परम पद स्थान ।
सकल स्वरूप कला तोरी, तु तो अमिन अमेरु समान ॥ ९ ॥
श्रीरतनकीरति गुरुने नमी, कीधा पावन पचकल्याण ।
सूरी कुमुदचद्र कहे जे भणे, ते पामे अमर विमान ॥ १० ॥

(५१) अंघोलडी गीत

रमति करी घरि आवीया, कहे मरुदेवी माय ।
आवो वच्छ अघोलवा, रुडा त्रिभुवन केरडा राय ॥
ऋषभ जी अघोलियो अघोलडी अगि सोहाय ।
अघोलिये प्रथम जिनेद्र अघोलिये त्रिभुवन चद्र ॥ १ ॥
अगि लगाडूं अति भलू, मघ मघ तु मोगरेल ।
सखर सूये मुख चोपडु घालू माथे सारु केवडेल ॥ २ ॥
केसर चदन बावना भलू माहि ब रास ।
अगर तणो रंग जो करी, अगे उगटणू सुवास ॥ ३ ॥
सुन्दर खल घोली करी, नह्लरावे सुरनारि ।
सुवर्ण कु डी जले भरी, नेमि खल–खल निर्मल वारि ॥ ४ ॥
जब अ घोलि उठिया अगोछि जिन अंग ।
रंग सुरग विराजितुं पहेर्या नाहना पीताबर चग ॥ ५ ॥
आजि आंखि सोहामणी, त्रिभुवन जन मोहंत ।
अति सुन्दर केसर तणु, रुडु निलवट तिलक सोहत ॥ ६ ॥

उठ्या कुंअर कोडामणा, करो सुखडली सार।
वेसी सुवर्ण वेसणे, मेहलू मेवा मीठा मनोहार ॥ ७ ॥
खारिक खहू लेलानवा दाख बदाम अखोड।
पिस्ता चारोली भली, खाता मनस्युं थाये घणुं कोड ॥ ८ ॥
घेवर फीणी खाजली, सखर जलेबी जाणि।
मोदकने तल सांकली चण्या साकरिया रस खाणि ॥ ९ ॥
एम नाना विध सूखडी, करी उठ्या नाभि मल्हार।
खाधा पान सुरगस्युं, मरुदेवी करे सिणगार ॥ १० ॥
भिणो भगो विराजतो बाधी घटी आणंद।
नवल पछेडी सोभती मोह्या मोलियो सुरनर वृंद ॥ ११ ॥
काने कुडल लहकतां, हार हैए भलकंत।
कडिदोरो कडि उपतो, पगे घुघरडी घमकत ॥ १२ ॥
बाजू बध सोहामणी, राखडली मनोहार।
रूपे रतिपति जीतीयो जाये कुमुदचन्द्र वलिहार ॥ १३ ॥

(५२) चौबीस तीर्थंकर देह प्रमाण चौपई

आदि जिनेश्वर प्रणमो पाय।
युगला धर्म निवारण राय ॥
धनुष पचसे उच शरीर।
कनक कांति शोभित गंभीर ॥ १ ॥
अजित नाथ आये सुर लोक।
जनम मरण ना टाले शोक ॥
धनुष माए लेने पचास।
उच पणे हाटक सम भास ॥ २ ॥
संभव जिन सुख आये बहु।
अहि निश सेव करे ते सहू ॥
धनुष च्यारसे दे प्रमाण।
हेम वरण शोभे वरणाय ॥ ३ ॥
अभिनंदन नमतां दुख टले।
मन ना वंछित सब ··· ······ ॥
··········· उठते मडित काय।
हेम कांति दीठा सुख थाय ॥ ४ ॥

सुमतिनाथ वर मति दातार ।
उतारे भव सागरनो पार ॥
धनुष त्रिणसे सोहे देह ।
जत रोचि पूजो जिन एह ॥ ॥ ५ ॥
पद्मकांति करुणा कर जीव ।
सुर नर किन्नर सारे सेव ॥
चाप अढीसे मूरति मान ।
अरुण अनूपम दीये वानि ॥ ६ ॥
सेवो सुंदर देव सुपास ।
जि पूरे वर मननी आस ॥
उंच पणे तनु शत युग चाप ।
नील वरण टाले सताप ॥ ७ ॥
चन्द्रप्रभ चंद्रानन भलो ।
शत मुख सेव करे जगतिलो ॥
धनुष डौढ सो मान जिणंद ।
गोर काति टाले भव फंद ॥ ८ ॥
पुष्पदंत सेवो मन शुद्धि ।
जे आपे अति निर्मल बुद्धि ॥
सोज सरासन तनु उत्तंग ।
ऊजलडू सोभे जसु अंग ॥ ९ ॥
शीतलनाथ सुशीतल वाणि ।
जे जिनवर गुण गणनी खाणि ॥
नेऊ चाप शरीर अनूज ।
हेम वरण सेवे जस भूप ॥ १० ॥
सेवो देव भलो श्रेयांस ।
जे आपे मन वंछित दान ॥
ऊंच पणे विसऊ .... ।
धनुष हेम सम तनु जगदीश ॥ ११ ॥
वासुपूज्ये पूजो मन रंग ।
जे पहिरे नवि भूषण अंग ॥
सित्यर चाप अरुणस्यु रूप ।
तेहने नित्य उवेषो घूप ॥ १२ ॥

दोहा—पुण्य करो रे प्राणिया, पुण्य भलू संसार ।
पुण्ये मन वंछित मिले, रूप रगीली नारि ॥ १३ ॥

पाप न कीजे पाडुआ, पाप थकी दुख थाय ।
पापी मार्‌यो प्राणियो, च्यारे गति से जाय ॥ १४ ॥

चौपाई—वंदो विमल विमल गुणवंत ।
जेहना चरण नमे नित संत ॥
साठि सराशन देहज कर्‌यो ।
हेम वरण मुगति जइ रह्यो ॥ १५ ॥
समरो देव दयाल अनंत ।
अवर न कीजे खोटा तंत ॥
देह शराशन बे पच बीस ।
हाटक सरखी छवि नवि रीस ॥ १६ ॥
धर्मनाथ ने मन माँ धरो ।
जिन शिवरमणी हेला वरो ॥
त्रीस पनर धनुष सोहंत ।
हेमवरण सुर नर मोहंत ॥ १७ ॥
शांतिनाथ नू समरो नांम ।
जिन प्रभात टाले से ठांम ॥
बिसुणा बीस शरासन बेर ।
हेम वरण जाणे नवि फेर ॥ १८ ॥
कुंथु जिनेश्वर करूणा कंद ।
जेहना चरण नमै सुर वृंद ॥
धनुष बीस पनर तन काय'
'हेम' वरण सुर नर जस गाय ॥ १९ ॥
समर्‌या सिद्धि करे अरनाथ ।
मुगति पुरी नो जे जिन साथ ॥
धनुष त्रीस ऊंचा अति भला ।
सात कुंभ नरखी तनु कला ॥ २० ॥
मल्लि जिनेश्वर महिमा घणो ।
बेंहु टाले फेरो भवतणो ॥
ऊंचू अंग धनुष पंच बीस ।
हेम वरण सेवो निश दीश ॥ २१ ॥

पूजो जिन मुनिसुव्रत सदा ।
रोग सोग नव आवे कदा ॥
धनुष बीस तनु कलि काति ।
जेह नामे नासे भव भ्रांति ॥ २२ ॥
सेवो नमि नमि तस चरण ।
सेवक जन नें शिव सुख करन ॥
पन्नर चाप शरीर सु हेम ।
वरण भस्म लो जमना क्षेम ॥ २३ ॥
पूजो पद नेमीश्वर तणा ।
जि पहोचे मननी सहु मणा ।
उंच पणे दश धनुष सुस्याम ।
काय कला दीसे अभिराम ॥ २४ ॥
भवियण सहू समरो जिन पास ।
जिम पहोचे सहू मननी आस ॥
उंच पणें दीसे नव हाथ ।
हरीत वरण दीसे जगनाथ ॥ २५ ॥
महावीर वदू त्रिण काल ।
जिम मेटे भव जग जजाल ॥
सात हाथ सोहे जस तनू ।
हेम वरण शोभे अति घणु ॥ २६ ॥
ए चोवीसे जिनवर नमो ।
जिम ससार विषे नवि भमो ॥
पामो अविचल सुखनी खाणि ।
कुमुदचन्द्र कहे मीठी वाणि ॥ २७ ॥

(५३) श्री गौतम स्वामी चौपई

प्रह ऊठी लियो गौतम नाम ।
जिम मन वछित सीभे काम ॥
गौतम नामि पाप पलाय ।
गौतम नामि भावठिजाय ॥ १ ॥
गौतम नामे नासे रोग ।
गौतम नामे सुन्दर भोग ॥

गौतम नामे गुण संपजे।
गौतम नामे भूपति भजे ॥ २ ॥
गौतम नामे पुहचे आस।
गौतम नामि लब्धि विलास ॥
गौतम नामे सब अघ टले।
गौतम नामे सज्जन मिले ॥ ३ ॥
गौतम नामे बाधे बुद्धि।
गौतम नामि नव निधि सिद्धि ॥
गौतम नामे रूप अपार।
गौतम नामे हय गय सार ॥ ४ ॥
गौतम नामि मंदिर घणां।
गौतम नामि सुख सहु तणा ॥
गौतम नामि गमती नारि।
गौतम नामे मोहे " ... " ॥ ५ ॥
गौतम नामि बहुदी करा।
गौतम नामि नावे जरा ॥
गौतम नामि विष उतरे।
गौतम नामे जलनिधि तरे ॥ ६ ॥
गौतम नामे विद्या घणी।
गौतम नामें निर्विष फणी ॥
गौतम नामि हरी नवि नडे।
गौतम नामे नवि आखडे ॥ ७ ॥
गौतम नामे नोहे शोक।
गौतम नामे माने लोक ॥
सेवो गौतम गणधर पाय।
कुमुदचंद्र कहे शिव सुख थाय ॥ ८ ॥

(५४) संकटहर पार्श्वनाथनी विनती

गौतम गणधर प्रणमू पाय, जेह नामे निरमल मति थाय।
गासु पास जीनेन्द्र ॥ १ ॥
अश्वसेन कुल कमल नभोमणी, जग जीवन जिनवर श्रीधोवन धणी।
बामा राणी नदो ॥ २ ॥

कमठ महा मदकरी पचानन, भवीक कुमुद वन हिमकर आनन।
भव भय कानन दावो ॥ ३ ॥

नील वरण अति सुन्दर सोहे, निरखता सुर नर मन मोहे।
मनु मगल भावो ॥ ४ ॥

नगर वराणसी जनम ज कहीये दरशन दीठे सिव सुख लहीये।
महीयले महिमावत ॥ ५ ॥

बाल पणे जर . . सीधो, मोह महाभटनो क्षय कीधो।
लीधु पद अरिहत ॥ ६ ॥

समोहसरण जीनवरनु राजे, केवल ज्ञान कला अति छाजे।
भाजे भव सदेह ॥ ७ ॥

वाणी मधुरी मनोहर गाजे, अण वाजा वाजित्र ज वाजे।
लाजे पावस मेह ॥ ८ ॥

देस विदेस वीहार करीने, कर्म पलोल सहु दूर हरीने।
पाम्या परमानदो ॥ ९ ॥

तुम नामे सहु भावेठ भाजे, तुम नामे सुख सपति छाजे।
छूटे भवना फद ॥ १० ॥

रोग सोग चिंता सहु नासे, तुम नामे रुडी मत भाजे।
आणद अग अपार ॥ ११ ॥

तुम नामे मेघल मद जलभर, रोस चढो केशरी अति दुद्धर।
तेन करे कन थार ॥ १२ ॥

तुम नामे शीतल दावानल, तुम नामे फणपति अति चचल।
नेह न करे मन सोस ॥ १३ ॥

उद्धति अरियण थलम कलाकर . . . . टले दुष्ट जलधर।
न हो बधन सोख ॥ १४ ॥

मात पिता तुम सज्जन स्वामि, तह्मे बाधव तह्मे अतर जामि।
तमे जग गुरु मने ध्याउ ॥ १५ ॥

सकटहर श्री पास जिनेश्वर, हासोट नयरे अतिसय सोभाकर।
नित नित श्री जीन गाउ ॥ १६ ॥

जे नर नारि मनसु भणसे, तेहने घर नव निध संपसे।
लहसे अविचल ठाम ॥ १७ ॥

श्री रतनकीर्ति सुरिवर अतिशय, तेह परसादे जिन गुण गाय।
कुमुदचंद्र सुर नामि ॥ १८ ॥

(५५) लोडण पार्श्वनाथनी विनती

समरू सारदा देवि माय, अहनिशि सुर नर सेवे पाय।
आपे वचन विलास ॥ १ ॥

लाड देस दीसे अभिराम, नगर डभोई सुन्दर ठाम।
जाहा छे लोडण पास ॥ २ ॥

आवे सघमली मनरगे, नर नारि वांदे सहु संगे।
पूजे परमानंदो ॥ ३ ॥

जय जयकार करे मन हरखे, जिन उपर कुसुमाजलि वरखे।
स्तवन करे बहु छंदे ॥ ४ ॥

गाये गीत मनोहर सादे, पच सबद बाजे करि नादे।
.. .... नारि वृंद ॥ ५ ॥

वेलुनी प्रतिमा विख्यात, जाणे देस विदेसे बात।
सोहे शीस फणींद ॥ ६ ॥

सागरदत्त हतो वणजारो, पाले नियम भलो एक सारो।
जिन वदी जय वानी ॥ ७ ॥

एक समय वाटे उतरीये, जम वावेला जित साभरीयो।
सच करे प्रतिमानो ॥ ८ ॥

वेलुनी प्रतिमा आलेखी, वादी पूजीने मन हरखी।
ते पधरावि कुपे ॥ ९ ॥

त्यारे ते वलुनी मूरत, जल माहि थई सुन्दर सूरत।
अग अनोपम रूपे ॥ १० ॥

वणजारो ते वेहेलो आव्यो, वलतो लाभ घणो एक लाव्यो।
उतरीयो तेणे ठामे ॥ ११ ॥

सागरदत्त करे सु विचार, वाटे कुशल न लागी वार।
ते स्वामिने नामे ॥ १२ ॥

राते सुपन हूवू ते त्यारे, केम नांखी कूप मझारे।
काढ ईहा थी मझने ॥ १३ ॥

तु काचे तातणवे साडे, काढे हु न वलागु भामारे।
.. ... तुझने ॥ १४ ॥
वणजारो जाग्यो वेलक सु, उठो उल्टकर वरीयो मनसु।
गयो ताहां परभाते ॥ १५ ॥
सज्जन साथे बात करीने, मुक्यो तातण जिन समरीने।
सागरदत्तो जाते ॥ १६ ॥
काचे तातग जिनवर बैठा, लेहे कता सहु लोके दीठा।
हलवा फूल समान ॥ १७ ॥
बाहेर पधारावि वे सार्‌या,जे जे जन सहु कोणे जुहार्‌या।
आप्या उलट दान ॥ १८ ॥
जोतां हुइडे हरष न माय, वचने रूप कहु नवि जाय।
चित प्रसमम थाय ॥ १९ ॥
नाना विध वाजित्र व जाडे' आगल थी खेला न चाडे।
माननी मगल गाये ॥ २० ॥
आएया प्रधीक दीवाजा साथे, वणजारे लीधा जिन हाथे
रम्य डभोई गाम ॥ २१ ॥
रुडे दीन मूरत जोइने, वारु पूजा नमण करीने।
पधराव्या जिन धामे ॥ २२ ॥
नाम धरु ते लोडण पास, पचम काले पूरे आस।
वाका विघन निवार ॥ २३ ॥
नामे चोर नडे नही वाटे, ऊजड अटवी डूगर घाटे।
नदीयो पार उतारे ॥ २४ ॥
भूत पिशाच तणो भय टाले, चेडा मत्र न सश्रन।
डाकीणी दूरे नासे ॥ २५ ॥
व्यंतर वा पाणी थई जाये, जस नामे विषहर नवि खाये।
बाघ न आवे पासे ॥ २६ ॥
भव भवनी भावेठ जे भजे, रण मांहि वेरी नवि गजे।
रोग न आवे अ गे ॥ २७ ॥
जेहने नामे नासे सोक, सकट सघला थाये फोक।
लक्ष्मी रहे नित संगे ॥ २७ ॥

नाम जपंता न रहे पास. जनम मरण टाले सताप ।
आपे मुगति नीवास ॥ २९ ॥

जे नर समरे लोडण नाम, ते पामे मन वांछित काम ।
कुमुदचन्द्र कहे भाषा ॥ ३० ॥

(५६) जिनवर विनती

प्रभु पाय लागु करू सेव ताहारी ।
तमे सांभलो श्री जिनराव माहारी ॥
मन्हे मोह वेरी पराभव करे छे ।
चौगति तणा दुक्ख नहीं वीसरे छे ॥ १ ॥
हू तो लक्ष चोरासिय योन माहि ।
भम्यो जनम ने मरण करे मथाहे ॥
पूरा मे कर्या कर्म जे धर्म छाडी ।
कवहु ते सहु सांभलो स्वामी माडी ॥ २ ॥
हू तो लोभ लपट थयो कपट कीधा ।
घणू मोलवी परतणा द्रव्य लीधा ॥
वली पड पोस्यो करी जीव हसा ।
करी पारकी कुंतली निज प्रसस्या ॥ ३ ॥
मे तो बालीया पार का मर्म मोसा ।
नही भासीया आपणा पाप दोसा ॥
सदा सग कीधो परनारी केरो ।
नहीं पालीयों धर्म जिन राज तेरो ॥ ४ ॥
पद्मोधर तणे पास ·········· ।
नही सभस्यो जिन उपदेस सुधो ॥
हू तो पुत्र परिवार ने मोह मातो ।
नही जाणीयो जिनवर काल जातो ॥ ५ ॥
गृहरिभनु पाप करी पड मार्यो ।
माह्वा मुरखे नरभव फोक हार्यो ॥
गयो काल ससार आले भमता ।
सह्या ते अति दुर्गति दुख अनंता ॥ ६ ॥

घणे कष्ट जिनराज नु देव पाम्यो।
हुवे सर्व ससारना दुक्ख वाम्यो॥
जारे श्री जिनराज नु रूप दीठू ।
त्यारे लाचने रूयडलु अमीय वूठू ॥ ७ ॥
आवी कामधेनु घर माहे चाली।
भरी रत्नचितामणी हेम थाली॥
जाणु घर तणो आगणे कल्पवृक्ष ।
फलो आलव वाछित दान सौक्ष ॥ ८ ॥
गयो रोग सताप ते सर्व नाठो।
जरा जन्मने मरण नो त्रासना ह्राठो ॥
हुवे सरणे आप्या तणी लाज कीजे।
कर्या जे अपराध सहु खमीजे ॥ ९ ॥
घणु विनवू, नवू छु जगनाथ देवो।
मने आप जो भव भव स्वामि सेवो॥
एह वीनती भावसु जे भणसे।
कुमुदचंद्र नो स्वामि शिव सौख्य देसे ॥ १० ॥

(५७) राग प्रभाती

जाग रे भवियण उघ नवि कीजे।
थयु सु प्रभावित नोकार गणीजे॥ आवली॥
प्रथम अरहतनू लीजिये नाम।
जेम सरेरु अडला वछित काम ॥ जागो० ॥ १ ॥
सिद्ध समरता आलस मूको ।
माणस जनम ते फोकम चूको ॥ जा० ॥ २ ॥
पच आचार पाले यतिराय।
तेहनें बदता पाप पलाय ॥ जा० ॥ ३ ॥
जे उवझाय साहे श्रुतवत।
तेहनू ध्यान धरिये एक चित ॥ जा० ॥ ४ ॥
साधु समरीई जे व्रत पाले।
निर्मल ताप करी कर्ममल टाले ॥ ज० ॥ ६ ॥
पच परमेष्ठि जे ए नितु ध्याई।
कहे कुमुद्रचद्र ते नर सुखी थाये॥ जा० ॥ ७ ॥

(५८) राग प्रभाती

जागि हो भवियरण सफल विहारगु ।
नाम जिनराज नूल्योतले भांरा ।। १ ।। आंचली ।।
वृषभ जिन अजित संभव सुखकारी ।
देव अभिनदन प्रगट्यो भवहारी ।। जा० ।। २ ।।
सुमिति पद्मप्रभ सागर गुरण गाउ ।
जिनकी सुपासना गुरण गरण ध्याये ।। जा० ।। ३ ।।
चितवो चन्द्रप्रभ देव जिनराज
पुष्पदत्त नमों जिन सरे काज ।। जा० ।। ४ ।।
सकल सुख खाणी सीतल जिनदेव ।
समरो श्रेयास सुर नर करे सेव ।। जा० ।। ५ ।।
पूजता वासुपूज्य गुरण सार ।
विमल अनत भवसागर तार ।। जा० ।। ६ ।।
धर्म जिन शांति कुंथ अर मल्लि ।
भग कीधी जेरणे कामनी मल्ल ।। जा० ।। ७ ।।
नमो मुनिसुव्रत नमि दुख चररण ।
नेमि जिनवर मन वाछित पूररण ।। जा० ।। ८ ।।
पास जिन आस पूरे महावीर ।
एह चोबीस जिन मेरु समधीर ।। जा० ।। ९ ।।
जे नर नारी ए वीनती गास्ये ।
कहे कुमुदचन्द्र ते नर सुखी थास्ये ।। जा० ।। १० ।।

राग प्रभाती : (५९)

जागि हो भवियण उधीये नही थगू ।
थयुासु प्रभाति तूं नाम ले जिन तगू ।।प्राचली।। १ ।।
उठी जिनराजने देहरे जइए ।
देव मुखि देखता जिम सुख लहीये ।।जागि०।। २ ।।
पछे पद वदीई श्री गोर केरा ।
छुटीइ जिम वली भवतरणां फेरा ।।जागि०।। ३ ।।
देव गुरु साख्य समायक कीजे ।
पंच परमेष्टी नाम जपीजे ।।जागि०।। ४ ।।

ते पछी गुरु वचनामृत पीजे ।
जिम भव दुख जलाजलि दीजे ॥जागि०॥ ५ ॥

कीजीये संगति साधुनी रुडी ।
जेहथी उपजे नही मतिमूडी ॥जागि०॥ ६ ॥

क्रोध माया मद लोभ मूकीजे ।
हसीय सुपामने दानजदीजे ॥जागि०॥ ७ ॥

बोलिये वचनते सर्व सोहातु ।
जेहथी उपजे नही दुख जातु ॥जागि०॥ ८ ॥

मूकीय मोह जजाल सहू खोटु ।
जोडस्ये को नही आयुष त्रूटे ॥जागि०॥ ९ ॥

जायछे योवन थाप तु डार्‌यो ।
तप जप करीस्ये ने लीजीये लाहो ॥ जागि० ॥ १० ॥

कहे कुमुदचन्द्र जे एह चितवस्ये ।
तेहने घरि नितु मगल विलस्ये ॥ जागि० ॥ ११ ॥

राग प्रभाती (६०)

आवो रे सहिय सहिलडी सगे ।
विघन हरण पूजीये पास मनरगे ॥ आचली ॥

नीलबरण तनु सुन्दर सोहे ।
सुग्नर किन्नरना मन मोहे ॥ आवो० ॥ १ ॥

जे जिन वदिता वाछित पूरे ।
नाम लेता सहु पातक चूरे ॥ आवो० ॥ २ ॥

जे सुप्रभाति उठी गुण गाये ।
तेहने घरि नव निधि सुख थाये ॥ आवो० ॥ ३ ॥

भय भय वारण त्रिभुवन नायक ।
दीन दयाल ए शिव सुख दायक ॥ आवो० ॥ ४ ॥

अतिशयवत ए जगमाहि गाजे ।
विघन हरण वारु विरुद विराजे ॥ आवो ॥ ५ ॥

जेहनी सेव करे धरणेंद्र ।
जय जिनराज तु कहे कुमुदचन्द्र ॥ आवो ॥ ६ ॥

राग प्रभाती (६१)

उदित दिन राज रुचि–राज सुविभातं ।
भाव भावक भावय शुभ जातं ।।
मुंचहे मंदत्वं मचक नत सुर ।
भज भगवंत ममि भूरि भाभासुर ।। १ ।।
त्यक्त तारुण्य युत तरुणी वर भोग ।
योग युक्ता यति ध्यान धृत योग ।। मु० ।। २ ।।
धृतह सित वदन कज भविक शत शात ।
विसृत विस्तार तम उच संघातं ।। मु० ।। ३ ।।
सुरवर स्तुति मुखर मुख भूरि सुखमा कर ।
विश्व सुख भूमिनो वधनत्व हर ।। मु० ।। ४ ।।
विगत तारा वर विहत घन तद्र ।
हस भासा प्रमुद कुमुदचन्द्र ।।
मुंचहें मदत्व मचक नत सुर ।। मु० ।। ५ ।।

राग पंचम प्रभाती (६२)

आवोरे साहेली जइए यादव धणी ।
पाउले लागीने कीजे वीनती घणी ।।
आवडो आडवर करी सेहने ते आव्या ।
तोरण थी पाछा वली जाता लोक हसाव्या ।। आ० ।। १ ।।
विण वांके किम मू की ने चाल्या रुडा सामला ।
मनुस्यु विमासी जुयो मु की आमला ।। आ० ।। २ ।।
पीउडा पाखिरे किम मदिर रहीइ ।
कुमुदचन्द्र नो स्वामी कृपाल कहीइ ।। आ० ।। ३ ।।

राग देशाष प्रभाती (६३)

जागि हो भोर भयो कहा सोवत ।।
सुमिरहु श्री जगदीश कृपानिधि जनम बाधिक खोवत ।।जागि।। १ ।।
गई रजनी रजनीस सिधारे, दिन निकसत दिनकर फुनि उवत ।
सकुचित कुमुद कमलवन विकसत,
सपति विपति नयननी दोउ जोवत ।।जागि०।। २ ।।
सजन मिलें सब आप सवारथ, तुहि बुराई आप शिर ढोवत ।
कहत कुमुदचन्द्र यान भयो तुहि,
निकसत घीउ न नीर विलोवत ।।जागि।। ३ ।।

(६) चन्दा गीत

विनय करी रायुल कहे, चंदा ! वीनतडी अवधारो रे।
उज्जल गिरि जई वीनवो, चदा ! जिहा छे प्राण आधार रे।
गगने गमन ताहरु रुवडू, चंदा ! अमीय वरखे अनत रे।
पर उपगारी तू भलो, चदा ! वलि वलि वीनवु सत रे ॥ १ ॥
तोरण आवी पाछा वल्या, चदा ! कवण कारण मुझ नाथ रे।
अह्य तणो जीवन नेमजी, चदा ! खिण खिण जोउ छु पंथ रे ॥ २ ॥
विरह तणा दुख दोहिला, चदा ! ते किम मे सहे वाय रे।
जल विना जेम माछली, चदा ! ते दुख में न कहे वाय रे ॥ ३ ॥
मे जाण्यु प्रीउ आवस्ये, चदा ! करस्ये हाल विलास रे।
सप्त भूमि नउरडे, चदा ! भोगवस्यु सुखराशी रे ॥ ४ ॥
सुन्दर मदिर जालिया, चदा ! झलके छे रत्ननी जालि रे।
रत्नखचित रुडी सेजडी, चदा ! मगमगे धूप रसाल रे ॥ ५ ॥
छत्र सुखासन पालखी, चदा ! गजरथ तुरग अपार रे।
वस्त्र विभूषण नित नवा, चदा ! अग विलेपन सार रे ॥ ६ ॥
षट रस भोजन नव नवा, चदा ? मूलडी नो नही पार रे।
राज ऋषि सहू परहरी, चदा ! जई चढ्यो गिरि मझारि रे ॥ ७ ॥
भूषण भार करे घणू चदा ! नग मे नेउर झमकार रे।
कटि तटि रसना नडे घनि, चदा ! न महे मोतीनो हार रे ॥ ८ ॥
झलकति झालिहु झवहु, चदा ! नाह विना किम रहीये रे।
खीटली खति करे मुझने, चदा ! नागला नाग सम कहीये ॥ ९ ॥
टिली मोरु नलवट दहे, चदा ! नाक फूली नडे नाकि रे।
फोकट फरके गोफणे, चदा ! चोट लेस्यु कीजे चाकरे ॥ १० ॥
सेस फुल सीसे नवि धरु, चदा ! लटकती लन सोहावे रे।
घम धम करता घूघरा, चदा ! वीछीया विछि सम भाव रे ॥ ११ ॥
जे सूता चित्रित उरडे, चदा ! ते रहे आज अगासि रे।
उन्हाले रवि दोहिलो चंदा ! ते किम सहे गिरि वासे रे ॥ १२ ॥
वरसाले वरसे मेहलो, चदा ! वीजलो नो झातकार रे।
झझाबात ते वाज से, चदा ! किम सहे मुझ भरतार रे ॥ १३ ॥
हिम रते हिय अति पडे, चदा ! थर थर कपे काय रे।
ए दिन योग छे दोहिलो, चदा ! स्यु करस्ये यदुराय रे ॥ १४ ॥

पोपटडो बोले पाडवूं, चदा ! मोर करे बहु सोर रे।
बापीयडो पिउ पिउ लवे, चदा ! कोकिल करे दुख घोर रे ॥ १५ ॥
कर जोडी लागू पाउले चदा ! एटलू करो मुझ काज रे।
आज मनावो नेम ने, चंदा ! आपूं बधामणी आज रे ॥ १६ ॥
अंगुलि दश दंते धरु, चदा ! जई कहो चतुर सुजांण रे।
जे मनमथ जग भोलवे, चदा ! ते तुझ मनि छे प्राण रे ॥ १७ ॥
ते माटे मनमथ मोकली, चंदा ! कतने करो आधार रे।
सोल कला करी दीपतो, चदा ! तु रहे हर शिर लीनो रे ॥ १८ ॥
मुझ विरहणी ना दीहडा, चदा ! वरस समान ते थाय रे।
जो तह्मे काम ए नवि करो, चदा ! जगह सारथ थाय रे ॥ १९ ॥
सदेसो लेई सचर्यो चदा ! गयो ते नेमि जिन पासे रे।
युगति करी घणू प्रीछव्या, चदा ! मनस्यु थयो ते निरास रे ॥ २० ॥
पाछावली आवी कह्यू, चदा ! ते तो न माने बोल रे।
साभलि रायुल साचरी चदा ! मूकी मोहनो जजाल रे ॥ २१ ॥
सयम लेई व्रत आचरी चदा ! सोलवे स्वर्गे हवो देवरे।
अष्ट महा ऋद्धि जेहने चदा ! अमर अमरी करे सार रे ॥ २२ ॥
श्री मूलसघे मडणो चदा ! सुरिवर लखमीचन्द रे।
तेह पाटि जगि जाणिये, चदा ! अभयचन्द मुणिंद रे ॥ २३ ॥
पाटि अभयनदी हवा चदा ! रत्नकीरति मुनिराय रे।
कुमुदचन्द्र जस उजलो, चदा ! सकल वादी नमे पाय रे ॥ २४ ॥
तेह पाटि गुरु गुणतिलो, चदा अभयचन्द्र कहे चादो रे।
जे गास्ये एह चदलो, चदा ! ते जगमा घणु नदो रे ॥ २५ ॥

॥ भ० अभयचन्द्र कृत चदा गीत समाप्त ॥

राग नट

(७०)

पेखो सखी चन्द्रप्रभ मुखचन्द्र ॥ टेक ॥

सहस किरण सम तनु की आभा, देखत परमानन्द ॥पेखो०॥ १ ॥
समयसरण सुभभूति विभूषित, सेव करेत सत इन्द्र।
महासेन कुल कज दिवाकर, जग गुरु जगदानन्द ॥पखो०॥ २ ॥
मनमोहन मूरति प्रभु तेरी, मैं पायो परम मुनींद।
श्री कुमुदचन्द्र कहे जिन जी मोकू, राखो चरन अरविंद ॥पेखो॥ ३ ॥

राग कल्याण (३)

आदि पुरुष भजो आदि जिनेंदा ॥ टेक ॥
सकल सुरासुर शेख सु व्यंतर, नर खग दिनपति सेवित चंदा ॥
जुग आदि जिनपति भये पावन ।
पति उदारण नाभि के नंदा ॥ १ ॥
दीन दयाल कृपा निधि सागर ।
सार करो अघ तिमिर दिनेदा ॥आदि०॥ २ ॥
केवलग्यान थें सब कछू जानत ।
काहू कहूं प्रभु मो मति मंदा ॥
देखत दिन दिन चरण सरण तें
विनती करत यो सूरि शुभचन्दा ॥आदि०॥ ३ ॥

राग सारंग (४)

कौन सखी सुध लावे श्याम की ॥ कौन सखी० ॥
मधुरी धुनी मुखचन्द विराजित, राजमति गुणगावे ॥ श्याम० ॥ १ ॥
अंग विभूषण मनोमय मेरे, मनोहर माननी पावे ।
करो कछू तंत मत मेरी सजनी, मोहि प्राननाथ मीलावे ॥श्याम०॥ २ ॥
गजगमनी गुण मंदिर श्यामा मनमथ मान सतावे ।
कहा अवगुन अब दीनदयाल, छोरि मुगति मन भावे ॥श्याम०॥ ३ ॥
सब सखी मिलि मन मोहन के ढिंग, जाई कथा जु सुनावे ।
सुनो प्रभू श्री शुभचन्द्र के साहेब, कामिनी कुल क्यो लजावे ॥ ४ ॥

(५) शुभचन्द्र हमची

पावन पास जिनेश्वर वदु अंतरीक्ष जिनदेव ।
श्री शुभचन्द्र तणा गुण गाउ, वागवादिनी करि सेव रे ॥ १ ॥
शशि वयणी मृग नयणी आवो सुन्दरी सहू मलि सगे ।
गाऊ श्री शुभचन्द्र तणोवर पाट महोछव रगे ॥ २ ॥
श्री गुजराते मनोहर देशे, जलसेन नयर सोहावे ।
गढ मठ मंदिर पोलिपगार, सजल खातिका भावेरे ॥ ३ ॥
'हुबड' वश हिरणी हीरा, सम सोहे मनजो धन्य ।
तस मन रजन माणिक दे शुभ, जायो सुन्दर तन्न रे ॥ ४ ॥

बालपणे बुधिवंत विचक्षण, विद्या चउद निधान ।
जैनागम जिन भक्ति करे एह, जिन सासन बहु तान रे ।। ५ ।।
व्याकरण तर्क वितर्क अनोपम, पुराण पिंगल भेद ।
अष्ट सहस्री आदि गच अनेक जु, बहो विद जाणो वेद रे ।। ६ ।।
लघु दीक्षा लीधी मनरगे, बाल पणे जयकारी ।
नवल नाम सोहे अति सुन्दर, सहेज सागर ब्रह्मचारी रे ।। ७ ।।
छण रजनी कर वदन विलोकित, अर्द्ध ससी सम भाल ।
पकज पत्र समान सुलोचन, ग्रीवा कबु विशाल रे ।। ८ ।
नाशा शुक चचीसम सुन्दर अधर प्रवाली वृ द ।
रक्तवर्ण द्विज पक्ति विराजित, नीरखता आनन्द रे ।। ९ ।।
रूपे मदन समान मनोहर, बुद्धे अभयकुमार ।
सीले सुदर्शन समान सोहे, गौतम सम अवतार रे ।। १० ।।
एकदा अति आनदे बोले, अभयचन्द्र जयकार ।
सुणयो सहु सज्जन मन रगे, पाट तणो सुविचार रे ।। ११ ।।
सहेज सिन्धु सम नही को यतिवर, जगमा जाणो सार ।
पाट योग छे सुन्दर एहने, आपयो गछ नो भार रे ।। १२ ।।
सघपति प्रेमजी हीरजी रे, सहेर वश शृ गार ।
एकलमल्ल अखई अति उदयो, रत्नजी गुण भडार रे ।। १३ ।।
नेमीदास निरूपम नर सोहे, अखई अबाई वीर ।
हु बड वश शृ गार शिरोमणि, वाघजी सघजी धीर रे ।। १४ ।।
रामजीनन्दन गागजी रे, जीवधर वर्द्धमान ।
इत्यादिक सघपति ए सात आवा श्रीपुर गाम रे ।। १५ ।।
पाट महोछव माड्यो रगे, सघ चतुर्विध लाव्या ।
सघपति श्री जगजीवन राणो, सघ सहित ते आव्या रे ।। १६ ।।
दक्षण देशनो गछपती रे, धर्मभूषण तेडाव्या ।
अति आडवर साथे साहमो करीने तप धराव्या रे ।। १७ ।।
शुभ मुहूरत जोई जिन पूजा, शातिक होम विधान ।
जमणवार युग ते जल जात्रा, आपे श्रीफल पान रे ।। १८ ।।
संवत् सत एकबीमेरे, जेठ वदी पडवे चंग ।
जय जयकार करे नरनारी, ढाले कलश उत्तंग रे ।। १९ ।।

धर्मभूषण सूरी मत्र ज आप्या, थाप्या श्री शुभचन्द्र ।
अभयचन्द्र ने पाटि विराजि, सेवे सज्जन वृंद रे ।। २० ।।
दिम दिम मद्दल तबलन फेरी, तत्ताथेई करत ।
पच शबद वाजित्र ते वाजे, नादे नभ गज्जंत रे ।। २१ ।।
मनोहर मानिनि मगल गावत, गद्रव करत सुगान ।
बदीजन बिरुदावली बोले, आपे अगणित दान रे ।। २२ ।।
श्री मूलसंघ सरस्वती गछे, विद्यानन्दी मुनीद ।
मल्लिभूषण पद पकज दिनकर, उदयो लक्ष्मीचन्द्र रे।। २३ ।।
सहेर वश मडण मुकटामणि, अभयचन्द्र माहत ।
अभयनन्दी मन मोहन मुनिवर, रत्नकीरति जयवत रे ।। २४ ।।
मोठ वश शर हस विचक्षण, कुमुदचन्द्र जयकारी ।
तस पद्द कमल दिवाकर प्रगट्यो, सेव करे नरनारी रे ।। २५ ।।
अभयचन्द्र गरुयो गछनायक सेवित नृप नर वृद ।
तस पाटे गुरु श्री सघ सानिध थाप्या श्री शुभचन्द्र रे।। २६ ।।
परवादी सिंधुर पचानन, वादी मा अकलंक ।
अमर माहि जिम इद्र विराजे, सरवरि माहि ससाक रे ।। २७ ।।
दिवस माहि जिम रवि दीपतो, गिरि मा मेरु कहृत ।
तिम श्री अभयचन्द्र ने पाटि, श्री शुभचन्द्र सोहृत र ।। २८ ।।
श्री शुभचन्द्र तरणीए हमची, जे गाये जिन धामे ।
श्रीपाल विवुध वदे ए वाणी, ते मन वछित पाये रे ।। २९ ।।

।। इति श्री शुभचन्द्रनी हमची ममाप्त ।।

(६)

प्रभाति

सुप्रभाति उठी श्री गोर गायो ।
जेम मन वछित वेग ले पाउ ।
सूरी अभयचन्द्र ना पद्द प्रणमीजे ।
जमन जनम तणा दुख गमीजे ।। सु० ।। १ ।।
पच महाव्रत सुध ला धारी ।
पच समिति वरे अग उदारी ।। सु० ।। २ ।।

अष्ट गुपति गुरु चारित्र पाले ।
क्रोध माया मद लोभ ने टाले ॥ सु० ॥ ३ ॥
जेहने शील आभूषण सोहे ।
दीठड़े भविबयाना मन मोहे ॥ सु० ॥ ४ ॥
वयण सुधारस पा अति मीठा ।
निरखतां लोचने अमिय पईठा ॥ सु० ॥ ५ ॥
वचन कला करी विश्व ने रंजे ।
वादी अनेक तरणा मद भंजे ॥ सु० ॥ ६ ॥
श्री मूलसघ मडण मुनिराज ।
प्रगट्यो सबोधवा काजि ॥ सु० ॥ ७ ॥
रत्नकीरति पद कुमुद शशि सोहे ।
अभयचन्द्र दीठे जगत मन मोहे ॥ सु० ॥ ८ ॥
तारण तरण गोयम अवतार ।
नित नित वदित विबुध श्रीपाल ॥ सु० ॥ ९ ॥

(७)

प्रभाति

सुप्रभाति नमो देव जिणद ।
रत्नकीर्ति सूरी सेवो आनद ॥ आचली ॥
सबल प्रबल जेणे काय हराव्यो ।
जालरण पोरमाहि यतीये बधाव्यो ॥ सु० ॥ १ ॥
वाग्वादिनी बदने बसे एहने ।
एहनी उपमा कहीसे केहने ॥ सु० ॥ २ ॥
गच्छपती गिरवो गुण गम्भीर ।
शील सनाह धरे मनधीर ॥ सु० ॥ ३ ॥
जे नरनारी ए गोर गीत गासे ।
गणेश कहे ते शिव सुख पास्ये ॥ सु० ॥ ४ ॥

(८)

प्रभाति

आवो साहेलडी रे सहू मिलि सगे ।
वादो गुरु कुमुदचन्द्र ने मनि रंगि ॥आवो०॥ १ ॥

छंद आगम अलंकार नो जाण ।
वारु चिन्तामणि प्रमुख प्रमाण ।।आवो०।। २ ।।
तेर प्रकार ए चारित्र सोहे ।
दीठडे भवियण जन मन मोहे ।।आवो०।। ३ ।।
साह सदाफल जेहनो तात ।
धन जनम्यो पदमा बाई मात ।।आवो०।। ४ ।।
सरस्वती गछ तणो सिणगार ।
वेगस्यु जीतियो दुर्द्धर मार ।।आवो०।। ५ ।।
महीयले मोढ वंशे उ विख्यात ।
हाथ जोडाविया वादी सघात ।।आवो।। ६ ।।
जे नरनारी ए गोर गुण गाये ।
सयमसागर कहे ते सुखी थाये ।।आवो०।। ७ ।।

गीत

ढाल मुक्ताफलनी (६)

श्री आदि जिन नमी पाय रे, प्रणमी भारती माय रे ।
गास्यु गछपति राय रे, गाता सुख बहु थाय रे ।।
आवो साहेली सघली नारि रे, वादो कुमुदचन्द्र सार रे ।
रतनकीर्ति पाटि उदार रे, लघु पणे जीत्यो जिणे मार रे ।।आवली।
गोमडल नयर विशाल रे, तिहा वसे मोढ वंश गुणमाल रे ।
सदाफल साह गुणवत रे, घरि रामापदमा सत रे ।। आवो० ।।
ते बेहू कुखि उपनो वीर रे, बत्तीस लक्षण सहित शरीर रे ।
बुद्धि बहोत्तरि छे गभीर रे, वादी नग खडन वज्र समवीर रे ।।आवो०।।
श्री मूलसघे गोयम समान रे, सरस्वति गछ महिमा निधान रे ।
तनू कनक समवान रे, मोटा महीपति ··· मान रे ।। आवो० ।।
पच महाव्रत पाले चग रे, त्रयोदश चारित्र छे अभग रे ।
बावीस परीसा सहे अगिरे, दरशन दीठे उपजे रग रे ।। आवो० ।।
रत्नकीर्ति बोले वाणी रे, अमृत मीठी अमीय समाणि रे ।
बात देशातरे जाणी रे, पाटि आप्यो सुख खाणी रे ।। आवो ।।
कहान जी सहसकरण मल्लिदास रे, वीर भाई गोपाल पूरे आसरे ।
पाट प्रतिष्टा महोत्सव कीध रे, जग मा यश बहु लीध रे ।। आवो० ।।

बारडोली नगरे मनोहार रे, आव्यो पदनो भार रे।
तव हवो जय जयकार रे, कहे संयमसागर भवतार रे॥ आवो०॥

राग धन्यासी (१०)

श्री नेमिश्वर गीत

सखिय सहू मिलि वीनवे वर नेमिकुमार।
तोरण थी पाछा वल्या, करीस्यो रे विचार॥ १॥
राजीमती अति सुन्दरी गुणनो नही पार।
इंद्राणी नही अनुसरे जेहनूं रूप लगार॥ २॥
वेणी विशाल सोहामणी जीत्यो श्याम फणिंद।
भाल कला अति रूवडी, अरधो जस्योचन्द॥ ३॥
आखडली कज पाखडी, काली अणियाली।
काम तणा शर हारिया जेहनूं सु नीहाली॥ ४॥
आनन हसित कमल जस्यु नाक सरल उतग।
घणू अ करीस्यु वखाणीये सुडा चच सुचग॥ ५॥
अरुण अधर सम उपता जेहवी पर वाली।
वचन मधुर जाणी करी कोयल थई काली॥ ६॥
कठे कबु हरावीयो हैयडे हरे चिन्त।
बाहुलता अति लेहकती कर मन मोहंत॥ ७॥
अधर अनोपम पातलू जेहनू पोयण पान।
हरी लकी कटि जाणिये उरु रभ समान॥ ८॥
पान्हीस उची अति रातडी आगलडी तेहवी।
सर्व सुलक्षण सुन्दरी नही मलसे एहवी॥ ९॥
रहो रहो लाल पाछा चलो कह्या वचन ते मानो।
हास विलास करो तह्ये अति घणूं मातणि॥ १०॥
एह वचन मान्यु नही लीधो सयम भार।
तप करीस्या सुख पामिया सज्जन सुखकार॥ ११॥
कुमुदचन्द्र पद चादलो अभयचन्द उदार।
धर्मसागर कहे नेमजी सहू ने जय-जयकार॥ १२॥
॥ इति श्री नेमिश्वर गीत॥

गीत

राग सारंग (११)

आवो रे भामिनी गज वर गमनी ।
वादवा अभयचन्द्र मिली मृगनयणी ।। आंचली ।। १ ।।
मुगताफलनी थाल भरीजे ।
गछ नायक अभयचन्द्र बधावीजे ।। आ० ।। २ ।।
कु कुम चन्दन भरीय कचोली ।
प्रेमे पद पूजो गोरना सहूमली ।। आ० ।। ३ ।।
हुंबड वशे श्रीपाल साह तात ।
जनम्यो रूडी रतन कोडम दे मात ।। आ० ।। ४ ।।
लघु पणें लीधो महाव्रत भार ।
मन वश करी जीत्यो दुद्धंर मार ।। आ० ।। ५ ।।
तर्क नाटक आगम अलकार ।
अनेक शास्त्र भण्या मनोहार ।। आ० ।। ६ ।।
भट्टारक पद एहने छाजे ।
जेहनो यश जगमा वारू गाजे ।। आ० ।। ७ ।।
श्री मूलसघे उदयो महीमा निधान ।
याचक जन करे गेह गुण गान ।। आ० ।। ८ ।।
कुमुदचन्द्र पाटि जयकारी ।
धर्मसागर कहे गाउ नरनारी ।। आ० ।। ९ ।।

---

(१२)

कुमुदचन्द्रनी हमची

सुन्दर नर एक निरुपम उदयो, भवनी अधिक उदार ।
मूलसंघ मुगटामणि दिनमणि सरसति गछ मंडार रे ॥ १ ॥
हमचडी माहरी हेलि रे, गौरनी बडो मोहन बेलि ।
रत्नकीरति पाटई कुमुदचन्द्र सोहे, सेवो सजन साहेल रे ॥ २ ॥
सकल रयण गुणे करी मंडित, गोमण्डल मन गाय ।
घवाफल सा तस नयरि, सुन्दर पदमाबाई मन माय रे ॥ ३ ॥
एवेहू कूखे नर निपनो पावन पुरुष पवित्र ।
बाल ब्रह्मचारी सम नहीं नारी, समकित चित सोहैं चित्र रे ॥ ४ ॥
सामुद्रिक शुभ लक्षण सोहे, कला बहोत्तरि अंग ।
चतुर चउरत्नहु पंच प्रेमे बहे भव्य स्यणाहुरे दंग रे ॥ ५ ॥
सील सोहागी ज्ञान गुणेकरी, कंदर्प दर्प हराव्यो ।
भाग्य आपणे सोहे गोर सजनी, उत्तरथी आहां आव्यो रे ॥ ६ ॥
संघपति काहानजी सेहेस करण मनवीर भाई गुणे मल्लिदास ।
गुण मंडित गोपाल सहुमली, आव्यो पट्टोधर पास ॥ ७ ॥
कल्याणकीरति आचार मनोपम, उपम भवनी अपार ।
महिमावंत महीमा मुनिवर, मावे मोटा मोहुत रे ॥ ८ ॥
संवत् सोल छपन्ने संवत्सर प्रगट पटोधर थाप्या ।
बारडोली नयरे रत्नकीरति गोरे सुर मंत्र शुभ आप्या ॥ ९ ॥
दिन-दिन दीपे परमत जीपे जति जिन शासनचन्द्र ।
श्रीसंघ सानिध नाम कहे, गोर कुमुदचन्द्र मुनेन्द्र रे ॥ १० ॥
पंडित पणे प्रसिद्ध प्राकमो वागवादिनी वर एहने ।
सेवो सुरतरु चिन्त्यो चिन्तामणि उपमा नहीं केहने रे ॥ ११ ॥
परम पावन गोर पूजता प्रेमे मन जो करे मम मन ।
नयणें नीरखी सजनी सहु गोर ते दिन कहिस्ये धन्य रे ॥ १२ ॥
साथ पुरुस प्रेम श्रीजिन वांचे मधुकर मालति संग ।
मान सरोवर मराल वांछे, चतुरनें चतुर सुरंग रे ॥ १३ ॥
चकवी जिम दिन करने वांछे, चातुक मेह मन माय ।
तिम वंछु हुं कुमुदचन्द्र गोर, पूजतां पाप पलाय रे ॥ १४ ॥
सघाष्टके शोभतो सेहे गोर, चावी ए कही है सजनी ।

मनोरथ पहोचसे मन तणा रे, सफल फलस्ये दिन रजनी रे ।। १५ ।।
विद्यानदि पाट मल्लिभूषण धन लखमीचन्द्र अभेचन्द्र ।
अभेनदी पाट पटोधर सोहे रत्नकीरति मुनींद्र रे ।। १६ ।।
कुमुदचन्द्र तस पाटइ दिन मरिण घडी ख्यात जगि जेह ।
वदन तो सुन्दर वाणी जलधर श्री सघ साथे नेह रे ।। १७ ।।
हरषे हमची कुमुदचन्द्रनी गाये सुणे नर नार ।
सकट हर मन वछित पूरे, गणेस कहे जयकार रे ।। १८ ।।

।। इति श्री कुमुदचन्द्रनी हमची समाप्त ।।

अवशिष्ट

ब्रह्म जयराज (४५)

ये भट्टारक सुमतिकीर्ति के शिष्य थे । इनके द्वारा लिखा हुआ एक गुरु छन्द प्राप्त हुआ है जिसमे भट्टारक सुमतिकीर्ति के पट्ट शिष्य भट्टारक गुणकीर्ति के पट्टाभिषेक का वर्णन दिया हुआ है । पूरे गुरु छन्द मे २६ पद्य है जो विविध छन्दो वाले है । ब्रह्म जयराज ने और कितनी रचनाए लिखी इसकी गिनती अभी नही की जा सकी है । उक्त रचना मे सवत् १६३२ मे होने वाले पद्मकीर्ति के पाट महोत्सव का वर्णन आया है । गुरु छन्द का सार निम्न प्रकार है—

भट्टारक गुणकीर्ति सुमति कीर्ति के शिष्य थे । राय देश मे चतुरपुर नगर था । वहा हूबड जातीय श्रेष्ठी सहजो अपार वैभव के स्वामी थे । पत्नी का नाम सरियादे था । सहजो जाति के शिरोमणि थे और चारो ओर उनका अत्यधिक समादर था । उनके पुत्र का नाम गणपति था जिसके जन्म पर विविध प्रकार के उत्सव आयोजित किये गये थे । युवावस्था के पूर्व ही उसने कितने ही शास्त्रो का अध्ययन कर लिया । वे अत्यधिक सुन्दर थे । उनका शरीर अत्यधिक कोमल एव आंखे कमल के समान थी । लेकिन गणपति चिन्तनशील थे इसलिये विवाह के पूर्व ही वे सुमतिकीर्ति के शिष्य बन गये । उनका नाम गुणकीर्ति रखा गया ।

साधु बनने के पश्चात् उन्होने बागड देश के विविध गावो मे बिहार करना प्रारम्भ किया । डू गरपुर मे संघपति लखराज द्वारा आयोजित महोत्सव मे इन्हे पाँच महाव्रत पालन का नियम दिया गया । इसके पश्चात् शान्तिनाथ जिन चैत्यालय मे इन्हे उपाध्याय पद से विभूषित किया गया । उपाध्याय जीवन मे इन्होने गोम्मटसार आदि ग्रन्थो का पठन पाठन किया । कुछ समय पश्चात् इन्हे

---

१. इसका विवरण पहिले नहीं दिया जा सका ।

आचार्य बना दिया। गुणकीर्ति अत्यधिक प्रतिभाशाली एवं चतुर सन्त थे। ज्ञान एवं विज्ञान के वे पारगामी विद्वान थे। संघ व्यवस्था में वे कुशल थे। उनके गुरु भट्टारक सुमतिकीर्ति उनसे अतीव प्रसन्न थे और अपने योग्यतम शिष्य को पाकर अत्यधिक आशान्वित थे। इसलिये उन्होने उन्हे अपना उत्तराधिकारी घोषित कर दिया। बागड देश मे उन्होंने अपना पूरा प्रभुत्व स्थापित कर दिया।

डूगरपुर के उस समय रावल आसकरण शासक थे। वे नीति कुशल न्यायप्रिय शासक थे। उनके शासनकाल में जैनधर्म का चारों ओर प्रभाव था। नगर में अनेक सघपति थे जिनमे कान्हौ, धर्मदास, रामो, भीम, शंकर, दिडो, कचरो, रायम आदि के नाम विशेषतः उल्लेखनीय हैं। इन्होने नगर के बाहर महाराजा आसकरण से क्षत्रक्षेत्रीय बावडी के लिये स्थान माँगा और एक महोत्सव के मध्य उसकी स्थापना की गयी। इस समय जो जलयात्रा का सुन्दर जलूस निकाला गया था उसका वर्णन भी अतीव सजीव एव सुन्दर हुआ है।

सवत् १६३२ मे इन्होने भी एक विशेष महोत्सव में अपने ही शिष्य को अपना उत्तराधिकारी घोषित किया और उसका नाम पदमकीर्ति रखा। गुणकीर्ति ने इस समारोह को बडी धूमधाम से आयोजित किया। युवतियों ने मगल गीत गाये। विविध प्रकार के बाजा बजे। देश के विभिन्न भागो से उस समारोह मे भाग लेने के लिये सैकड़ों व्यक्ति आये।

शान्तिदास (४६)

ये कल्याणकीर्ति के शिष्य थे। बहुबलीवेलि इनकी प्रमुख रचना है जिसको लघु वाहुबली वेलि के नाम से लिखा गया है। इसमे २६ पद्य है। उक्त बेलि के अतिरिक्त इनकी अनन्तव्रत विधान, अनन्तनाथपूजा, क्षेत्र पूजा, भैरवमानभद्र पूजा आदि और भी लघु रचनायें मिलती है। हिन्दी के अतिरिक्त, सस्कृत मे भी कुछ पूजा कृतिया मिलती है। लघु बाहुबली बेलि में इन्होने अपना निम्न प्रकार परिचय दिया है—

भरतनरेश्वर आवीया नाम्यु निजवर शीस जी।
स्तवन करी इस जपरा हू किंकर तू ईस जी।
ईस तुमनि छाडीराज मभानि आपीउ।
इम कही मन्दिर गया सुन्दर ज्ञान भुवने व्यापीउ।
श्री कल्याणकीरति सोम मुरति, चरणसेव मिनाणि कहइ।
शांतिदास स्वामी बाहुबलि सरण राखु प्रभु तुम्हतणी।

———

नामानुक्रमणिका

ग्राम एवं नगर

———